JAUNPUR FROM INCEPTION TO 1526

(With Special Reference to its Social and Economic Conditions)

जौनपुर प्रारम्भ से 1526 तक

(सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति के विशेष संदर्भ में)

इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डी० फिल्० उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

शोधकर्त्ता :

राहुल दूबे

निर्देशक :

डा० हेरम्ब चतुर्वेदी
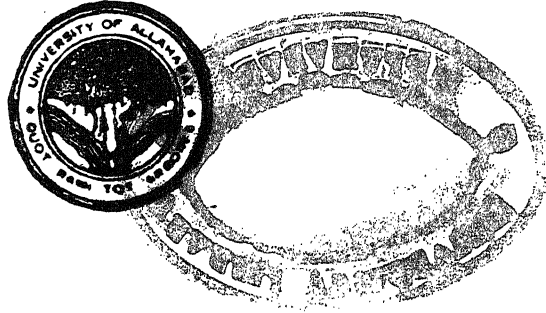
मध्यकालीन/आधुनिक इतिहास विभाग

इलाहाबाद विश्वविद्यालय

इलाहाबाद

१९९३

प्रस्तावना

इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डी०फिल० उपाधि हेतु प्रस्तुत इस शोध प्रबन्ध में जौनपुर राज्य के प्रारम्भ से 1526 ई० तक का चित्रण प्रस्तुत किया गया है । इस शोध प्रबन्ध में विशेषतया तत्कालीन सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति की समीक्षा की गयी है ।

आज जबकि यह शोध प्रबन्ध तैयार है , इस शोध प्रबन्ध के पूर्ण होने में कुछ व्यक्तियों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है । मैं उन्हें साधुवाद किये बिना अपना दायित्व पूर्ण न कर पाऊँगा ।

मैं अपने निर्देशक डा० हेरम्ब चतुर्वेदी के प्रति सम्मान करता हूँ । उनके कुशल निर्देशन एवं उनके प्रोत्साहन का प्रतिफल यह शोध प्रबन्ध है । उनकी विदुषी पत्नी श्रीमती आभा चतुर्वेदी के द्वारा प्रोत्साहन एवं उनके स्नेहिल झिड़कियों ने इस शोध प्रबन्ध को पूर्ण करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है ।

मैं इलाहाबाद विश्वविद्यालय, ईश्वरी प्रसाद शोध संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय , काशी विद्यापीठ, इलाहाबाद संग्रहालय, तिलकधारी

कालेज जौनपुर, आदि पुस्तकालयों के पुस्तकालयाध्यक्षों एवं कर्मचारियों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ । जिनका अनन्य सहयोग इस शोध प्रबन्ध को पूर्ण करने में प्राप्त हुआ ।

मैं अपने परिवार के समस्त श्रद्धेय सदस्यों विशेष रूप से अपने माता, पिता के प्रति सम्मान प्रकट करता हूँ, जिन्होंने समय - समय पर मेरा उत्साहवर्धन किया तथा मुझे इस शोधप्रबन्ध को पूर्ण करने के लिए सदैव प्रेरित किया ।

मैं अपने विभाग के समस्त प्राध्यापकों के प्रति सम्मान प्रकट करता हूँ । जिनके द्वारा समय - समय पर मुझे उचित सलाह प्राप्त होती रही ।

मैं अपने मित्रों राजेश सिंह, अनिल कुमार पाण्डेय तथा ऋषि मुनि उपाध्याय को धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ, जिनके सहयोग का प्रतिफल यह शोध प्रबन्ध है ।

मैं इस शोध प्रबन्ध का टंकण कार्य करने वाले श्री राकेश कुमार शुक्ला के प्रति आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने विशेष रुचि के साथ इस शोध - प्रबन्ध का टंकण कार्य सम्पादित किया । साथ ही "शुभम् फोटो कापियर्स" के समस्त कर्मचारियों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ ।

साभार ।

(राहुल दुबे)
शोध छात्र
मध्य/आधुनिक इतिहास विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद ।

विषय - सूची

xxxxxxxxxx

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

ऐतिहासिक - पृष्ठभूमि

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

" ऐतिहासिक पृष्ठभूमि "

760 हि0/1359-60 ई0 में जब दिल्ली के सुल्तान फिरोज शाह तुगलक ने बंगाल के सुल्तान सिकन्दर के विरूद्व प्रस्थान किया[1] तब रास्ते में ही वर्षा प्रारम्भ हो गयी जिससे आगे बढ़ना असम्भव हो गया तथा सुल्तान फिरोज शाह तुगलक को जफराबाद नामक स्थान पर, जो कि गोमती नदी के किनारे पर स्थित था, छः मास तक रूकना पड़ा ।[2] इस प्रवास के दौरान एक दिन उसे गोमती के दूसरे किनारे पर एक भवन दिखाई पड़ा, जिसका निर्माण रतनगढ़ के एक विस्थापित गहरवार शासक ने करवाया था ।[3] यह अत्यन्त सुन्दर स्थान था । सुल्तान फिरोजशाह तुगलक ने यहीं एक नये नगर की स्थापना करवाने का निश्चय किया ।[4] 1359 ई0 में इसकी नींव डाली गयी एवं उसका नाम फिरोजाबाद रखा गया ।[5] परन्तु यह नगर इस नाम से नहीं जाना गया । एक रात सुल्तान फिरोज ने स्वप्न में सुल्तान मुहम्मद बिन तुगलक को यह सुझाव देते हुए देखा कि इस नव निर्मित नगरी का नाम

---

1. अफीफ - पृष्ठ - 138, तथा तारीखे-मुबारक शाही, पृ0 - 126-28
2. वही
3. वही
4. वही
5. अफीफ, पृ0 - 148-149

उसी के नाम पर रखा जाय, तत्पश्चात् फिरोज ने इस नगर का नाम जूना खाँ के नाम पर जौनपुर रखा ।[1] इस प्रकार जौनपुर नगर की स्थापना हुई जो आगे चलकर शर्की काल में एक विशाल व समृद्धि साम्राज्य की राजधानी बना । फिरोज तुगलक ने इस नगर की स्थापना केवल नगर बसाने के उद्देश्य से ही नहीं किया था, वरन् इसके पीछे भू - राजनीतिक कारणों का भी विशेष योगदान था । विशेष रूप से यह स्थान बंगाल एवं उड़ीसा के विरूद्ध होने वाले अभियानों के लिए उपयोगी केन्द्र बन सकता था, क्योंकि सम्पूर्ण सल्तनत काल में जिस प्रकार बार - बार राज्यों द्वारा स्वतन्त्रता घोषित की जाती रही एवं शासकों द्वारा एक दिशा से दूसरी दिशा में विद्रोहों को कुचलने का सिल-सिला जारी रहा उसे देखते हुए जौनपुर नगर की स्थापना सम्पूर्ण पूर्वी भारतीय क्षेत्र के नियंत्रण रखने की दृष्टि से एक ठोस कदम थी ।

सर्वप्रथम कुतुबुद्दीन ऐबक ने तराईन के युद्ध के पश्चात् भारत में तुर्की सल्तनत के विस्तार में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया,[2] उसके पश्चात सुल्तान इल्तुतमिश ने उत्तरी भारत में तुर्की राज्य को संगठित करने का प्रयास

- -

1• अफीफ - पृष्ठ 148-149

2• तबकाते-अकबरी भाग -2, पृष्ठ-198

किया ।[1] इस समय अली मर्दान खाँ ने स्वयं को बंगाल तथा बिहार में स्वतन्त्र शासक के रूप में घोषित कर दिया था ।[2] अली मर्दान खाँ के पश्चात 1211 ई0 में हुसामुद्दीन इवाज खलजी बंगाल का शासक हुआ ।[3] मंगोलों के आक्रमण व अन्य कारणों से इल्तुतमिश ने अपना ध्यान उत्तर-पश्चिम की ओर लगाया तब उसका लाभ उठाकर पूर्व में बंगाल तथा बिहार में हुसामुद्दीन इवाज ने सुल्तान गयासुद्दीन की दवी धारण कर स्वतन्त्रता की घोषणा कर दी ।[4] इवाज 1225 ई0 में इल्तुतमिश द्वारा लखनौती के निकट एक युद्ध में पराजित हुआ तथा बिहार एवं बंगाल पुन: सल्तनत के अधीन हो गया ।[5] यहाँ सुल्तान इल्तुतमिश ने मलिक जानी को बिहार का राज्यपाल नियुक्त किया ।[6] परन्तु सुल्तान इल्तुतमिश के वापस होते ही इवाज पुन: मलिक जानी को पराजित कर स्वतन्त्र शासक बन गया ।[7] सुल्तान इल्तुतमिश ने इस समय प्रतिरोध स्थगित कर दिया और जैसे ही सुअवसर प्राप्त हुआ सुल्तान इल्तुतमिश ने अपने पुत्र नसीरुद्दीन महमूद के

1· आर0पी0त्रिपाठी, सम आस्पेक्ट्स आफ मुस्लिम एडमिनिस्ट्रेशन इन इण्डिया पृष्ठ - 24·

2· मिनहाज , पृष्ठ - 160

3· वही

4· वही, पृष्ठ - 161

5· वही, पृष्ठ - 163, 171

6· वही, पृष्ठ - 594- 95

7· वही

नेतृत्व में एक बड़ी सेना भेजी ।[1] पुन: 1229 ई0 में इल्तुतमिश ने पूर्वी अभियान के तहत मलिक इख्तियारूद्दीन बल्का के विद्रोह का दमन किया ।[2]

इधर नसीरूद्दीन महमूद की आकस्मिक मृत्यु से उत्पन्न स्थिति का लाभ उठाते हुए मलिक बल्का ने पुन: विद्रोह कर दिया ।[3] 1230 ई0 में सुल्तान इल्तुतमिशने उसके विरूद्ध प्रस्थान किया तथा उसे बन्दी बना लिया।[4] लखनौती का दायित्व मलिक अलाउद्दीन जानी को सौंप दिया गया था ।[5]

1236 ई0 में सुल्तान इल्तुतमिश की मृत्यु हो गयी ।[6] सुल्तान इल्तुतमिश के उत्तराधिकारी शासन एवं सत्ता प्राप्त करने में ही इतने उलझे रहे कि उन्होंने कोई विशेष अभियान संचालित नहीं किया और न ही कोई विशेष उपलब्धि ही अर्जित की ।

- -

1· मिनहाज, पृष्ठ - 594-95

2· वही

3· वही

4· वही, पृष्ठ - 617-18 तथा इसामी पृष्ठ-240-41

5· वही

6· वही, पृष्ठ -622-623 तथा इसामी पृष्ठ - 242

27 मई, 1246 ई0को सुल्तान इल्तुतमिश का पौत्र नसीरूद्दीन महमूद दिल्ली के सिहांसन पर विराजमान हुआ ।[1] सिंहासन प्राप्त करने पश्चात सुल्तान नसीरूद्दीन महमूद ने 1247-48 ई0 में बहाउद्दीन बल्बन के नेतृत्व में दोआब के लिए सेना भेजी ।[2] इस अभियान के दौरान कन्नौज जिले में एक हिन्दू द्वारा निर्मित तलसंदा नामक दुर्ग जीता गया ।[3] 1248 ई0 में सेना कड़ा पहुँची । वहाँसे सेना एक हिन्दू सरदार दल की जो यमुना और कालिंजर के बीच के प्रदेश का राणा था, के विरूद्ध भेजी गयी । अन्त में राणा के दुर्ग पर सुल्तान नसीरूद्दीन महमूद की सेना का अधिकार हो गया ।[4] सुल्तान नसीरूद्दीन महमूद का सौतेला भाई जलालुद्दीन मसूद शाह, जो कि कन्नौज का मुक्ता था, सुल्तान से भेंट करने आया, तत्पश्चात उसे सम्भल और बदायूँ की इक्तायें प्रदान की गयी ।[5] इसी प्रकार पूर्वी प्रान्तों में बार - बार संघर्ष होता रहा । संघर्ष के दौरान ही पूर्वी प्रान्तों के नियंत्रण के लिए पूर्व में

1• मिनहाज, पृष्ठ - 622-623 तथा इसामी , पृष्ठ - 242

2• वही

3• वही

4• वही, पृष्ठ - 679 - 83

5• वही

दिल्ली के सुल्तानों द्वारा एक सबल केन्द्र की आवश्यकता निरन्तर महसूस की जाती रही ।

1266-67 ई0 में सुल्तान नसीरूद्दीन महमूद की मृत्यु के बाद उलुग खाँ, ﴾ गयासुद्दीन बलबन ﴿ के खिताब के साथ दिल्ली के सिंहासन पर बैठा ।[1] सिंहासन पर बैठने के तत्काल बाद बलबन के सामने प्रमुख समस्या के रूप में पूर्वोत्तर क्षेत्र की समस्या थी । उसके लिए चार समस्याग्रस्त प्रदेश - दिल्ली,का निकटवर्ती प्रदेश, गंगा-यमुना का दोआब, व्यापारी मार्ग विशेष रूप से अवध जाने वाला मार्ग तथा कटेहर ﴾ रूहेलखण्ड ﴿ के विद्रोही प्रदेश थे ।[2] सर्वप्रथम बलबन ने दिल्ली के निकटवर्ती प्रदेश के विद्रोहियों का दमन किया,[3] तत्पश्चात उसने दोआब की समस्या का समाधान किया ।[4] इसके बाद सुल्तान बलबन ने अवध का मार्ग खोलने के उद्देश्य से दो बार प्रस्थान किया । वह कम्पिल तथा पटियाली पहुँचा तथा उस क्षेत्र में पाँच,छ: मास तक रहा ।[5]

1· ईसामी, पृष्ठ - 156- 157

2· तारीखे फिरोजशाही,पृष्ठ - 56

3· वही

4· वही, पृष्ठ - 55-59

5· वही

अस्लाम खाँ के पुत्र तातार खाँ के पश्चात तुगरिल लखनौती का राज्यपाल बना । वह बलबन का दास था ।[1] तुगरिल ने बलबन के शासन के आठवें वर्ष (1275 ई0) में बिद्रोह किया ।[2] दिल्ली की सेनाओं की पराजय से खिन्न होकर 1280-81 ई0 में सुल्तान बलबन ने तुगरिल का दमन करने के लिए स्वयं कूच किया ।[3] सुल्तान बलबन ने लखनौती पर अधिकार कर लिया तथा लखनौती प्रदेश बुगरा खाँ के अधिकार में दे दिया ।[4]

इस प्रकार इल्बारी तुर्कों ने भारत में लगभग 8 दशक तक (1206 से 1290 ई0) तक शासन किया परन्तु उनके अधीन दिल्ली का राज्य "एक कार्यीय राजनीतिक इकाई" नहीं था ।[5] सुल्तानों का अधिकार सामान्यत: उत्तर प्रदेश, बिहार, ग्वालियर, सिन्ध तथा मध्य भारत तक ही सीमित रहा। बंगाल के शासक अधिकतर स्वतन्त्रता की घोषणा ही करते रहे । पूर्वी राज्यों द्वारा बार-बार स्वतन्त्रता घोषित करने का एक प्रबल कारण यह था कि यह दिल्ली से अधिक दूर होने के कारण इन राज्यों पर केन्द्र का सीधा नियंत्रण

- -

1• बर्नी, तुगरिल का विद्रोह , पृष्ठ - 81-82

2• वही

3• वही, पृष्ठ -81-92

4• वही

5• केम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया, पृष्ठ - 87

नहीं हो सका । इसीलिए पूर्वी भारत पर शासन कायम करने के लिए पूर्वी क्षेत्र में ही एक प्रबल केन्द्र की आवश्यकता बलवती हो गयी ।

खिल्जी क्रान्ति के फलस्वरूप खिल्जी वंश के स्थापना के साथ ही एक नये युग का प्रादुर्भाव हुआ । 1290 ई0 में सुल्तान जलालुद्दीन खिलजी दिल्ली की गद्दी पर बैठा ।[1] परन्तु 1296 ई0 में अपने भतीजे अलाउद्दीन खिल्जी द्वारा धोखे से उसका बध कर दिया गया ।[2] तत्पश्चात 1296 ई0 में सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी सिंहासनारूढ़ हुआ ।[3] यद्यपि सुल्तान अलाउद्दीन खिल्जी की सुदृढ़ सेना ने उत्तर पूर्व में नेपाल की तराई तक अभियान किया तथा उत्तर प्रदेश का क्षेत्र भी केन्द्र के अधीन रहा, परन्तु पूर्व में उसकी सेना बिहार तथा अवध से आगे नहीं बढ़ सकी । बिहार एवं बंगाल दोनों ही स्वतंत्र रहे । इस प्रकार से प्रबल सेना के होते हुए भी बिहार व बंगाल की स्वतन्त्रता ने पूर्वी क्षेत्र में नियंत्रण की दृष्टि से एक सुदृढ़ केन्द्र की स्थापना की भूमिका को और सुदृढ़ बनाया ।

---

1. बर्नी, पृष्ठ - 175
2. वही, पृष्ठ - 181
3. वही ।

खिल्जी बंश के पतन के पश्चात गाजी मलिक ने गयासुउद्दीन तुगलक की उपाधि धारण करके दिल्ली के सिहासन पर आरूढ़ हुआ ।[1] इस समय पूर्व में बंगाल, बहादुरशाह के नेतृत्व में स्वतन्त्र था ।[2] तिरहुत व जामनगर हिन्दूराय व जमींदारों के हाथ में थे तथा उड़ीसा के शासक का प्रभाव पश्चिम घाट तक बढ़ गया था । इन परिस्थितियों को मद्दे नजर रखते हुए सुल्तान गयासुद्दीन तुगलक ने पूर्व की ओर अभियान प्रारम्भ किया ।[3] उसका पूर्व की ओर बढ़ाने का मुख्य उद्देश्य बंगाल के शासक गयासुद्दीन बहादुर शाह को अपने अधीन करना था । जब सुल्तान गयासुद्दीन तिरहुत पहुँचा तो वहाँ के कुछ जमींदारों ने उसके प्रति निष्ठा प्रकट की । यहाँ से सुल्तान गयासुद्दीन तुगलक ने बहराम खान को बंगाल के शासक के विरुद्ध भेजा ।[4] बंगाल का शासक बहादुर शाह पराजित हुआ तथा उसे बंदी बना लिया गया ।[5] तत्पश्चात सुल्तान ने बहादुर शाह के भाई नसीरुद्दीन को सतगाँव व सुनारगाँव देकर अपना

- -

1• तुगलक नामा, पृष्ठ - 132

2• तारीखे- फिरोजशाही , पृष्ठ - 449

3• वही, पृष्ठ - 450, तथा इसामी, पृष्ठ -606, तथा यहीया-पृष्ठ-96

4• तारीखे - फिरोजशाही, पृष्ठ - 451, याहीया, पृष्ठ -97

5• वही ।

अधीनस्थ शासक बनाकर, तातारखाँ के अर्न्तगत रखा ।[1] इस प्रकार बंगाल में सुल्तान गयासुद्दीन तुगलक का प्रभुत्व स्थापित हुआ । बंगाल अभियान से लौटते समय अफगानपुर में एक आकस्मिक घटना का शिकार होने के कारण 1325 ई0 में सुल्तान गयासुद्दीन तुगलक की मृत्यु हो गयी ।[2]

1325 ई0 में गयासुद्दीन तुगलक की मृत्यु के पश्चात् उसका ज्येष्ठ पुत्र उलुग खाँ, सुल्तान मुहम्मद तुगलक के नाम से सिंहासन पर बैठा ।[3] राज्यारोहण के पश्चात सुल्तान मुहम्मद तुगलक ने गयासुद्दीन बहादुर शाह को रिहा कर दिया तथा लखनौती व सुनार गाँव का शासन क्रमशः गयासुद्दीन बहादुर व अपने सौतेले भाई बहराम खाँ को दिया । परन्तु राजाज्ञाओं का उल्लंघन करने के आरोप में गयासुद्दीन बहादुर के विरुद्ध बलजुत तातारी के नेतृत्व में शाही सेना भेजी ।[4] अन्त में गयासुद्दीन बहादुर शाह पराजित हुआ और उसे मौत के घाट उतार दिया गया ।[5]

1• तारीखे फिरोजशाही, पृष्ठ -452 तथा याहिया ,पृष्ठ - 97

2• तारीखे फिरोजशाही, पृष्ठ -452

3• वही, पृष्ठ -456, तथा रेहला, पृष्ठ -50

4• रेहला, पृष्ठ -95

5• वही ।

इधर सुल्तान मुहमद तुगलक के सौतेले भाई बहराम खाँ का सुनार गाँव में निधन हो गया ।[1] तत्पश्चात बहराम खाँ का सिलहदार (शस्त्रों का रक्षक) मलिक फकरूद्दीन ने 1338-39 ई0 में विद्रोह कर दिया ।[2] इस विद्रोह को कुचल दिया गया तथा कद्र खाँ की नियुक्ति हुई ।[3] किन्तु कद्र खाँ ने न तो सैनिकों का वेतन ही दिया और न ही राज्य कोष में राजस्व ही भेजा । इसी समय फकरूद्दीन ने आक्रमण कर दिया । कद्र खाँ की सेना उसकी ओर मिल गयी । इस प्रकार फकरूद्दीन चुनार गाँव में स्थापित हुआ तथा लखनौती अपने दास मुखलिस के नियंत्रण में दिया ।[4] इस बीच कद्र खाँ की " आरिज " अली मुबारक ने लखनौती पर अधिकार कर लिया तथा मुखलिश का वध कर दिया ।[5] यद्यपि अलीमुबारक ने इस विजय की सूचना सुल्तान मुहम्मद तुगलक को दी तथा वहाँ अधिकारी नियुक्ति करने के लिए कहा परन्तु कोई अधिकारी लखनौती नहीं भेजा जा सका ।

1• तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ - 104-106

2• वही

3• वही

4• वही

5• वही

फखरुद्दीन के विरोध के कारण अली मुबारक को स्वतन्त्रता घोषित करनी पड़ी तथा उसने सुल्तान अलाउद्दीन का खिताब धारण कर लिया ।[1] कुछ दिनों पश्चात मलिक हाजी इलियाश ने षड्यंत्र द्वारा अलाउद्दीन का बध कर दिया तथा 1340-41 ई० में सुनार गाँव के विरुद्ध कूच किया ।[2] उसने फखरुद्दीन का वध कर दिया ।[3] तत्पश्चात लखनौती दीर्घ काल तक उसके उत्तराधिकारियों के नियंत्रण में रहा तथा पुन: दिल्ली सुल्तानों के अधीन न हो सका ।[4]

अमीर महरू का पुत्र आइनुलमुल्क, सुल्तान मुहम्मद बिन तुगलक का घनिष्ठ था ।[5] उसे अवध तथा जफराबाद का राज्यपाल नियुक्त किया गया।[6] आइनुलमुल्क का जनता पर नियंत्रण व उसकी सफलताओं से सुल्तान उसके प्रति संसकित हो गया । सुल्तान ने उसे दौलताबाद स्थानान्तरित करने का विचार

1• तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ -104-106

2• वही

3• वही

4• वही

5• तारीखे फिरोजशाही, पृष्ठ -480-81

6• तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ - 104-106

किया । आइनुल्मुल्क ने इसे षडयंत्र समझा तथा वह शाही साज-सज्जा के साथ स्वर्णद्वारी शिविर से निकलकर भागा।[1] सुल्तान मुहम्मद तुगलक ने शीघ्रता से कन्नौज की ओर बढ़ा तथा आइनुल्मुल्क से पहले गंगा नदी पार की । दोनों सेनाओं का युद्ध हुआ तथा आइनुल्मुल्क पराजित हुआ ।[2] अपनी पराजय के चौथे दिन ही आइनुल्मुल्क क्षमा कर दिया गया । इस प्रकार पूर्वी क्षेत्र में विद्रोहियों द्वारा निरन्तर अव्यवस्था फैलायी जाती रही । सम्भवत: उसका प्रमुख कारण केन्द्र से इन राज्यों की अधिक दूरी होना ही था ।

1351 ई० में सुल्तान मुहम्मद तुगलक की मृत्यु के पश्चात फिरोजशाह तुगलक ने दिल्ली का शासन सम्भाला । वह 1353 ई० में बंगाल के विरुद्ध कूच किया तथा कोषी नदी के घाट पार कर उसने बंगाल के शासक हाजी इलियास को पराजित किया । 1359 ई० में सुल्तान फिरोजशाही तुगलक ने 80,000

- -

1· तारीखे फिरोज शाही, पृष्ठ - 489

2· रेहला , पृष्ठ - 108-109

अश्वारोहियों के साथ बंगाल के सुल्तान सिकंदर की ओर प्रस्थान किया । बीच में वर्षा ऋतु के कारण उसे जफराबाद नामक स्थान पर रुकना पड़ा ।[1] सुल्तान फिरोजशाह तुगलक पूर्वशासकों से यह सबक ले चुका था कि जब तक पूर्व में किसी स्थायी केन्द्र की स्थापना नहीं होती है तब तक पूर्वी प्रान्तो पर नियंत्रण रखना एक दुष्कर कार्य है । अपनी इसी योजना के तहत उसने बंगाल अभियान के दौरान 1359 ई0 में गोमती नदी के किनारे जौनपुर नगर की स्थापना की ।[2] भारत के पूर्वी भाग में बार - बार होने वाले विद्रोहियों पर नियंत्रण रखने की दृष्टि से सुल्तान फिरोजशाह तुगलक द्वारा उठाया गया यह एक महत्त्वपूर्ण कदम था । सुल्तान फिरोजशाह तुगलक द्वारा 1359 ई0 में स्थापित किया गया यह नगर भविष्य में शर्की काल में एक विशाल एवं समृद्ध राज्य की राजधानी बना ।

1· आफीफ, पृष्ठ - 138, तथा तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ - 126-28

2· तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ - 126-28

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

जौनपुर का राजनीतिक इतिहास

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

राजनैतिक इतिहास

1359 ई0 में जब फिरोजशाह तुगलक ने बंगाल के सुल्तान सिकन्दर के विरूद्ध कूच किया तो वर्षा प्रारम्भ होने के कारण उसे छ: मास तक गोमती नदी के किनारे स्थित जफराबाद नामक स्थान पर रुकना पड़ा । यहीं उसने गोमती के दूसरे किनारे पर एक नया नगर बसाने का निश्चय किया ।[1]

जब 1359-60 ई0 में फिरोजशाह तुगलक बंगाल अभियान से लौटा तो उसने नए नगर के निर्माण में विशेष रूचि दर्शायी । इस प्रकार नगर के रूप में जौनपुर सुल्तान फिरोज तुगलक द्वारा स्थापित किया जा चुका था, परन्तु राज्य के रूप में इसे स्थापित करने का कार्य फिरोज तुगलक के एक हिजड़े (ख्वाजा सरा) मलिक सरवर ने किया ।

मलिक सरवर सुल्तान नुश्शर्क (1394 से 99 ई0)

सुल्तान फिरोजशाह तुगलक ने मलिक सरवर ख्वाजा सरा, जिसे सुल्तान महमूद शाह ने ख्वाजऐ जहाँ कि उपाधि प्रदान की थी,।[2] को सुल्तानुश्शर्क की

---

1. देखिये पृष्ठभूमि , पृष्ठ - 1

2. तबकाते अकबरी, पृष्ठ - 273

उपाधि से विभूषित कर जौनपुर राज्य में शासन के लिए भेजा ।[1] समकालीन अभिलेखों में उसके आरम्भिक जीवन का कोई उल्लेख नहीं मिलता परन्तु समकालीन इतिहासकार अफीफ ने उसे शाही " जवाहर खाने " का अधीक्षक बताया है ।[2] मुहम्मद विहामिद खानी उसे फिरोजशाह के शासन काल में "शहनाए शहर " बताता है ।[3] परन्तु फिरोज के शासन में उसका ठीक स्थान निर्धारित नहीं हो सका है । फिरोज की मृत्यु के पश्चात उत्तराधिकार के संघर्ष में उसने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया ।

सुल्तान अबूबक्र शाह के समय तक मलिक सरवर " शहनाए शहर " बना रहा ।[4] उसे सुल्तान फिरोज के छोटे पुत्र मुहम्मद शाह से सहानुभूति थी जिसे फिरोजशाह ने अपने जीवन काल में ही सुल्तान की उपाधि सहित समस्त शासन का प्रमुख बना दिया था ।[5] परन्तु अपने उन दासों, जो कि मुहम्मद शाह से

- -

1. तबकाते अकबरी, पृष्ठ - 273

2. अफीफ , पृष्ठ - 148-49

3. तारीखे मुहम्मदी, रोटोग्राफ पृष्ठ -416 बी.

4. तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ - 146

5. वही , पृष्ठ - 138-39

घृणा करते थे, के प्रबल प्रभाव के कारण उससे सारे सम्मान छीनकर अपने पुत्र तुगलक शाह द्वितीय को उसके स्थान पर नियुक्त किया ।[1] मुहम्मद शाह सिंहासन के लिए लगातार संघर्षरत था और जब उसने अबूबक्रशाह से दूसरी बार निर्णायक युद्ध लड़ा तब मलिक सरवर ने 50 हजार की एकसेना तथा कुछ अमीरों और राज्यपालों को अपनी ओर मिलाकर सुल्तान मुहम्मद शाह से जलेसर में मिला ।[2] इससे मुहम्मद शाह अत्यधिक प्रभावित हुआ और उसने मलिक सरवर को " ख्वाजए -जहाँ " की उपाधि प्रदान कर अपना प्रधानमंत्री नियुक्त किया।[3] किन्तु 1389 ई0 में मुहम्मद शाह का दिल्ली के विरुद्ध दूसरा अभियान भी असफल रहा ।[4] कुंडली के युद्ध में पराजय के साथ ही मलिक सरवर सहित उसे जलेसर लौटना पड़ा।[5]

हताश होकर सुल्तान मुहम्मद ने तैमूर से सहायता माँगी । तथा पूर्वी क्षेत्रों का कार्यभार मलिक सरवर को सौंपा एवं सुल्तानुश्शर्क की उपाधि देकर उसे

1• तबकाते अकबरी, भाग -1, पृष्ठ - 238

2• तारीखे मुहम्मदी, पृष्ठ -421-22, तथा तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ-146

3• वही

4• वही

5• तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ-146 तथा तारीखे मुहम्मदी, पृष्ठ 421 बी•

अपने पुत्र राजकुमार हुमायूँ का गुरु नियुक्त किया ।[1] अभी उसने समरकंद के लिए प्रस्थान किया ही था कि दिल्ली में होने वाले परिवर्तनों ने उसे आकृष्ट किया ।[2] दिल्ली के अमीरों से संदेश पाकर वह राजधानी की ओर चला और 31 अगस्त 1390 ई0 को सिंहासनारूढ़ हुआ ।[3] चूँकि उसे यह निमंत्रण मीर हाजिब सुल्तानी से प्राप्त हुआ था इसलिए मुहम्मद शाह ने उसे प्रधानमंत्री नियुक्त किया तथा उसे इस्लाम खाँ की उपाधि प्रदान की ।[4] मलिक सरवर को उसको नायक नियुक्त किया गया ।[5]

जिस समय मुहम्मद शाह जलेसर में मुहम्मदाबाद का दुर्ग बनवाने में व्यस्त था, उसे मलिक सरवर द्वारा सूचना प्राप्त हुई कि इस्लाम खाँ उसके विरुद्ध षड्यंत्र रच रहा है ।[6] सुल्तान मुहम्मद शाह तुरन्त दिल्ली आया और इस्लाम खाँ को मार डाला तथा 1392 ई0 में मलिक सरवर प्रधानमंत्री नियुक्त हुआ ।[7]

1• तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ-146 तथा तारीखे मुहम्मदी, पृष्ठ-421 बी•

2• तारीखे मुहम्मदी, पृष्ठ - 423ए•

3• वही

4• वही, पृष्ठ - 424ए

5• तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ - 150

6• वही

7• वही, पृष्ठ - 153

वह इस पद पर मुहम्मद शाह की मृत्यु तक आसीन रहा । जब हुमायूँ सिंहासन आरूढ़ हुआ तो उसने मलिक सरवर की योग्यता सराही तथा उसे शीघ्र पतनोन्मुखी साम्राज्य का सम्पूर्ण प्रशासन सौंप दिया ।[1] सुल्तान की मृत्यु के पश्चात जब सुल्तान मुहम्मद के सबसे छोटे पुत्र महमूद का सिंहासनारोहण अमीरों व प्रान्तीय राज्यपालों ने अस्वीकार कर दिया तो मलिक सरवर ने कूटनीतिक उपहारों द्वारा उसका मार्ग साफ किया । वास्तव में मलिक सरवर कि योग्यता के कारण ही वह पन्द्रह दिनों के संघर्ष के पश्चात 23 मार्च 1394 ई0 को सिंहासन पर बैठा। उसने मलिक सरवर की प्रधानमंत्री के पद पर नियुक्त की पुष्टि की ।[2]

शीघ्र ही जौनपुर व उसके निकटवर्ती प्रदेशों में विप्लव के चिन्ह उभरने लगे और सुल्तान महमूद ने पूर्वी क्षेत्र में शान्ति स्थापित करने के लिए मलिक सरवर को चुना । रजब 796/मई 1394 ई0 को मलिक सरवर जौनपुर का राज्यपाल नियुक्त किया गया तथा सुल्तानुश्शर्क़ की विरद की, जो उसे पहले सुल्तान मुहम्मद से प्राप्त हुआ था पुनः सुल्तान महमूद द्वारा पुष्टि की गयी।[3]

1• तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ - 155

2• इलियट, जिल्द 4, पृष्ठ -22

3• पोगसन-हिस्ट्री आफ जौनपुर, पृष्ठ-8, तथा तबकाते अकबरी, पृष्ठ-273 तथा तारीखे फरिश्ता (सातवाँ मकाला) पृष्ठ-304, तथा तारिखे मुहम्मदी, पृष्ठ-426•

मलिक सरवर ने अपने दत्तक पुत्र मलिक मुबारक को दिल्ली के सभी मामले सौंप दिये तथा बिप्लवी तत्वों के विरुद्ध जौनपुर की ओर कूच किया । वहाँ रास्ते में उसने डलमउ ﴾ रायबरेली जिले में ﴿, इटावा, संडीला﴾बाराबंकी जिले में ﴿,कन्नौज तथा बहराइच के विद्रोहियों का दमन किया और फिर बिहार और तिरहुत की ओर बढ़ा ।[1] दक्षिण बिहार के महाराज हरराज तथा महाराज कुमार गजरौज तथा देवराज जो समस्त क्षेत्र में शान्ति भंग के लिए उत्तरदायी थे, को गउघाट के युद्ध में पराजित किया ।[2] महाराज कुमार गजराज व देवराज ने जब मलिक सरवर के विषय में सुना तो वे भाग गये । मलिक सरवर ने षडयंत्रों व विप्लवों से आतंकित उस क्षेत्र में शान्ति स्थापित कर दी ।[3]

तत्पश्चात मलिक सरवर जौनपुर लौट आया और अपने दत्तक पुत्र मलिक मुबारक को जाज नगर के उदण्ड राय का दमन करने के लिए भेजा । मुबारक ने सफलतापूर्वक यह कार्य सम्पादित किया ।[4]

- -

1• तारीखे मुहम्मदी, पृष्ठ -422 -26 तथा पृष्ठ - 450-51

2• वही, पृष्ठ - 426बी•

3• वही

4• डा0सेफालिव चटर्जी ﴾शर्की सुल्तानों का इतिहास﴿ पृष्ठ-8

दिल्ली में परिस्थितियाँ सुल्तान महमूद के विरुद्ध होती जा रही थीं। मल्लू इकबाल खाँ सर्वेसर्वा हो गया था तथा शासक उसके हाथ की कठपुतली मात्र रह गया था।[1] तदुपरान्त तैमूर के आक्रमण ने महमूद को विवश कर दिया और वह शरण लेने के लिए दिल्ली से भाग कर गुजरात के जफर खाँ के पास चला गया। फिर वह मालवा के दिलावर खाँ के पास गया।[2] फलस्वरूप मलिक सरवर को अवसर मिल गया और उसने जौनपुर में स्वतन्त्रता घोषित कर अपने नाम के सिक्के चलवाये और खुतबा पढ़वाया।[3]

तैमूर के आक्रमण के परिणाम स्वरूप सुल्तान के अभाव में राजनीति अराजकता उत्पन्न हो गयी अत: मलिक सरवर के पास अपने आपको शासक घोषित करने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं रह गया था। इस अस्थिर भारतीय स्थिति का लाभ उठाकर मलिक सरवर ने अपने राज्य का विस्तार करना प्रारम्भ किया। उसने कोयल (आधुनिक अलीगढ़), सम्भल (मुरादाबाद) में तथा रापरी (मैनपुरी में) पर विजय प्राप्त कर ली।[4] उपलब्ध आधारों

---

1. दिल्ली सल्तनत (भारतीय विद्या भवन), जिल्द -6, पृष्ठ -116
2. जफरनामा, पृष्ठ - 359
3. रैकिंग, जिल्द-9, पृष्ठ -35 तथा जौनपुर नामा, फो0, पृष्ठ - 4 अ
4. इलियट, जिल्द -4, पृष्ठ -28, तथा यहिया, पृष्ठ - 169

के विश्लेषण के पश्चात यह कहा जा सकता है कि " उत्तर में उसकी सीमा आधुनिक उत्तर प्रदेश के समस्त उपजाऊ जिलों सहित कोयल से प्रारम्भ होती थी और उत्तरी बिहार के उत्तर पूर्वी जिले तिरहुत तक फैली थी तथा नेपाल की सीमा और हिमालय की तराई स्पर्श करती थीं । पश्चिम में वह समस्त क्षेत्र जिसका केन्द्र कन्नौज था और उसके निकटवर्ती क्षेत्रों सहित महाराज हरराज और महाराज कुमार गजराज की राजधानी भोजपुर और उज्जैन की सीमा तक का क्षेत्र उसके अधीन था । अत: उत्तर प्रदेश के अतिरिक्त भोपाल राज्य सहित बघेलखण्ड व बुन्देलखण्ड के क्षेत्र उसके राज्य में सम्मिलित थे । उत्तरी व दक्षिणी बिहार का समस्त प्रदेश भी उसके राज्य में सम्मिलित था और जाज नगर के राय तथा बंगाल के शासक उसके अधीन थे ।"[1]

यदि परिस्थितियों ने साथ दिया होता तो सम्भवत: शर्कियों ने दिल्ली पर भी अपना अधिकार कर लिया होता ।

पाँच वर्ष व छ: मास के शासन के पश्चात कुछ दिन बीमार रहकर रबी उल अव्वल 802 हि0/नवम्बर 1399 ई0 में मलिक सरवर का निधन होगया।[2]

1• दि सुल्तनत आफ जौनपुर (शोध प्रबन्ध) मियाँ मुहम्मद सईद ।

2• तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ - 159 तथा तबकाते अकबरी भाग-1, पृष्ठ-257 तथा फरिश्ता., पृष्ठ - 304

मलिक सरवर का व्यक्तित्व तुगलक सुल्तानों के महान अधिकारियों की कार्यकुशलता का प्रतिनिधित्व करता था । उसकी प्रशासनिक योग्यताएं और उसकी कटु राजनीतिक वास्तविकता और सैनिक क्षमता ने उसका स्तर अत्यन्त ऊँचा बनाया । उसने अशान्त क्षेत्रों मे शान्ति और व्यवस्था स्थापित की और विद्रोही जमींदारों को आज्ञाकारी बनाया । उसी से जौनपुर के इतिहास का गौरवपूर्ण युग प्रारम्भ होता है । उसने जौनपुर नगर का विस्तार किया ॥ नये भवन निर्मित किये और पुराने भवनों की मरम्मत करायी ।[1] उसी ने जौनपुर को " दार-स्सरूर " का विरद प्रदान किया और उसे एक सांस्कृतिक केन्द्र बनाया जहाँ साहित्यकार और कवि, विद्वान और सन्यासी एकत्र हुए और राजधानी को प्रसिद्ध बनाया ।[2]

मुबारक शाह शर्की ﴾ 1399 - 1401 ﴿

मलिक सरवर की मृत्यु के पश्चात उसका दत्तक पुत्र मलिक मुबारक करनफल अमीरों और मलिकों द्वारा सिंहासन पर बैठाया गया ।[3]

1· तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ - 159, तथा तबकाते अकबरी भाग-1, पृष्ठ-257 तथा फरिश्ता, पृष्ठ - 304·

2· वही तथा के० हि० इ०, जिल्द -3, पृष्ठ - 193

3· तबकाते अकबरी, पृष्ठ-274, तथा तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ - 169

वह सैय्यद वंश के संस्थापक खिज्र खाँ का भतीजा था ।[1] उसने मुबारक शाह की उपाधि धारण की ।[2] सिहांसनारोहण के तुरन्त बाद उसे दिल्ली के एक आक्रमण का सामना करना पड़ा । नुशरत शाह को सिहांसनाच्युंत करने के बाद जब मल्लू इकबाल खाँ को सूचना मिली कि करनफूल ने मुबारक शाह की उपाधि धारण कर ली है तो उसने आठ सौ तीन हि0/चौदह सौ ई0 §1400 ई0§ में भारी सेना के साथ जौनपुर कुच किया ।[3] जब वह आबेसिपाह §काली नदी§ के किनारे पहुँचा तो उस प्रदेश के जमीन्दारों ने उसे ललकारा और उसका विरोध किया किन्तु वे पराजित हुए और इटावा तक उनका पीछा किया गया ।[4] फिर मल्लू इकबाल खाँ कन्नौज की ओर बढ़ा और गंगा नदी के किनारे डेरे लगाया ।[5] मुबारक शाह शर्की राजपूतों, अफगानों, मंगोलों व ताजिकों की एक

- -

1• तबकाते अकबरी, पृष्ठ - 181- 182

2• गुलशन ए इब्राहिमी, पृष्ठ-304 तथा तबकाते अकबरी, पृष्ठ-274 तथा तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ - 169

3• तबकाते अकबरी, पृष्ठ - 274

4• तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ - 169

5• तबकाते अकबरी, पृष्ठ - 274, तथा तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ-170

विशाल सेना सहित तीव्रगति से आगे बढ़ा तथा मल्लू को आगे बढ़ने से रोका और गंगा के दूसरे किनारे पर अपना डेरा लगाया ।[1] दो मास तक दोनों सेनायें दोनों किनारों पर डटी रहीं ।[2] अन्त में दोनों ने अभियान त्याग दिया ।[3]

इधर महमूद शाह ने गुजरात व मालवा से दिल्ली लौटने के पश्चात मल्लू खाँ सहित मुबारक शाह के साथ कूच किया ।[4] इधर मुबारक शाह को जब मुहम्मद शाह के आने का समाचार प्राप्त हुआ तो उसने भी सेना की तैयारी प्रारम्भ कर दी किन्तु मौत के कारणउसे अवसर नहीं मिल सका तथा 804 हि0/ 1401-02 ई0 को उसकी मृत्यु हो गयी थी ।[5] उसने एक वर्ष तथा कुछ मास तक शासन किया ।[6]

1· गुलशन ए इब्राहिमी, पृष्ठ -304,तथा तारीखे मुबारक शाही,पृष्ठ-170

2· तबकाते अकबरी,पृष्ठ -274, तथा गुलशन ए इब्राहिमी, पृष्ठ -304 तथा तारीखे मुबारक शाही , पृष्ठ - 170

3· गुलशन ए इब्राहिमी, पृष्ठ-305, तथा तारीखे मुबारक शाही,पृष्ठ-170

4· तबकाते अकबरी, पृष्ठ - 274·

5· गुलशन ए इब्राहिमी, पृष्ठ - 305

6· तबकाते अकबरी, पृष्ठ - 274·

इब्राहिम शाह शर्की ᳲ 1401 - 1440 ᳲ

सुल्तान मुबारक शाह शर्की की मृत्यु के पश्चात उसका छोटा भाई सुल्तान शाह इब्राहिम शर्की की उपाधि धारण कर सिंहासन पर बैठा ।[1] सिक्कों से प्राप्त प्रमाणों से सिद्ध होता है कि वह 803 हि0/ 1400-1 ई0 में सिंहासन आरूढ़ हुआ ।[2] उसकी योग्यता के कारण राज्य मे शान्ति स्थापित हुई तथा आलिम ᳲ मुसलमान विद्वान ᳲ तथा सम्मानित व्यक्ति, जो संसार की अव्यवस्था के कारण कष्ट में थे , जौनपुर जो कि दारूल अमान ᳲशान्ति का घर ᳲ था, पहुँच गये ।[3] यह राजधानी आलिमों के चरणों के आर्शीवाद से दारूल उलूम ᳲविद्या का केन्द्र ᳲ बन गयी ।[4] उसके नाम पर अनेक पुस्तकों तथा पत्रिकाओं की रचना हुई ।[5] उदाहरणार्थ - हाशयये हिन्दी, बहरूल मव्वाज, फतवाये-इब्राहिम शाही, इरशाद इत्यादि ।[6] बुद्धिमान अमीर योग्य तथा वीर

- -

1• तबकाते अकबरी, पृष्ठ - 274, तथा गुलशन ए इब्राहिमी, पृष्ठ - 305

2• एस0लेनपूलᳲ कैट लाग आफ द इण्डियन क्वाइंस इन द ब्रिटिश म्यूजियम, द मोहम्डन स्टेट्स ᳲ पृष्ठ - 94

3• तबकाते अकबरी, पृष्ठ-275 तथा गुलशन ए इब्राहिमी, पृष्ठ -305

4• वही

5• वही

6• वही

अमीर एवं वजीर उसके दौलत खाने में एकत्र हुए और उसके दरबार को ईरानी सुल्तानों के दरबार के समान शोभा प्राप्त हो गयी ।[1]

इकबाल खाँ के विरुद्ध अभियान - सिंहासनारोहण के तुरन्त पश्चात सुल्तान इब्राहिम शर्की को मल्लू इकबाल खाँ तथा सुल्तान महमूद शाह के संयुक्त आक्रमण का सामना करना पड़ा । इकबाल दिल्ली के बादशाह महमूद को लेकर जौनपुर की विजय के उद्देश्य से कन्नौज पहुँचा ।[2] इब्राहिम शर्की भी विशाल सेना के साथ प्रस्थान किया ।[3] जब वह गंगा नदी के किनारे पहुँचा तो दोनों सेनायें एक दूसरे के समक्ष उतर पड़ी ।[4] चूँकि सुल्तान महमूद को मल्लू इकबाल खाँ के चरित्र पर सन्देह था इसलिए वह शिकार के बहाने से अपने शिविर से निकलकर सुल्तान इब्राहिम से मिला ।[5] सुल्तान इब्राहिम ने अभिमान वश उसको प्रोत्साहन प्रदान करने के बजाय उसकी उपेक्षा की ।[6] वह वहाँ से लज्जित होकर बिना सूचना दिये ही कन्नौज की ओर चला गया।[7]

1• गुलशने इब्राहिमी, पृष्ठ - 305
2• वही तथा तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ - 170
3• तबकाते अकबरी, पृष्ठ - 275 तथा तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ-171
4• तबकाते अकबरी, पृष्ठ - 275
5• वही, पृष्ठ - 276 तथा गुलशने इब्राहिमी, पृष्ठ - 305 तथा तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ - 171
6• तबकाते अकबरी, पृष्ठ - 276 तथा तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ-171
7• वही

वह कन्नौज के हाकिम, जिसे सुलातन इब्राहिम शर्की ने नियुक्त किया था और जिसे अमीर जादा हरेवी कहते थे,को निकालकर उस प्रदेश पर अपना राज्य स्थापित कर दिया ।[1] सुल्तान इब्राहिम शर्की तथा इकबाल खाँ ने जब यह महसूस किया कि सुल्तान महमूद कन्नौज प्राप्ति से ही सन्तुष्ट हो गया है तो दोनों वापस चले गये ।

सुल्तान महमूद शाह ने दिल्ली में अपनी स्थिति पुर्नगठित कर ली थी । 1404-5 ई0 में मल्लू इकबाल खाँ ने उसे उखाड़ फेकने का असफल प्रयास किया ।[2] इधर सुल्तान इब्राहिम शर्की ने भी उसे कन्नौज से भगाने का प्रयास किया तथा दुर्ग घेर लिया किन्तु वह भी असफल रहा और उसे महमूद शाह से सन्धि करनी पड़ी ।[3]

तिरहुत एक हिन्दू शासक के अधीन था जो 1394 से निरन्तर जौनपुर को वार्षिक खराज भेजता था,[4] के शासक गनेश्वर को 1402 में मलिक अर्सलान ने मार डाला और प्रदेश पर अधिकार कर लिया ।[5] गनेश्वर के पुत्र

1• गुल्शने इब्राहिमी, पृष्ठ-305 तथा तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ-17।

2• तारीखे मुहम्मदी, पृष्ठ-434 बी, तथा तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ-17।

3• वही

4• राम बाबू सक्सेना (सं0) "कीर्तिलता" (इलाहाबाद) 1929), 14-18

5• वही

कीर्ति सिंह ने सुल्तान इब्राहिम शर्की से सहायता माँगी । शर्की सुल्तान ने तुरन्त उसकी सहायता की और मलिक अर्सलान को पराजित कर मार डाला ।[1] कीर्ति सिंह के सिंहासनारोहण का, जिसमें सुल्तान इब्राहिम भी सम्मिलित हुआ, विद्यापति ठाकुर ने अपनी " कीर्ति लता " में सजीव चित्रण किया है ।

<u>इब्राहिम शर्की की कन्नौज पर विजय :</u> - नवम्बर 1405 ई0 में मल्लू इकबाल खाँ के मृत्यु के बाद दिल्ली के अमीरों के आमंत्रण पर सुल्तान महमूद ने दिल्ली के प्रस्थान किया और कन्नौज मलिक महमूद तुर्मती के अधिकार में छोड दिया ।[2] सुल्तान इब्राहिम कन्नौज की हानि अभी भूला न था । यह उसके लिए आदर्श अवसर था और अक्टूबर-नवम्बर 1406 ई0 में उसने कन्नौज के विरुद्ध कूच किया ।[3] दिल्ली से सुल्तान महमूद कन्नौज की सुरक्षा के लिए बढ़ा । दोनों सेनाओं ने गंगा के विपरीत किनारे पर

1• राम बाबू सक्सेना (सं0) "कीर्तिलता " (इलाहाबाद 1929), पृष्ठ-14-16

2• तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ-175 तथा तबकाते अकबरी, (भाग-1) पृष्ठ - 260

3• वही

डेरे लगाये किन्तु असफल वापस हुए ।[1] इब्राहिम की वापसी धोखा मात्र थी । जैसे ही महमूद दिल्ली पहुँचा और उसके " इक्तादारों " के सैनिक दस्ते अपने प्रदेश में लौट गये तो इब्राहिम कन्नौज की ओर झपटा और दुर्ग घेर लिया ।[2] मालिक महमूद तरकती ने चार मास तक घेरे का सामना किया और फिर आत्मसमर्पण कर दिया । इब्राहिम ने इख्तियार खाँ को दुर्ग का राज्यपाल नियुक्त किया और वहाँ सैन्य व्यवस्था की ।[3]

दिल्ली के विरूद्ध अभियान :- 810 हि0 / अक्टूबर 1407 ई0 में सुल्तान इब्राहिम शर्की ने दिल्ली के विरूद्ध कूच किया ।[4] सुल्तान महमूद के कुछ अमीर जैसे सारंग खाँ का पुत्र तातार खाँ, नुसरत खाँ और मल्लू खाँ का दास मलिक मरजान सुल्तान इब्राहिम से मिल गया ।[5] मार्ग में जब वह सम्भल पहुँचा तो असद खाँ लोदी सम्भल छोड़कर भाग गया ।[6] सुल्तान इब्राहिम सम्भल

---

1. तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ - 175 तथा तबकाते अकबरी भाग-1 पृष्ठ - 268
2. वही
3. वही, पृष्ठ - 176
4. वही, पृष्ठ -176 तथा यहिया- पृष्ठ-176 तथा जौनपुर नामा, फो-43
5. वही ।
6. वही, तथा तबकाते अकबरी, भाग-1, पृष्ठ - 261

तातारखाँ को सौंपकर आगे बढ़ा ।[1] फिर उसने बरन पर विजय प्राप्त की और बरन मलिक मरजान के हवाले कर दिया ।[2]

जब इब्राहिम यमुना नदी के किनारे पहुँचा तो गुप्तचरों ने उसे यह सूचना दी कि सुल्तान मुजफ्फर गुजराती सुल्तान होशंग को बन्दी बनाकर तथा मालवा विजित करके महमूद शाह के सहायतार्थ आ रहा है तथा जौनपुर पर अधिकार करना चाहता है ।[3] सुल्तान इब्राहिम शाह शीघ्रता से वापस लौटा । इधर महमूद शाह ने देहली से निकलकर सम्बल को मुक्त करा लिया।[4] तातार खाँ भागकर इब्राहिम शर्की के पास पहुँचा ।[5] सुल्तान महमूद बरन पर पुन: अधिकार के लिए बढ़ा । मलिक मरजान की हत्या कर दी गयी ।[6]

शाह इब्राहिम शर्की ने 1413 - 14 ई0 में पुन: देहली को विजय करने के उद्देश्य से प्रस्थान किया ।[7] किन्तु थोडी दूर जाने के बाद पुन:

- -

1· तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ-176 तथा तबकाते अकबरी, भाग-1, पृष्ठ-261 तथा रौजतउल तहिरिन, जिल्द 9 §1228 हि0§फो0 336-ब

2· तबकाते अकबरी, पृष्ठ -262, तथा तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ-176

3· मीर आते सिकन्दरी, पृष्ठ -26 तथा तबकाते अकबरी, पृष्ठ-277

4· गुलशने इब्राहिमी , पृष्ठ - 305

5· वही

6· तबकाते अकबरी, भाग-1, पृष्ठ - 262

7· गुलशने इब्राहिमी, पृष्ठ - 306

जौनपुर के दारूल उलम (विद्या का केन्द्र) में पहुँच गया [1] तथा आलिमों एवं मशायख की गोष्ठी, विलायत के निर्माण तथा कृषि को उन्नति देने में समय व्यतीत करने लगा ।[2] कुछ समय बाद जौनपुर में मशायख, आलिम, सईद (मुन्शी) तथा प्रत्येक श्रेणी नवी जिन्दे इतनी अधिक संख्या में एकत्र हुए कि जौनपुर को द्वितीय देहली कहा जाने लगा ।[3]

मेवात पर आक्रमण -

1427-28 ई० में मेवात का हाकिम मुहम्मद खाँ, सुल्तान इब्राहिम के पास पहुँचा और उसे तैयार करके बयाना को विजय करने के उद्देश्य से उस ओर ले गया ।[4] देहलो के बादशाह मुबारक शाह ने उसे रोकने के लिए प्रस्थान किया ।[5] दोनों बयाना के निकट पहुँच गये और दो-चार कोस पर दोनों ने खाइयाँ खोदकर अपने - अपने स्थान दृढ़ कर लिये । 22 दिनों तक दोनों सेनाएं आमने- सामने छिट-पुट युद्ध

1• गुलशने इब्राहिमी, पृष्ठ- 306
2• वही, तथा तबकाते अकबरी, पृष्ठ- 278
3• गुलशने इब्राहिमी, पृष्ठ - 306
4• वही
5• वही

करती रही । परन्तु दोनों बादशाह एक - दूसरे पर आक्रमण करने का साहस एकत्रित नहीं कर पा रही थीं ।[1] अन्त में सुल्तान इब्राहिम शर्की ने खाँई से निकलकर सेना की पंक्ति ठीक की । मुबारक शाह भी विवश होकर रणक्षेत्र की ओर बढ़ा । प्रात: काल से सायंकाल तक युद्ध होता रहा और युद्ध समाप्त की घोषणा दूसरे दिन "मजबूरी की सन्धि " के साथ हुई । सुल्तान इब्राहिम जौनपुर तथा मुबारक शाह देहली लौट गये ।[2]

<u>कालपी पर आक्रमण</u> - जालौन नगर से बाइस मील की दूरी पर यमुना की घाटियों में कालपी के नये किन्तु छोटे राज्य का उदय हुआ था । चारों ओर से दिल्ली, जौनपुर और मालवा के राज्यों से घिरा कालपी बड़ी विषम परिस्थिति में जी रहा था क्योंकि पड़ोसी राज्य उसे हड़पना चाहते थे ।

1411 ई0 में कालपी के शासक कादिरशाह (1411-32) ने भोगाँव (मैनपुरी) पर आक्रमण कर उसका निकटवर्ती प्रदेश लूटा ।[3] इब्राहिम इन

---

1. गुंलशने इब्राहिमी , पृष्ठ - 306
2. तबकाते अकबरी, पृष्ठ - 278 (सैय्यद अतहर अब्बास रिजवी द्वारा उद्धृत
3. उत्तर तैमूर कालीन भारत भाग -2, पृष्ठ -35-36

गतिविधियों का चिन्तित निरीक्षण कर रहा था । कादिरशाह जनता में अलोकप्रिय हो गया था । इससे इब्राहिम की स्थिति दृढ़ प्रतीत हुयी फिर भी इब्राहिम शाह अवरोध त्यागकर जौनपुर लौट आया । यह वापसी बनावटी थी तथा इब्राहिम शाह शर्की अपनी सेना के साथ पुन: पहुँच गया और महोबा तथा राठ पर अधिकार कर उन्हें नहीरूद्दीन के भाई दाऊद खाँ के पुत्र जलाल खाँ के अधिकार में दे दिया ।[1] तदुपरान्त शाहपुर पर अधिकार कर लिया गया और फिर शर्की सेना मलिकशर्क मकबूल के नेतृत्व में "इरज" की ओर बढ़ी।[2] तारीखे मुहम्मदी का लेखक " मुहम्मद बिहामद खानी" इस समय "इरज " का राज्यपाल था । इरज पर विजय प्राप्त हुई तथा उसे दाऊद के पुत्र जाफर के अधिकार में रखा गया ।[3] तत्पश्चात् इब्राहिम,मकबूल से आ मिला और शेखपुर दुर्ग की ओर कूच किया जहाँ कादिर खाँ ने उसे ललकारा । इब्राहिम ने नेफ्था और गुलेलों का प्रयोग कर दुर्ग की रक्षक सेना में हाहाकार मचा दिया । रक्षक सेना ने इब्राहिम से दया की भिक्षा माँगी

1• तारीखे मुहम्मदी, अनु0, पृष्ठ-67, फुट नोट -1

2• डि0गा0झाँसी, जिल्द -24, (इलाहाबाद -1909), पृष्ठ- 254-55

3• तारीखे मुहम्मदी, पृष्ठ-67 तथा उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-2, पृष्ठ- 36•

और जब कादिर ने इब्राहिम का आधिपत्य स्वीकार कर लिया तो उसे कालपी पर शासन करने की अनुमति दे दी गयी ।[1] किन्तु कादिर खाँ ने इब्राहिम शर्की के प्रति अपनी निष्ठा त्याग दी । और अपनी पूर्व स्थिति प्राप्त करने के लिए सक्रिय हो गया । उसने जुनैद खाँ के पुत्र दौलत खाँ को शर्की राज्यपाल जाफर से "इरज" छीनने के लिए भेजा ।[2] जाफर ने दृढ़ सुरक्षा का प्रयत्न किया किन्तु दो साल पश्चात जाफर की हत्या कर दी गयी और " इरज " कालपी के शासक जिसकी राजधानी महमूदाबाद थी, द्वारा विजित हुआ ।[3]

<u>बंगाल के गनेश के विरुद्ध अभियान</u> - 1414 ई० में शेख नूर कुत्बे आलम विख्यात चिश्ती संत थे और पंडुवा में रहते थे । उनका जनता पर बड़ा प्रभाव था । उन्होंने इब्राहिम शर्की को आमंत्रित किया ।[4] दीनाज पुर के राजा गनेश ने इस समय बंगाल पर अधिकार कर लिया था और मुसलमानों पर अत्याचार कर रहा था ।[5] दो मुस्लिम शासकों "सैफुद्दीन हम्जा शाह "

1• उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-2, पृष्ठ-36

2• तारीखे मुहम्मदी, पृष्ठ - 452

3• वही

4• उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग -2, पृष्ठ -552

5• रेयाज-उस-सलातीन, पृष्ठ -113

तथा शमसुद्दीन पूर्णरूपेण उसके नियंत्रण में थे । शेख नूर कुत्बे आलम ने किछौछा के सैय्यद अशरफ जहाँगीर समनानी को पत्र लिखा कि वह इब्राहिम को गनेश के विरुद्ध अभियान के लिए मनाए ।[1] इब्राहिम एक मजबूत सेना के साथ निकला और रास्ते में तिरहुत पर अधिकार कर लिया तथा वहाँ के राजा शिवसिंह को मार भगाया । इससे गनेश घबड़ा गया और शेख नूर कुत्बे आलम के पास समझौता कराने और शान्ति स्थापित करने के लिए आया । चिश्ती संत इस शर्त पर उसकी प्रार्थना स्वीकार करने के लिए तैयार हो गया कि उसका छोटा पुत्र इस्लाम स्वीकार कर ले और गनेश इस बात का निश्चित आश्वासन दे कि वह मुसलमानों को आतंकित नहीं करेगा ।[2] गनेश का पुत्र जदु ही आगे चलकर जलालुद्दीन के नाम से सिहांसनारूढ़ हुआ ।[3] इसके पश्चात इब्राहिम शर्की जौनपुर लौट आया ।[4]

1· न्यू लाइट आन राजा गनेश एण्ड, सुल्तान इब्राहिम शर्की आफ जौनपुर फ्राम कन्टोमपरेरी आफ टू मुस्लिम, भाग-67, पृष्ठ -32

2· बंगाल पास्ट एण्ड प्रेजेन्ट, जिल्द-67, पृष्ठ - 36

3· रेयाज, पृष्ठ-115-116,

4· हिस्ट्री आफ मेड़वल बंगाल , पृष्ठ - 35

कालपी के शासक कादिरशाह के प्रति अपनी जनता से कठोर और क्रूर व्यवहार के कारण असन्तोष उत्पन्न हो गया । जिसके फलस्वरूप जनता ने इब्राहिम शर्की को महमूदाबाद के विरुद्ध 1427 में कूच करने का प्रोत्साहन मिला ।[1] कादिर शाह ने दिल्ली के सुल्तान मुबारक शाह से सहायता माँगी किन्तु उस समय मुबारक बयाना के राज्यपाल मुहम्मद खाँ के विरुद्ध अभियान संगठित करने में व्यस्त था ।[2] मुहम्मद खाँ ने सुल्तान इब्राहिम शर्की से कुमुक प्राप्त करने के लिए जौनपुर की ओर प्रस्थान किया[3] और जिस समय मुबारक शाह कूच कर रहा था उसे अपने विरुद्ध शर्की शासक के कूच की सूचना मिली । याहिया सरहिंदी के अनुसार मुबारक ने बयाना का अभियान स्थगित कर दिया और सुल्तान इब्राहिम शर्की, और जिसकी सेना भोगाँव पर अधिकार कर चुकी थी और बदायूँ की ओर बढ़ रही थी से संघर्ष के लिए बढ़ा ।[4] मुख्लिस खाँ के नेतृत्व में एक सेना दिल्ली की सेना

- -

1• निजामी, दिल्ली सल्तनत, भाग-2, पृष्ठ - 7
2• इम्पी0 गजे0 आफ इण्डिया, जिल्द-16, पृष्ठ - 427-28
3• फरिश्ता, पृष्ठ - 306
4• इम्पी0गजे0आफ0 इण्डिया, जिल्द-14, पृष्ठ-318 तथा डि0ग0जौनपुर, पृष्ठ - 156•

पर आक्रमण करने के लिए भेजी गयी ।[1] मुबारक शाह ने यमुना नदी पार की और अतरोली पर आक्रमण किया ।[2] मलिकशर्क महमूद हुसेन मुख्तस खाँ का सामना करने के लिए भेजा गया । मुख्तस खाँ को एहसास हुआ कि उसकी स्थिति दृढ़ नहीं है । वह वापस चला आया और इब्राहिम से जा मिला ।[3]

सुल्तान इब्राहिम इटावा के निकट बुरहानाबाद पहुँचा ।[4] सुल्तान मुबारक की सेना भी आगे बढ़ी और फरवरी- मार्च 1427 ई० में माली कोटा के निकट युद्ध हुआ । इब्राहिम ने देखा कि उसकी स्थिति कमजोर है और वह रापरी की ओर चल पड़ा ।[5] मुबारक ने उसका पीछा किया और चंदावर के निकट दोनों सेनाओं में मुठभेड आरम्भ हो गयी ।[6] दोनों सेनाओं को बिना किसी उपलब्धि के भारी क्षति पहुँची । इब्राहिम जौनपुर

- -

1• फरिश्ता,पृष्ठ - 306

2• तारीखे मुबारक शाही, पृष्ठ - 207

3• डि०गजे०इटावा, जिल्द-11, {इलाहाबाद,1911} पृष्ठ - 132

4• वही

5• इम्पी०गजे०, जिल्द-21, {आक्सफोर्ड, 1908} पृष्ठ - 236

6• तारीखे मुबारक शाही,पृष्ठ-208

लौट आया और मुबारक दिल्ली चला गया । काल्पी का शासक कादिरशाह की 1432 ई0 में मृत्यु हो गयी ।[1] अमीरों ने उसके दूसरे पुत्र जलाल खाँ को सिंहासन पर बैठाया ।[2] जागीर खाँ ने इब्राहिम से सहायता की याचना की। इब्राहिम ने उसका समुचित स्वागत किया और उसे "खाने जहाँ" की उपाधि प्रदान की ।[3] जलाल खाँ ने अमीरों व जनता दोनों को ही खिन्न कर दिया था । उसे बन्दी बनाकर चंदेरी भेज दिया गया । जिसे उसके चाचा होशंगशाह जो कि मालवा का सुल्तान था ने उसे जागीर के रूप में दिया था । तत्पश्चात अमीरों ने फिरोज खाँ को काल्पी के सिंहासन पर बिठाया ।[4]

अब सुल्तान इब्राहिम शाह शर्की ने जागीर खाँ की सहायता करने का विचार बनाया और उसने महमूदा बाद का घेरा डालना प्रारम्भ किया।[5]

- -

1· निजामी, दिल्ली सल्तनत, भाग -2 , पृष्ठ - 8
2· वही
3· वही
4· वही
5· वही, तथा डा0 शेफाली चटर्जी , पृष्ठ - 92

जब होशंग शाह को इन गतिविधियों की सूचना प्राप्त हुई तो वह महमूदाबाद की ओर प्रस्थान किया ।[1] तभी इब्राहिम शर्की ने घेरे बन्दी समाप्त कर दिया ।[2] होशंग शाह, जलाल खाँ, महमूदाबाद में सिहासनारूढ़ करने के पश्चात मलवा वापस लौट आया ।[3] सुल्तान इब्राहिम शर्की जो जागीर खाँ के हितार्थ कुछ करने के लिए तत्पर था, शाहपुर का दुर्ग उसे सौंप दिया, जिसे सुल्तान इब्राहिम ने कुछ ही समय पहले कालपी के शासक से प्राप्त किया था ।[4] जलाल खाँ के अत्याचार से खिन्न जनता व अमीरों ने पुन: उसके लिए निष्ठा जागृत नहीं हो सकी । उन अमीरों में से कुछ ने सुल्तान इब्राहिम शर्की के पास जाकर जलालखाँ के विरूद्ध सहायता माँगी ।[5] इसी समय मालवा के शासक होशंग शाह ने जलाल खाँ के पक्ष में कूच किया और शर्की सेना पर आक्रमण कर दिया ।[6] परन्तु इस युद्ध का कोई परिणाम नहीं

1• डा०शेफाली चटर्जी, पृष्ठ - 92

2• निजामी, पृष्ठ - 8

3• तारीखे मुहम्मदी, पृष्ठ - 456-57, तथा तबकाते अकबरी, पृष्ठ-529

4• निजामी, पृष्ठ - 8

5• वही

6• उ०ते०का०भा०, भाग -2, पृष्ठ - 58

निकल सका । दोनों ही पक्ष युद्ध की तरफ से निरूत्साहित हो चुके थे । इसलिए होशंग शाह मालवा की ओर तथा इब्राहिम शर्की जौनपुर को लौट आया ।[1] परन्तु कालपी को जो अमीर जौनपुर में शरणार्थी के रूप में रह रहे थे उन्होंने इब्राहिम शर्की को पुनः महमूदाबाद पर चढ़ाई करने के लिए प्रोत्साहित किया ।[2] इस बार इब्राहिम शर्की के समक्ष जलाल खाँ को पराजित होना पड़ा और वह भाण्डेर की ओर भाग गया ।[3] सुल्तान इब्राहिम शर्की ने महमूदाबाद पर अधिकार करने के पश्चात उसे जागीर खाँ को सौंप दिया ।[4]

इब्राहिम ने 839हि0/ 1435 ई0 में बंगाल पर पुनः आक्रमण किया परन्तु शर्की सुल्तान द्वारा इकदला के दुर्ग पर घेरा डालने के अतिरिक्त अन्य कोई विवरण नहीं प्राप्त होता है ।[5] 1437 ई0 में सुल्तान इब्राहिम शर्की

---

1. तारीखे मुहम्मदी, पृष्ठ -7।
2. डा0 शेफाली चटर्जी, पृष्ठ - 92
3. वही
4. तारीखे मुहम्मदी, पृष्ठ- 452-59
5. वही, पृष्ठ - 427

ने दिल्ली के मुहम्मद शाह के विरुद्ध प्रस्थान किया ।[1] इब्राहिम ने दिल्ली पर घेरा डाला और कुछ निकटवर्ती परगनों पर अधिकार कर लिया ।[2] सुल्तान मुहम्मद शाह ने अपनी कमजोर स्थिति का आंकलन करते हुए इब्राहिम शर्की से सन्धि की प्रार्थना की ।[3] दिल्ली के सुल्तान मुहम्मद शाह तथा जौनपुर के शासक इब्राहिम शर्की के मध्य वैवाहिक सम्बन्ध भी स्थापित हुए जिसके परिणाम स्वरूप सुल्तान इब्राहिम के पुत्र महमूद खाँ ने सुल्तान मुहम्मद शाह की पुत्री बीबीराजी से विवाह किया ।[4]

844 हि० (1440 ई०) में सुल्तान इब्राहिम शर्की बीमार हो गया तथा 1440 ई० में उसकी मृत्यु हो गयी ।[5] उसने चालीस वर्षोंतक शासन किया ।[6] इस तथ्यकी पुष्टि इस बात से भी होती है कि 1440 ई०

- -

1• जौनपुर नामा, " रोजतुता हिरिन"

2 वही

3• तारीखे मुहम्मदी, पृष्ठ - 427 ए

4• हबीब निजामी, दिल्ली सल्तनत भाग -2, पृष्ठ - 8

5• गुलशने इब्राहिमी, पृष्ठ - 306 तथा जौनपुर नामा, फो०-53अ
तथा मिरातुल इसरार, फो०-541 अ, तथा सुब्हे सादिक, फो०-1770ब

6• तारीखे मुहम्मदी, पृष्ठ- 427 ए

तक के ही इसके सिक्के प्राप्त हुए हैं ।[1]

महमूद शाह शर्की ﴾ 1440-57 ई0﴿ - सुल्तान इब्राहिम शर्की की मृत्यु के पश्चात उसका सबसे बड़ा पुत्र महमूद खाँ, सुल्तान महमूद शाह का विरद धारण करके 844 हि0/ 1440 ई0 में सिंहासन पर विराजमान हुआ ।[2] सिंहासनारोहण के दो वर्ष के अन्दर ही सुल्तान महमूद शाह शर्की ने बंगाल पर आक्रमण का संगठन किया ।[3] बंगाल के शासक सुल्तान शम्सुद्दीन ने हिरात के शाहरुख से सहायता की अपील की ।[4] शाहरुख ने शेखुल इस्लाम करीमुद्दीन अबुल मकरम जामी द्वारा एक संदेश भेजा जिसमें शर्की सुल्तान को बंगाल पर आक्रमण न करने का उपदेश दिया गया था । साथ ही इस प्रार्थना को अस्वीकार करने पर आक्रमण किये जाने की धमकी भी दी । संदेश का अपेक्षित प्रभाव पड़ा तथा सुल्तान महमूद शर्की ने आक्रमण करने की योजना का परित्याग कर दिया ।[5]

---

1. एस0लेनपूल, कैटलाग आफ इण्डियन क्वाइंश इन दि ब्रिटिश म्यूजियम ﴾ दि मुहम्मडन स्टेट्स ﴿ पृष्ठ - 94, तथा रैयाज, पृष्ठ-116
2. तबकाते अकबरी, पृष्ठ - 279 तथा गुल्शने इब्राहिमी, पृष्ठ-307
3. मतला उस्सादैन , पृष्ठ - 78।
4. वही
5. मतल उस्सादैन ﴾लाहौर 1942﴿, भाग-2, पृष्ठ-782-83

कालपी के विरूद्ध संघर्ष : -

847 हि0 / 1443 ई0 में सुल्तान महमूद शर्की ने एक दूत मालवा के शासक सुल्तान महमूद खलजी की सेवा में भेजकर यह संदेश कहलवाया कि, " कालपी का अधिकारी नसीर खाँ वल्द कादिर खाँ मुहम्मद साहब की शरीयत के मार्ग से हटकर कार्य कर रहा है । उसने शाहपुर के कस्बे को जो कालपी से भी अधिक आबाद था, नष्ट करके मुसलमानों को निर्वासित कर दिया है । ईश्वर तथा रसूल (मुहम्मद साहब) से उसे कोई भय नहीं रह गया है ।[1] चूँकि नसीर खाँ का मालवा के महमूद खलजी से अच्छे सम्बन्ध थे इसलिए सुल्तान महमूद शर्की ने उसे सूचना देने की आवश्यकता महसूस की । मालवा के शासक ने शर्की शासक के दूत का आदर सत्कार किया तथा इस विषय पर सुल्तान महमूद शर्की के विचारों से सहमति प्रकट की ।[2] किन्तु उसने सन्देश कहलवाया कि चूँकि उसकी सेनाएं मेवात के विद्रोहियों का दमन करने में व्यस्त हैं, अत: वह किसी प्रकार की सैन्य सहायता करने में असमर्थ है ।[3] इस प्रकार जब सुल्तान महमूद शर्की को यह आश्वासन मिल गया कि मालवा का सुल्तान नसीर खाँ की मदद करने के

- -

1• तबकाते अकबरी, पृष्ठ- 279 तथा रिजाकुल्लाह मुश्ताकी, वाकियात पृष्ठ - 229-30

2• वही तथा फरिश्ता, पृष्ठ - 596

3• तबकाते अकबरी, पृष्ठ - 279

नही आयेगा तो उसकी सद्भावनाओं के प्रति दान स्वरूप सुल्तान ने 29 हाथी भेंट में भेजे ।[1] इसके पश्चात सुल्तान महमूद शर्की ने कालपी पर चढ़ाई की । शर्की सेनाओं का सामना करने में असमर्थ होने के कारण नसीर खाँ महमूदाबाद छोड़कर चन्देरी भाग गया[2] और मालवा के शासक की सत्ता स्वीकार करते हुए सुल्तान महमूद खल्जी को एक प्रार्थना पत्र भेजा कि " यह प्रदेश सुल्तान होशंगशाह हमें प्रदान किया था तथा सुल्तान महमूद शर्की इसका अपहरण करना चाहता है, अत: मेरी सहायता करना सुल्तान महमूद खल्जी के लिए आवश्यक है ।"[3] साथ ही उसने जनता के साथ सदव्यवहार का आश्वासन भी दिया ।[4] सुल्तान महमूद खल्जी ने यह पत्र पाकर उचित पेशकश सहित अपने विश्वासपात्र अली खाँ को सुल्तान महमूद शर्की के पास भेजा[5] कि " कालपी के हाकिम ने ईश्वर तथा आपके भय से भविष्य में घृणित कार्य न करने की प्रतिज्ञा की है तथा उसने संकल्प किया है

---

1. गुल्शने इब्राहिमी , पृष्ठ - 307, तथा तबकाते अकबरी, पृष्ठ-280
2. रिजाकुल्लाह मुश्ताकी, (वाकियात 229-30), तबकाते अकबरी, 279
3. वही
4. जब्दतुत्तावारीख, पृ0-374 तथा गुल्शने इब्राहिमी, पृष्ठ - 307
5. तबकाते अकबरी, पृ0 - 280, तथा गुल्शने इब्राहिमी, पृष्ठ- 307

कि उसके द्वारा जो हानि हुई है उसकी वह पूर्ति करेगा और शरीयत के मार्ग से विचलित न होगा ।[1] सुल्तान होशंग ने कालपी का प्रदेश अब्दुल कादिर (कादिरशाह) को प्रदान किया था और वे लोग हमारे आज्ञाकारी हैं । अत: हमने नसीर खाँ को क्षमा कर दिया है[2] और उन्हें कोई क्षति न पहुँचायी जाय ।[3]

अभी सुल्तान महमूद खलजी के पास पत्र का उत्तर तथा अली खाँ का पत्र पहुँचा भी नहीं था कि सुल्तान महमूद खलजी को नसीर खाँ का पत्र पुन: प्राप्त हुआ कि, " मैं सुल्तान होशंग शाह के राज्य काल से आज्ञाकारी तथा दास हूँ । सुल्तान महमूद शर्की ने पुरानी शत्रुता वश कालपी पर आक्रमण कर दिया है और राज्य को विजीत कर मुसलमान स्त्रियों को बन्दी बनाकर तथा निर्वासित करके चन्देरी पहुँच गया है ।[4] यद्यपि सुल्तान महमूद खलजी ने सुल्तान महमूद शर्की को नसीर खाँ को दण्डित करने की

1· तबकाते अकबरी, पृष्ठ-280, तथा गुलशने इब्राहिमी, पृष्ठ-307

2· वहीं,

3· फरिश्ता , जिल्द -2, पृष्ठ - 307

4· जौनपुर नामा, फो० - 5ब

अनुमति प्रदान की थी । परन्तु परिस्थितियाँ तेजी से परिवर्तित हो गयी और नसीर खाँ द्वारा अत्यधिक अनुनय विनय एवं विवशता प्रकट करने के कारण सुल्तान महमूद खल्जी ने 14 नवम्बर 1445 ई0 को उज्जैन से चन्देरी तथा कालपी की ओर प्रस्थान किया।[1] चन्देरी में नसीर खाँ ने उससे भेंट की और वहाँ से एरचा की ओर प्रस्थान किया ।[2] इधर सुल्तान महमूद शर्की उसका सामना करने के लिए चला रास्ते में ईरज का जागीरदार मुबारक खाँ शर्की से मिल गया । यमुना के तट पर दोनों के मध्य अनिर्णायक युद्ध हुआ ।[3] तत्पश्चात राठके निकट दोनों सेनाओं के बीच पुन: युद्ध हुआ जिसमें शर्की पराजित हुए ।[4] निकटवर्ती प्रदेश में ही पुन: युद्ध हुआ[5] जिसमें दोनों पक्षों को भारी क्षति हुयी ।

तत्पश्चात शाह महमूद शर्की ने शेखुल इस्लाम जायल्दा को, जो अपने समय के बहुत बड़े बुजुर्ग थे और सुल्तान महमूद खलजी उनका भक्त था[6]

डा0 शेफाली चटर्जी, पृष्ठ-99

2• वही तथा निजामी, पृष्ठ-9

3• निजामी - पृष्ठ - 9

4• वही

5• वही

6• मीरातुल आलम, पो0-201 अ तथा ब्रिग्स , जिल्द,4 पृष्ठ - 215

को एक पत्र इस आशय का भेजा कि " दोनों ओर से लोगों की हत्यायें हो रही है। यदि आप संधि कराने का प्रयत्न करें तो अच्छा होगा ।[1] साथ ही सुल्तान महमूद शर्की ने सुल्तान महमूद खलजी को राठ सहित ईरज तथा निकटवर्ती प्रदेश तुरन्त समर्पित करने की बात भी कही ।[2] शेख ने सुल्तान महमूद शर्की के दूत के साथ अपना सेवक सुल्तान महमूद खलजी की सेवा में भेजा और परामर्शयुक्त पत्र लिखा ।[3] सुल्तान महमूद ने कहा कि " जब तक सुल्तान शर्की कालपी न छोड़ेगा, सन्धि होना असम्भव है ।"[4] परन्तु नसीर खाँ पूर्णत: अपने स्थाने से उखड़ चुका था, अत: राठ परगने को पर्याप्त समझ कर उसने सुल्तान महमूद खलजी से शेख का विचार मान लेने का आग्रह किया[5] साथ ही नासिर खाँ ने कहा कि चूँकि सुल्तान शर्की ने चार मास बाद कालपी भी वापस करने का प्रस्ताव किया है अत: इसे स्वीकार कर लेना चाहिए । शेष की अध्यात्मिक दया द्वारा संधि के सम्पन्न

---

1. डा० शेफाली चटर्जी, पृ०- 100
2. मीरातुल आलम, फो०- 201 अ
3. गुलशने इब्राहिम पृ० 308,
4. वही
5. वही, तथा डा० शेफाली चटर्जी, पृ०- 100

हो जाने पर शर्की सुल्तान का दूत लौट आया ।[1] सुल्तान महमूद खल्जी मालवा वापस लौट आया ।[2] साथ ही सुल्तान महमूद शर्की भी जौनपुर लौट आया ।[3]

महमूद खल्जह के शीघ्र ही पूर्व की ओर चुनार के विद्राहियों का सामना करना पड़ा । उसने विद्रोहियों का दृढता से दमन किया और आतंक उत्पन्न करने वाले समस्त प्रदेशों को रौंद डाला । सुल्तान महमूद खल्जी ने उस प्रदेश में रक्षक सेना की व्यवस्था की और राजधानी वापस आ गया ।

चम्पारन पर आक्रमण :

कुछ समय पश्चात सुल्तान महमूद शर्की ने चम्पारन की ओर प्रस्थान किया ।[4] कुछ परगनों तथा कस्बों का अधिकार करके वहाँ अपने अधिकारियों (थानेदारों) को नियुक्त कर दिया । इस प्रकार वहाँ की व्यवस्था ठीक कर महमूद शर्की जौनपुर लौट आया ।[5]

1· गुलशने इब्राहिमी, पृ0-308, तथा डा0शेफाली चटर्जी, पृ0- 100
2· वही
3· वही
4· गुलशने इब्राहिमी, पृ0 - 308
5· रिजवी, उत्तर तैमूर कालीन भारत, जिल्द-2, पृ0-9, तथा तबकाते अकबरी पृ0- 53। तथा हफ्त-ए-गुलशन फो0-114-ब

उड़ीसा पर आक्रमण -

फिर सुल्तान महमूद शर्की ने उड़ीसा पर अभियान प्रारम्भ किया।[1] उडीसा के आस पास के स्थानों को लूटा और मन्दिरों का खण्डन किया।[2] वहाँ विजय प्राप्त करने के बाद वह वापस जौनपुर लौट आया।

दिल्ली से सम्बन्ध :

सुल्तान महमूद शाह शर्की दिल्ली की राजनीति में पर्याप्त रुचि लेता था क्योंकि दिल्ली का शासन सुल्तान अलाउद्दीन आलम शाह क दिल्ली दरबार के अमीरों के हाथ को कठपुतली बन गया था तथा वह सुल्तान महमूद की पत्नी का भाई भी था। वह दिल्ली के एक अमीर हमीद खाँ ने राजधानी पर वास्तविक अधिकार कर लिया था तथा अलाउद्दीन को बदायूँ में शरणार्थी बनना पड़ा था।[3] अन्त में अलाउद्दीन आलमशाह ने सरहिन्द से बहलोल लोदी को आमन्त्रित किया[4] और बहलोल ने राजसत्ता

1• गुल्शने इब्राहिम, पृ0-308

2• मीरातुल आलम, पो0-201-अ, तथा तबकाते अकबरी, पृ0- 531-32

3• तारीखे शाही, पृ0-10

4• वही तथा तारीखे दाऊदी पो0 10-ब

ग्रहण की ।[1] महमूद शर्की की पत्नी ने अपने पति से आग्रह किया कि वह दिल्ली पर आक्रमण करे तथा बहलोल को मार भगाये ।[2] सुल्तान अलाउद्दीन के कुछ अमीर भी जौनपुर आये और सुल्तान महमूद शर्की को बहलोल के खिलाफ आमन्त्रित किया ।[3] 1452 ई0 में जौनपुर के सुल्तान महमूद शर्की ने 170000 सैनिकों तथा 1400 लड़ाकू हाथियों की विशाल सेना के साथ दिल्ली पर आक्रमण करने के उद्देश्य से कूच किया तथा दिल्ली पहुँचकर दुर्ग की घेरेबन्दी कर दी ।[4] इस समय शत्रु का मुकाबला करने के लिए दुर्ग में पर्याप्त सेना नहीं थी ।[5] ऐसे समय में सुल्तान बहलोल लोदी की सास बीबीमाटो ने एक चाल चली । उसने दुर्ग में उपस्थित सभी महिलाओं को मर्दाने कपड़े पहनाकर दुर्ग की मुंडेरों पर नियुक्त कर दिया ।[6] अफगान तीरंदाज घेरा डालने वाली सेना पर बाणों से प्रहार करने लगे । परन्तु अन्त में उन्हें समर्पण करना पड़ा।[7]

1• तारीखे शाही, पृ0-10 तथा तारीखे दाऊदी, फो0- 10-ब
2• वही
3• गुल्शने इब्राहिम , पृ0- 308
4• सलातीने अफगाना, पृ0-10-11, जौनपुर नामा, फो0-5-ब
5• तारीखे दाऊदी, 13
6• तारीखे दाऊदी, पृ013 , वाकयात, फो0- 2-ब, सलातीने अफगाना-पृ0-11
7• तारीखे दाऊदी, पृ0- 14

दिल्ली दुर्ग का एक अमीर सैय्यद समसुद्दीन दुर्ग की कुंजियां लाया और उन्हें शर्की सेना के सेनापति दरियर खाँ लोदी के सुपुर्द कर दिया ।[1] साथ ही यह भी निश्चित हुआ कि दुर्ग में उपस्थित अफगान सेना तुरन्त दुर्ग खाली कर देगी । किन्तु परिस्थिति नियंत्रित करने के लिए सैय्यद शम्सुद्दीन ने एक तरीका अपनाया । उसने एकान्त में दरिया खाँ लोदी की जातीय निष्ठा भड़काई[2] तथा दुर्ग में रहने वाले स्त्री व बच्चों के प्रति सहानुभूति दर्शाने का आग्रह किया ।[3] इस प्रकार बड़ी चालाकी से सैय्यद समसुद्दीन ने शर्की सेना के सेनापति दरिया खाँ लोदी को मिला लिया ।[4] दरिया खाँ लोदी दुर्ग की कुंजियों के साथ सुल्तान महमूद शर्की के पास गया और कहा कि यद्यपि दुर्ग की कुंजियां प्राप्त हो गयी हैं परन्तु बहलोल लोदी एक विशाल सेना के साथ दिल्ली की ओर आ रहा है । यदि शर्की सुल्तान को युद्ध में विजय मिली तो न केवल नगर ही वरन् समस्त दिल्ली साम्राज्य पर

- -

1• तारीखे दाऊदी, पृ0-14, तथा वाकियात पो0-3 अ

2• वही

3• वही

4• वही

उसका आधिपत्य हो जायेगा ।[1] दरिया खाँ लोदी द्वारा बिछाये गये इस चतुर जाल में शर्की सुल्तान महमूद सरलता से फंस गया ।[2]

इसी बीच सुल्तान बहलोल लोदी ने एक विशाल सेना के साथ कूच किया और अनेक अफगान अमीरों का सहयोग प्राप्त कर दिल्ली से लगभग 17 मील ( ) दूर नरेला के निकट पहुँचा ।[3] शर्की सुल्तान महमूद शर्की ने 30000 आश्वारोहियों तथा 30 हाथियों की एक सेना दरिया खाँ लोदी तथा फतेह खाँ हरवी के नेतृत्व में बहलोल का मुकाबला करने के लिए भेजा ।[4] नरेला के निकट हुए इस युद्ध में शर्की सेना के सेनापति फतेह खाँ हरवी को पीछे हटना पड़ा[5] क्योंकि उसका हाथी कुतुब खाँ लोदी द्वारा बुरी तरह घायल कर दिया गया था ।[6] जैसे ही हरवी रणक्षेत्र से निकल कर

- -

1· तारीखे दाऊदी , पृ0- 14

2· वही, 14, तथा फरिश्ता , जिल्द -2, पृ0 - 308

3· वही, 15, तथा गुलशने इब्राहिम , फोलियो- 212 अ

4· वही तथा सलातीने अफगाना, पृ0- 12, तथा मखजन, फो0-102 अ

5· वही, 15,

6· वही, पृ0- 15 तथा सलातीने अफगाना, पृ0-13 तथा मखजन फो0-102ब

बाहर आया कुतुब खाँ लोदी दरिया खाँ लोदी के पास पहुँचा तथा अफगान स्त्रियों के सम्मान की रक्षा के लिए उसकी भावनायें भड़काई।[1] दरिया खाँ इन बातों से इतना प्रभावित हुआ कि वह शर्की सेना छोड़कर भाग गया।[2] जैसा कि स्वाभाविक ही था, इसके पश्चात शर्की सेना में भीषण अव्यवस्था फैल गयी। फतेह खाँ हरवी को बंदी बना लिया गया।[3] तथा बाद में खोर के राय कर्ण द्वारा मार डाला गया।[4] फतेह खाँ हरवी का सिर काटकर सुल्तान बहलोल लोदी के पास लाया गया।[5] जब महमूद शर्की को इन घटनाओं का पता चला तो वह जौनपुर लौट गया।[6]

सुल्तान मलिक सरवर के शासन काल में ही उज्जैन ने जौनपुर का आधिपत्य स्वीकार कर लिया था।[7] परन्तु 1454 ई0 में ईश्वर सिंह के

---

1. तारीखे दाऊदी, पृ0-15 तथा सलातीने अफगाना, पृ0-13 तथा मखजन फो0 - 102 ब
2. वही
3. तारीखे दाऊदी, पृ0-15 तथा ब्रिग्स, जिल्द-1, पृ0-322
4. वही
5. तारीखे दाऊदी, पृ0- 16
6. वही, पृ0-16, तथा वाकयात, फो0 - 3 ब
7. के0ए0निजामी, पृ0- 9

आधिपत्य में उज्जैन की बिगड़ती स्थिति ने महमूद शर्की को उज्जैन पर आक्रमण करने के लिए विवश कर दिया ।[1] ईश्वर सिंह पलायित कर गया तथा शर्की सेनाओं ने उज्जैन की राजधानी दावा पर अधिकार कर लिया ।[2]

दिल्ली से शर्की सेनाओं की शर्मनाक वापसी तथा उसके प्रतिभाशाली सेनापति फतेह खाँ की मृत्यु तथा दरिया खाँ के पलायन से बहलोल लोदी को हौसला मिला कि वह शर्की शासक के हितों की परवाह किये बिना अपनी स्थिति सुदृढ़ कर ले ।[3] जब सुल्तान बहलोल लोदी के अधिकारी इटावा पहुँचे और वहाँ से 1455 ई0 में राज्यपाल को भगा दिया तो सुल्तान महमूद शर्की ने लोदियों को आगे बढ़ने से रोकने का निश्चय किया ।[4] दोनों सेनाओं का इटावा के निकट सामना हुआ, परन्तु कुतुब खाँ लोदी और राय प्रताप की मध्यस्थता में सन्धि हो गयी ।[5] सन्धि में यह निश्चित हुआ कि नरेला में जिन सात हाथियों पर सुल्तान बहलोल लोदी ने अधिकार कर लिया था उन्हें

1• के0ए0निजामी, पृ0- 9
2• तारीखे दाऊदी, पृ0- 16
3• के0ए0निजामी, पृ0 - 10
4• वही
5• डा0 शेफाली चटर्जी पृ0- 110

वापस कर देगा और यह कि सुल्तान इब्राहिम शर्की तथा दिल्ली के सुल्तान मुबारक शाह के अन्तर्गत रहने वाले क्षेत्रों के आधार पर शर्की व दिल्ली के शासक के बीच क्षेत्रीय समझौता होगा ।[1] इसके अतिरिक्त यह भी निश्चित हुआ कि वर्षा ऋतु के बाद सुल्तान बहलोल लोदी को शम्साबाद वापस मिल जायेगा ।[2]

यह सन्धि अल्पकालिक ही रही क्योंकि जब 1456 ई0 में सुल्तान बहलोल लोदी ने शर्की राज्यपाल जौना खाँ से शमसाबाद खाली करने की माँग की तो उसने विलम्ब किया, परिणामस्वरूप सुल्तान बहलोल लोदी ने उसे मार भगायाऔर शमसाबाद का दुर्ग राय कर्ण को सौंप दिया ।[3] जौना खाँ ने जौनपुर से सहायता की याचना की औरसुल्तान महमूद शर्की ने शीघ्र ही शमसाबाद पहुँचकर राय कर्ण पर आक्रमण कर दिया ।[4] तत्पश्चात

1• डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0-110, तथा के0ए0मिज़ामी -पृ0 - 10

2• मखजन, फो0 - 104 अ,ब तथा गुल्शने इब्राहिम, फो0-212 अ

3• डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0 - 109

4• के0एन0लाल (ट्वाइलाइट) पृ0 - 139

कुतुब खाँ लोदी व दरिया खाँ लोदी ने शर्की शिविर पर रात्रि आक्रमण किया।[1] कुतुब खाँ लोदी अपने घोड़े से गिर पड़ा तथा बन्दी बनाया गया।[2] सुल्तान बहलोल लोदी को इस घटना से बहुत ठेस लगी और उसने जलाल खाँ तथा राजकुमार सिकन्दर को राय कर्ण के सहायतार्थ छोड़कर स्वयं सुल्तान महमूद शर्की का सामना करने के लिए प्रस्थान किया।[3]

इसी समय सुल्तान महमूद बीमार पड़ गया और 862 हि0/1457 ई0 में उसका देहावसान हो गया।[4] सुल्तान महमूद शर्की ने बीस वर्ष तथा कुछ माह तक शासन किया।[5]

सुल्तान मुहम्मद शाह शर्की

सुल्तान महमूद शाह शर्की की मृत्यु के पश्चात उसकी पत्नी बीबीराजी ने जौनपुर दरबार के अमीरों तथा उच्च अधिकारियों के परामर्श से शाहजादा

---

1. मखजन, फो0-105 अ, तथा सलातीने अफगाना, पृ0-14 तथा तबकाते अकबरी, पृ0 - 532
2. तबकाते अकबरी, पृ0- 532 तथा मीरातुल इसरार, फो0- 541अ,
3. वही, तथा फरिश्ता जिल्द -2 पृ0- 308
4. वही
5. वही

भीकन को सुल्तान मुहम्मद शाह की उपाधि देकर सिंहासनारूढ किया ।[1] ऐसा प्रतीत होता है कि स्वर्गीय सुल्तान महमूद शाह शर्की की भी यही इच्छा थी क्योंकि उसने अपनी मृत्यु के दो वर्ष के पूर्व ही अपने पुत्र भीकन के नाम से सिक्के प्रचलित कर दिये थे ।[2] सिंहासनारोहण के समय ही सुल्तान मुहम्मद शाह शर्की की माता बीबी राजी ने दिल्ली के सुल्तान बहलोल लोदी से सन्धि कर यह प्रतिज्ञा करवा ली थी कि, " शाह महमूद शाह शर्की को राज्य मुहम्मद शाह शर्की के अधिकार में रहे और जो भाग सुल्तान बहलोल लोदी के अधिकार में है, वे उसी के अधिकार में रहे ।[3]

सुल्तान मुहम्मद शर्की के समक्ष समस्या के रूप में उसके भाई थे, जिनसे उसे विद्रोह की आशंका बनी हुयी थी ।[4] सुल्तान मुहम्मद शाह शर्की ने कुतुब खाँ लोदी को बन्दी बना लिया तथा कुछ अमीरों की हत्या करवा दी।[5] फिर भी सुल्तान की समस्याएं सुलझ नहीं सकी । इतना ही नहीं, अमीरों

- -

1· तारीखे फरिश्ता पृ0.- 308

2· नेल्सन राइट, कैटलाग आफ क्वायंस इन दि इंडियन म्यूजियम (आक्सफोर्ड 1907) भाग - 2 पृ0- 207

3· तारीखे फरिश्ता पृ0- 308

4· वही

5· वही

फिर भी सुल्तान की समस्याएं सुलझ नहीं सकी । इतना ही नहीं अमीरों तथा अपने भाइयों के प्रति उसके कठोर व्यवहार ने विस्तृत असन्तोष उत्पन्न कर दिया था । इस बीच सुल्तान बहलोल लोदी की पत्नी शम्स खातून जो कि कुतुब खाँ लोदी की बहन थी[1] ने सुल्तान बहलोल के पास सन्देश भेजा कि " जब तक कुतुब खाँ सुल्तान मुहम्मद के कारागार में रहेगा उसके लिए नींद और आराम हराम होगा ।"[2] इस संदेश के फलस्वरूप सुल्तान बहलोल लोदी ने जौनपुर के विरूद्ध कूच किया ।[3] इस बार जौनपुर का सुल्तान मुहम्मद शाह शर्की सुल्तान बहलोल लोदी का सामना करने के लिए आगे बढ़ा तथा राय कर्ण को शमसाबाद से मार भगाया ।[4] तथा जौना खाँ की पुर्नन्यिुक्ति की ।[5] इटावा का जमींदार राय प्रताप, जो इससे पूर्व सुल्तान बहलोल लोदी का पक्ष धर था, मुहम्मद शाह के प्रभुत्व को देखकर उससे मिल गया ।[6]

- -

1• तबकाते अकबरी, भाग-1, पृ0- 304

2• वही

3• तारीखे फरिश्ता, पृ0- 308

4• वही

5• तबकाते अकबरी, भाग-1 पृ0- 304

6• तारीखे फरिश्ता, पृ0- 308

यहाँ से सुल्तान मुहम्मद शाह सरसुती (सिरसा नदी पर स्थित इटावा जिले में आधुनिक सिरास गूज) पहुँचा । इसी स्थान पर दोनों सेनाओं का सामना हुआ।[1] कुछ ही समय पश्चात् शर्की सुल्तान मुहम्मद शाह को अपनी स्थिति कमजोर महसूस होने लगी । उसने अपनी इस कमजोर स्थिति का कारण अमीरों का असहयोग माना । तत्पश्चात् सुल्तान मुहम्मद शर्की ने जौनपुर के कोतवाल के पास यह आदेश भेजा कि वह कुतुब खाँ लोदी तथा हसन खाँ की हत्या कर दे ।[2] जौनपुर के कोतवाल ने प्रति उत्तर भेजा, कि" बीबी राजी दोनों की इस प्रकार रक्षा कर रही है कि मेरे द्वारा उनकी हत्या सम्भव नहीं है तथा शाही आदेश का पालन नहीं किया जा सकता है।[3] तब सुल्तान मुहम्मद ने चालाकी से अपनी माता बीबी राजी को पत्र प्रेषित किया कि वह उसके भाई हसन खाँ से सन्धि करा दें तथा थोड़ी सी विलायत हसन खाँ को दिलवा दें ।[4] बीबी राजी ने धोखे में जौनपुर से प्रस्थान किया

- -

1• तारीखे फरिश्ता, पृ० - 308

2• वही तथा तबकाते अकबरी , पृ०- 304

3• वही

4• वही

और इधर कोतवाल ने सुल्तान आज्ञा के अनुसार हसन खाँ की हत्या कर दी ।[1]

सुल्तान महमूद के इस निष्ठुर व्यवहार से उसके भाई हुसेन खाँ तथा जलाल खाँ अत्यधिक क्रोधित हुए तथा अमीरों में व्यापक असन्तोष फैल गया।[1] हुसेन खाँ तथा जलाल खाँ ने अपनी सुरक्षा के लिए एक चाल चली।[2] उन्होंने सुल्तान मुहम्मद शाह शर्की से निवेदन किया कि "सुल्तान बहलोल लोदी की सेना का रात्रि में छापा मारने का विचार है ।"[3] अत: शाही आदेशानुसार शाहजादा हुसेन खाँ तथा सुल्तान शाह अजोधनी 30000 अश्वारोही तथा 1000 हाथियों के साथ सुल्तान बहलोल की सेना रोकने के बहाने सुल्तान मुहम्मद शाह शर्की से पृथक हो गये और झरने के किनारे पर खड़े हो गये।[4] सुल्तान बहलोल लोदी ने यह सूचना पाकर उनके विरुद्ध एक सेना नियुक्त की।[5] शाहजादा जलाल खाँ को अपने साथ लेना चाहता था जो शिविर में ही रह

1• तारीखे फरिश्ता, पृ0-306, तथा तबकाते अकबरी, पृ0- 304

2• गुलशने इब्राहिमी, 309

3• वही

4• वही तथा तबकाते अकबरी भाग-1, पृ0 305

5• वही

रह गया था ।[1] उसने किसी व्यक्ति को उसे बुलाने भेजा तथा स्वयं रुकना उचित न समझकर आगे बढ़ गया और वह बाग मोड़ पर कन्नौज की ओर रवाना हुआ ।[2] जहाँ पहले शहजादा हुसैन खाँ की सेना रुकी थी ।[3] शाहजादा जलाल खाँ ने वहाँ पहुँचकर सुल्तान बहलोल लोदी की सेना को ही शाहजादा हुसैन की सेना समझ कर उस तरफ बढ़ गया और तुरन्त बन्दी बना लिया गया।[4] सुल्तान मुहम्मद शाह युद्ध न कर सकने की स्थिति समझकर कन्नौज की ओर रवाना हो गया ।[5] सुल्तान बहलोल ने गंगा तट तक उसका पीछा किया और उसकी कुछ सम्पत्ति व असबाब क भी अपने अधिकार में कर लिया।[6]

इस बीच बीबी राजी ने अमीरों की सलाह से हुसैन खाँ को सिसिंहासनारूढ किया[7] तथा सुल्तान मुहम्मद से छुटकारा पाने का भी निश्चय

- -

1. तबकाते अकबरी, भाग-1, पृ0- 305 तथा फरिश्ता, पृ0-309
2. वही
3. वही
4. तबकाते अकबरी, भाग-1 पृ0- 305
5. तारीखे फरिश्ता, पृ0- 309
6. गुलशने इब्राहिमी, पृ0 - 309
7. वही तथा अब्दुल हलीम, पृ0-29, तथा सलातीने अफगाना, पृ0-15

किया, जब सुल्तान हुसैन शर्की की सेना ने सुल्तान मुहम्मद को घेरा तो उसने धनुष बाण का इस्तेमाल किया[1] परन्तु राजी बीबी ने उसके तरकश के सभी बाणों की नोक निकलवा दी थी, " अत: वह असहाय हो गया । उसने अपनी तलवार खीच ली तथा कई सैनिकों को घायल भी कर दिया परन्तु मुबारक गुंग का एक बाण उसकी ग्रीवा मे लगा और उसकी मृत्यु हो गयी ।[2] सुल्तान महमूद को राय बरेली जिले में डलमऊ में दफन कर दिया गया हुसैन शाह ने उसकी कब्र पर एक मकबरा बनवाया ।[4] सुल्तान मुहम्मद शाह शर्की ने पाँच माह तक शासन किया ।[5]

हुसैन शाह शर्की (1458- 1505 ई0)

सुल्तान मुहम्मद शाह शर्की की मृत्यु के पश्चात सुल्तान हुसैन शाह शर्की की प्रमुख समस्या के रूप में दिल्ली का सुल्तान बहलोल लोदी अभी मौजूद था।

- -

1• तारीखे फरिश्ता, पृ0- 309

2• गुल्शने इब्राहिमी, पृ0 - 309

3• वही तथा तबकाते अकबरी, पृ0-284, तथा सलातीने अफगाना, पृ0-15

4• वही

5• तबकाते अकबरी, 204, तारीखे फरिश्ता, 309 तथा नेल्सन राइट, जिल्द-2 पृ0 - 164

सुल्तान हुसेन शाह ने उससे सन्धि की तथा दोनों सुल्तानों ने चार वर्षों तक युद्ध न करने का निश्चय किया ।[1] सुल्तान हुसेन शाह ने कन्नौज से जौनपुर के लिए प्रस्थान किया तथा कुतुब खाँ लोदी को सम्मान पूर्वक लाये जाने के लिए जौनपुर सन्देश भेजा ।[2] सुल्तान हुसेन शाह ने कुतुब खाँ लोदी को सुल्तान बहलोल लोदी के पास भेज दिया ।[3] जिसने बदले में राज कुमार जलाल खाँ को ससम्मान, उपहारों सहित जौनपुर भेज दिया ।[4]

जौनपुर पहुँचने के पश्चात हुसेन शाह शर्की ने राज्य शान्ति वातावरण स्थापित करने को वरीयता दी । उसने उन अमीरों को भी दण्डित किया जो राजकुमार हसन की मौत के जिम्मेदार थे ।[5]

उड़ीसा के विरुद्ध अभियान - सुल्तान मुहम्मद शाह शर्की के समय में उड़ीसा एक अधीनस्थ प्रदेश बन गया था।[6] परन्तु बाद में वहाँ के शासक ने वार्षिक

1· तारीखे फरिश्ता, पृ0- 300

2· वही ,

3· वही

4· वही

5· वही, भाग-2, पृ0- 601

6· गुल्शने इब्राहिमी, पृ0 - 310

खराज देना बन्द कर दिया था ।[1] समस्त बिपत्वी तत्वों का दमन करने के उद्देश्य से सुल्तान हुसेन शाह शर्की 300000 अश्वारोहियों तथा 1400 हाथियों के साथ उडीसा पर चढ़ाई करी ।[2] इस अभियान के अन्तर्गत सर्वप्रथम उसने तिरहुत के राय को दण्डित किया । तत्पश्चात उड़ीसा राज्य पहुँचा । वहाँ के शासक कपिलेंड ने समर्पण कर दिया और शर्की शासक को तीस हाँथी और सौ घोड़े भेट किये ।[3] अपनी विजय तथा सम्पत्ति प्राप्त कर सुल्तान हुसेन शाह शर्की जौनपुर लौट आया ।[4]

बनारस के किले की मरम्मत :

यहाँ की सुरक्षा से पूर्णत: संतुष्ट न हो सकने के कारण 1465 ई0 में सुल्तान हुसेन शाह शर्की ने बनारस के दुर्ग की मरम्मत करवायी[5] तथा वहाँ दुर्ग में रक्षक सेना भी नियुक्त किया ।

1• गुल्शने इब्राहिमी, पृ0- 310

2• वही

3• तबकाते अकबरी, पृ0 - 284 तथा फरिश्ता, पृ0- 310

4• वही

5• वही

ग्वालियर पर आक्रमण -

1466 - 67 ई0 में सुल्तान हुसेन शाह शर्की ने ग्वालियर के राजा मान सिंह के विरुद्ध एक सेना भेजी ।[1] कुछ समय तक सामना करने के पश्चात ग्वालियर के शासक मान सिंह ने सुल्तान की अधीनता स्वीकार कर ली ।[2]

देहली पर आक्रमण -

सुल्तान बहलोल लोदी और सुल्तान हुसेन शर्की के मध्य चार वर्ष के लिए युद्ध विराम की सन्धि हुयी थी ।[3] इस अवधि का लाभ उठाकर सुल्तान हुसेन शर्की ने अपनी सैनिक क्षमता में अत्यधिक वृद्धि कर ली थी तथा उसे उड़ीसा और ग्वालियर के सफल अभियानों से ख्याति एवं आत्म विश्वास भी प्राप्त हो चुका था । अतः उसने देहली विजय का संकल्प लिया ।[4]

1• तबकाते अकबरी, पृ0 - 284

2• वही

3• तारीखे फरिश्ता, पृ0 - 302

4• तबकाते अकबरी पृ0 - 285 तथा उ0तै0का0भा0, पृ0 - 23

1468 ई0 में सुल्तान बहलोल लोदी को अन्यत्र व्यस्त पाकर इस स्थिति का लाभ उठाने की नियत से सुल्तान हुसैन शाह शर्की ने दिल्ली पर आक्रमण की योजना बनायी । यद्यपि शर्की सुल्तान की साम्राज्यवादी महत्वाकांक्षा बहलोल लोदी के खिलाफ कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त थी परन्तु शमसाबाद के शर्की राज्यपाल जौना खाँ के निष्कासन ने दिल्ली पर आक्रमण करने की सुल्तान हुसैन शाह शर्की की योजना को आवश्यक नैतिक बल भी प्रदान किया ।[1]

जब सुल्तान हुसैन शाह शर्की ने दिल्ली की ओर प्रस्थान किया तो अहमद खाँ मेवाती तथा कोयल के राज्यपाल रुस्तम खाँ, आदि कुछ अफगान अमीरों ने सुल्तान बहलोल लोदी का साथ छोड़कर शर्की सुल्तान से मिल गये ।[2] सुल्तान बहलोल लोदी आक्रमणकारियों का सामना करने के लिए लौट पड़ा और दोनों सेनाओं का चन्दावर के निकट मुकाबला हुआ ।[3] लगभग एक सप्ताह तक युद्ध चलता रहा परन्तु कोई निर्णय नहीं हो सका । पुन: दोनों प्रतिद्वन्दियों

1• डा0 शेफाली चटर्जी ,पृ0 - 123

2• के0एन0निजामी, पृ0 - 13

3• डार्न, पृ0 51, तथा डि0ग0बांदा, जिल्द 21, (इलाहाबाद 1909) पृ0 - 222

के मध्य तीन वर्ष के युद्ध विराम का समझौता हो गया तथा शर्की शासक हुसैन शाह शर्की अपनी राजधानी जौनपुर लौट आया ।[1]

दिल्ली के विरूद्ध अपने प्रथम अनिर्णायक अभियान से लौटने के पश्चात सुल्तान हुसैन शर्की ने अपनी सैन्य शक्ति बढ़ाना प्रारम्भ किया तथा एक तोपखाने का भी संगठन किया । कुछ संश्रित शासकों व समर्थकों को अपनी ओर मिलाने का प्रयास भी किया । बयाना का राज्यपाल अहमद खाँ जिल्वानी उसकी ओर मिल गया तथा बयाना में सुल्तान हुसैन शाह शर्की के नाम का खुत्बा भी पढ़वा दिया ।[2] सुल्तान हुसैन शाह शर्की ने मेवात के अहमद खाँ का भी समर्थन प्राप्त कर लिया ।

इस प्रकार अपनी स्थिति सुदृढ कर सुल्तान हुसैन शर्की ने दिल्ली पर दूसरे आक्रमण की तैयारी की । मलिक शम्स नामक एक लब्ध प्रतिष्ठ अमीर ने सुल्तान को सलाह दी कि वह एक वर्ष और रुके तथा इस बीच जनता का और अधिक समर्थन प्राप्त करने का प्रयास करे तथा सीमाओं पर अपनी तैयारियाँ और

- -

1• गुल्शने इब्राहिमी , पृ0 - 309 तथा मखजन, फो0 - 110 अ

2• वही

तेज कर दे ।[1] सुल्तान हुसैन शाह शर्की की पत्नी इस सुझाव से सहमत नहीं हुई और उसने अपने पति से आग्रह किया कि वह शीघ्र ही उसके पिता अलाउद्दीन आलमशाह के सिंहासन पर अधिकार कर ले ।[2] अतः 1469 ई0 में सुल्तान हुसैन शाह शर्की ने एक सेना जिसमें 1,40,000 अश्वारोही तथा 1400 लड़ाकू हाथी थे, के साथ दिल्ली की ओर कूच किया ।[3]

दिल्ली के सुल्तान बहलोल लोदी ने परिस्थिति की गम्भीरता को महसूस करते हुए विशाल शर्की सेना का सामना करने के लिए मालवा के शक्तिशाली शासक सुल्तान महमूद खलजी का समर्थन प्राप्त करना चाहा ।[4] राजनीतिक सौदेबाजी के तहत सुल्तान बहलोल लोदी ने खलजी शासक को बयाना और उसके अधीनस्थ प्रदेश देने का प्रस्ताव रखा ।[5] किन्तु इसके पूर्व कि यह समझौता कार्यरूप में परिणित होता , 3 मई 1469 ई0 को सुल्तान महमूद खलजी की मृत्यु हो गयी तथा सुल्तान बहलोल लोदी को अपने ही साधनों पर निर्भर करना पड़ा।[6]

---

1. वाकयात, फो0- 4 ब,5 अ , ब
2. अब्दुल हक, तारीखे हक्की, फो0 - 35 ब
3. तबकाते अकबरी, पृ0 - 532, तथा ब्रिग्स, जिल्द-4, पृ0 218
4. वही
5. रिजवी , उ0तै0 का0भा0, जिल्द-2, पृ0 91
6. वही, जिल्द - 2, पृ0 92

रास्ते में स्थित प्रमुख स्थानों जैसे कोयल और बुंलन्दशहर पर अधिकार करते हुए सुल्तान हुसैन शाह शर्की यमुना के किनारे पहुँचा तथा यमुना नदी के पूर्वी तट पर अपना शिविर लगाया।[1] दूसरे किनारे पर सुल्तान बहलोल लोदी ने केवल 18000 घुड़सवारों के साथ अपनी सेना के साथ अपना शिविर लगाया।[2] दोनो सेनाओं की सीधी मुठभेड़ में बीच में बह रही यमुना नदी बाधक थी। सुल्तान हुसैन शाह शर्की ने अपने सैनिक दस्तों को निकटवर्ती प्रदेश लूटने का आदेश दिया। इसी समय सुल्तान बहलोल लोदी ने स्थिति का फायदा उठाकर अपनी सेनाओं को यमुना नदी पार करने का आदेश दे दिया। इस अप्रत्याशित किन्तु सुनियोजित आक्रमण से शर्की सेना में भगदड़ मच गयी और सुल्तान हुसैन शाह शर्की को अपना हरम छोड़कर जिसमें मल्किाएं जहाँबीबी खुन्जा भी थी, भागना पड़ा।[3] मलिक समश मार डाला गया।[4] परन्तु सुल्तान बहलोल लोदी ने हरम के साथ सद्‌व्यवहार का परिचय दिया तथा उसने

---

1. रिजवी जिल्द -2, पृ० - 11 तथा बहरूल मव्वाज, पो०-115 ब
2. मीरातुल आलम, पो० - 201 अ
3. वही
4. डा० शेफाली चटर्जी, पृ० 129

मलिक समश का सिर तथा बीबी खुन्जा को सुल्तान हुसैन शाह शर्की के पास भेज दिया ।[1] इस प्रकार सुल्तान हुसैन शाह शर्की की महत्वाकांक्षा तथा साम्राज्य विस्तार की निति के रूप में दिल्ली के इस दूसरे अभियान का विध्वंसात्मक परिणाम सामने आया ।

सुल्तान हुसैन शाह शर्की एक हठीले तथा दृढ़ स्वभाव वाला व्यक्ति था तथा वह किसी भी प्रकार से दिल्ली प्राप्त करने की अपनी महत्वाकांक्षा का गला नहीं घोट सका । 1471 ई० में उसने पुन: तीसरी बार एक लाख अश्वारोहियों तथा एक हजार लड़ाकू हाथियों के साथ दिल्ली के विरूद्ध अभियान सुनिश्चित किया ।[2] दिल्ली का सुल्तान बहलोल लोदी उसका मुकाबला करने के लिए आया, परन्तु युद्ध प्रारम्भ होने के पूर्व उसने शर्की सुल्तान के पास एक विनम्र संदेश भिजवाया , कि वह " उसकी भूल क्षमा कर दे, तथा उसे अकेला छोड दें क्योंकि सम्भव है कि वह किसी समय उनके काम आ जाये ।[3] परन्तु महत्वाकांक्षा की भूख ने हुसैन शाह शर्की को अंधा कर दिया था और उस पर इस निवेदन का

---

1. वाकयात, फो० 5 ब
2. रैंकिग ,जिल्द-1, पृ0 405
3. जौनपुर नामा, फो0 - 8 अ, तथा तबकाते अकबरी, भाग-3, पृ0-268

कोई प्रभाव भी नहीं पड़ा ।[1] तत्पश्चात मजबूर होकर सुल्तान बहलोल लोदी को युद्ध करना पड़ा । तथा बुलन्दशहर के भटवारा नामक स्थान पर दोनों सेनाओं के मध्य युद्ध प्रारम्भ हुआ । अन्त में खाने जहाँ लोदी ने दोनों सुल्तानों के बीच मध्यस्थता का काम किया और सन्धि करवायी ।[2] तत्पश्चात सुल्तान हुसैन शाह शर्की अपनी सेना के साथ इटावा वापस लौट आया ।[3]

अपनी सैनिक तथा आर्थिक क्षति की परवाह किये बगैर दिल्ली राज्य पर अधिकार प्राप्त करने की महत्वाकांक्षा ने सुल्तान हुसैन शाह शर्की को दिल्ली के विरुद्ध चौथी बार अभियान करने के लिए प्रेरित किया । दिल्ली से पच्चीस मील दूर सिखारा के निकट हुए इस युद्ध में वर्षा ने अपनी भूमिका निभायी[4] तथा सुल्तान हुसैन शर्की की महात्वाकांक्षा एक बार पुन: अधूरी रह गयी और उसे सुल्तान बहलोल लोदी से सन्धि करके इटावा लौटना पड़ा ।[5]

---

1. गुल्शने इब्राहिमी , पो0-213 -ब, मखजन , पो0- 110-ब
2. हफ्त-ए-गुल्शन, पो0 116 ब
3. डा0 शेपाली चटर्जी, पृ0 132
4. ब्रिग्स, जिल्द -1, पृ0 -325 तथा निजामतुल्ला, पृ0 - 43
5. डा0 शेपाली, चटर्जी, पृ0 - 132

1478 ई0 सुल्तान अलाउद्दीन आलम शाह की बदायूँ में मृत्यु हो गयी ।[1] सुल्तान हुसेन शाह अपने श्वसुर की मृत्यु पर संवेदना प्रकट करने के उद्देश्य से बदायूँ गया था परन्तु उसने बदायूँ पर अधिकार करने का निश्चय कर लिया । उसने तातार खाँ के पुत्र मुबारक खाँ को सम्भल से मार भगाया और वहाँ पर भी अपना अधिकार कर लिया ।[2]

अभी भी सुल्तान हुसेन शाह शर्की की महत्वाकांक्षा पूरी न हो सकी थी, इसलिए बदायूँ और सम्भल जैसे राज्यों को अपने राज्य में मिलाने के पश्चात सुल्तान हुसेन शाह शर्की ने पाँचवी बार दिल्ली के विरुद्ध प्रस्थान किया तथा फरवरी - मार्च 1478 ई0 में यमुना नदी के किनारे सम्भल में कच्छ के घाट के निकट अपना शिविर स्थापित किया ।[3] सुल्तान बहलोल लोदी अति शीघ्र दिल्ली से रवाना हुआ । इस युद्ध में सुल्तान हुसेन शाह शर्की की विजय हुई । यद्यपि सुल्तान बहलोल लोदी को पराजित होना पड़ा परन्तु इतनी कठिनाई से प्राप्त होने वाली यह विजय सुल्तान हुसेन शाह शर्की के नसीब में

1· मुन्तखब, फो0 102 अ

2· रैकिंग जिल्द,-1 पृ0 - 406 तथा ब्रिग्स जिल्द -1, पृ0 - 325

3· मुन्तखब, फो0 - 102 अ,ब तथा मखजन, फो0 - 111 ब

नहीं थी । क्योंकि कुतुबखाँ लोदी की छल युक्त योजनाने उसकी आशाओं पर तुषारापात किया । कुतुब खाँ लोदी ने सुल्तान हुसेन शाह शर्की के पास उसकी माता बीबीराजी का अपने प्रति स्नेह उल्लखित करते हुए यह संदेश भेजा कि सुल्तान हुसेन दिल्ली न लूटे ।[1] सुल्तान हुसेन शाह शर्की सुल्तान बहलोल लोदी से सन्धि करने को तैयार हो गया । सन्धि के अनुसार गंगा नदी के पूर्वी क्षेत्र पर सुल्तान हुसेन का तथा पश्चिमी क्षेत्र पर सुल्तान बहलोल लोदी का शासन होना निश्चित हुआ ।[2]

शर्की सुल्तान हुसेन शाह शर्की जिसने बार - बार सन्धियों और युद्ध विरामों की अवहेलना की थी, को इस बार अपना बचन भंग करने के परिणाम स्वरूप भीषण आघात झेलना पड़ा । एक रात्रि सुल्तान हुसेन शाह शर्की ने एक भव्य दावत का आयोजन किया था। जहाँ उपस्थित कुतुब खाँ लोदी ने दावत की प्रशंसा करते हुए यह सुझाव दिया कि यदि यह आयोजन नदी के भव्य किनारे पर हो तो और अधिक आकर्षक हो जायेगा । सुल्तान हुसेन शाह शर्की

1• निजामी, पृ0- 14,

2• तबकाते अकबरी, भाग - 1 पृ0- 309 तथा फरिश्ता, भाग-2, पृ0 - 602

ने कुतुब खाँ लोदी के इस प्रस्ताव का अनुमोदन किया तथा दाक्त का स्थान बदलकर नदी के किनारे कर दिया ।[1] इसी समय पहले से इन्तजार कर रही सुल्तान बहलोल की सेना ने सुल्तान हुसेन शाह शर्की पर आक्रमण कर दिया ।[2] सुल्तान हुसेन शाह शर्की विजय जश्न पूर्ण विनाश में परिवर्तित हो गया तथा उसने अनुभवी सेनानी बन्दी बना लिये गये । उसकी साज - सज्जा सामग्री और खजाना लूट लिया गया ।[3] इस आपाधापी में सुल्तान हुसेन शाह शर्की किसी प्रकार भाग निकला । यद्यपि सुल्तान बहलोल ने उसका पीछा किया । सुल्तान हुसेन शाह शर्की की पत्नी बीबी खुन्जा पुन: बन्दी बना ली गयी ।[4] सुल्तान बहलोल लोदी ने शीघ्रता से कम्पिल ,पटियाली, कोयल ,शमसाबाद, मारहरा और जरारी पर अधिकार कर लिया ।[5] अत्यन्त कठिन परिस्थिति होने पर सुल्तान हुसेन शाह शर्की वापस आया और फर्रुखाबाद से 16 मील दूर रझोहर गाँव के निकट सुल्तान बहलोल लोदी से युद्ध किया । सुल्तान हुसेन शाह शर्की बड़ी बीरता

---

1. निजामी, पृ0 15
2. तबकाते अकबरी, भाग - 1 , पृ0 310
3. निजामी, पृ0 - 15
4. वही
5. वही

से लड़ा और सुल्तान बहलोल लोदी सन्धि करने पर मजबूर हो गया ।[1] दोनों के बीच पुरानी सीमाओं के आधार पर सत्ता निर्धारण हुआ ।[2]

परन्तु सुल्तान हुसेन शाह शर्की आसानी से मानने वाला व्यक्ति न था और वह अपने वचन पर दृढ़ न रहा सका । 885 हि0/ 1480-81 ई0 में एक बार पुन: अपनी पत्नी के उकसावे में आकर उसने छठी बार दिल्ली के विरुद्ध अभियान के लिए कूच किया ।[3] दिल्ली की सेना ने उसे इटावा जिले में सकीट से 10 मिल उत्तर पूर्व सोनहार नामक स्थान पर रोका और सुल्तान हुसेन शाह शर्की को करारी हार का सामना करना पड़ा ।[4] सुल्तान बहलोल लोदी ने एक बार पुन: उसकी साज- सज्जा सामग्री और खजाना लूट लिया । सुल्तान हुसेन रापडी चला आया और बहलोल लोदी धूपामऊ मेंरहा ।[5]

सुल्तान हुसेन और सुल्तान बहलोल दोनों अभी युद्ध के परिणाम से पूर्णतया सन्तुष्ट नही हुए थे । 1482 ई0 में रापडी के निकट सिरसा नामक स्थान पर एक

---

1. इलियट, जिल्द-5, पृ0 75, बिग्स जिल्द -1, पृ0 326
2. वही
3. मखजन, फो0 - 112 ब
4. वाकयात, फो0-4 ब तथा डि0ग0एटा, जिल्द-12, पृ0-220
5. तबकाते अकबरी, भाग-1, पृ0-310, तथा फरिश्ता, भाग-1, पृ0 - 325-26

और भीषण युद्ध हुआ । इस युद्ध में शर्की सुल्तान हुसेन शाह शर्की को बुरी तरह पराजित होकर लड़ाई के मैदान से भागना पड़ा ।[1] यमुना नदी पार करते समय उसके परिवार के कुछ सदस्य डूब गये । अत्यन्त दीन-हीन अवस्था के कारण सुल्तान हुसेन शाह शर्की ने अपने अधीनस्थ सरदार ग्वालियर के राजा से सहायता माँगी । यह क्षेत्र डाकुओं और लुटेरों का था, अत: आगरा जिले में चम्बल के निकट हटकंठ नामक स्थान पर भदौरिया लुटेरों ने उसका शिविर लूटा।[2] तत्पश्चात राजा कीरत सिंह ने उसे कई लाख रुपये खराज में दिया तथा उसे घोड़े तथा साज सज्जा भी प्रदान किया ।[3] सुल्तान हुसेन गंगा नदी के तट पर रन गाँव में ठहरा ।[4] इधर सुल्तान बहलोल लोदी उससे निपटने के लिए रन गाँव की तरफ बढ़ा । चूँकि दोनों सेनाओं के बीच गंगा नदी थी इसलिए कई महीनों तक निष्फल लड़ाइयाँ होती रहीं । उन्नाव जिले की तिरवा तहसील के डौडिमा खेरा परगने में स्थित बक्सर के राज्यपाल तिलोक चन्द्र की सहायता से सुल्तान

- -

1• निजामी, दिल्ली सल्तनत, भाग-2, पृ0-15 तथा डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0 137

2• ए0हलीम, हिस्ट्री आफ द लोदी सुल्तान्स, पृ0- 42, फुटनोट - 1

3• मुन्तखब, फो0- 103 अ, तथा रैंकिंग जिल्द -1, पृ0 - 408

4• निजामी, पृ0 15

बहलोल लोदी नदी पार करने में सफल हो गया।[1] तत्पश्चात सुल्तान को भट्टा (रीवां) में शरण लेनी पड़ी । सुल्तान बहलोल ने उसका पीछा किया परन्तु सुल्तान हुसैन जौनपुर जाने की बजाय कन्नौज चला गया ।[2] परन्तु सुल्तान बहलोल उसका पीछा करता रहा और 1481-82 ई0में काली नदी के तट पर युद्ध हुआ जिसमें सुल्तान हुसैन शाह शर्की को एक बार पुन: पराजय का सामना करना पडा।[3]

उसकी पत्नी बीबी खुन्जा एक बार फिर सुल्तान बहलोल लोदी द्वारा बन्दी बनायी गयी परन्तु उसे पुन: मुक्ति प्रदान कर दी गयी ।[4]

सुल्तान बहलोल लोदी का जौनपुर पर अधिकार -

888 हि0/1483-84 ई0 में विजयी हौसलें के साथ सुल्तान बहलोल लोदी आगे बढा तथा जौनपुर पर अधिकार कर वहाँ अपने सिक्के चलवाये ।[5]

1· तबकाते अकबरी, भाग-1, 311, "तारीखे खाने जहानी "
2· निजामी ,पृ0 - 15
3· वही
4· तबकात, जिल्द, पृ0 - 352
5· जे0ए0एस0बी0, पृ0 -1922, न्यू मिस्मेटिक सप्लीमेन्ट, भाग -36, पृ0-17

इसके पश्चात जौनपुर तथा उसके निकटवर्ती प्रदेशों में सैनिक चौकियाँ स्थापित की गयीं। मुबारक खाँ नूहानी को नगर का अधिकारी नियुक्त किया गया।[1] परन्तु हुसेन शाह शर्की इतनी सरलता से यह सब स्वीकार करने वाला व्यक्ति नहीं था। उसने पुन: अपनी अस्त - व्यस्त सेना को एकत्र किया तथा जौनपुर की ओर प्रस्थान किया।[2] इस अचानक हमले के कारण लोदी राज्यपाल मुबारक खाँ नूहानी को भागकर गंडक नदी के बाये किनारे पर गोरखपुर जिले में स्थित मिझाली नामक स्थान पर शरण लेनी पड़ी।[3] यहाँ पहले से ही बहलोल लोदी द्वारा सैनिक छावनी स्थापित थी। सुल्तान बहलोल लोदी ने अपनी घिरी हुई सेना के सहायतार्थ अपने पुत्र बारबक शाह के नेतृत्व में एक सेना भेजी।[4] बाद में सुल्तान बहलोल लोदी ने स्वयं जौनपुर की तरफ कूच किया, जिसके परिणामस्वरूप हुसेन शाह शर्की को बिहार की तरफ भागना पड़ा।[5] यद्यपि हुसेन शाह शर्की का मुस्तैदी के साथ पीछा किया गया परन्तु वह सुल्तान बहलोल लोदी के सैनिकों से

- -

1. जौनुपर नामा, फो0 - 7 ब
2. निजामी, पृ0 - 16
3. वही, तथा डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0 - 140
4. मुन्तखब, फो0 - 103 ब
5. तबकाते अकबरी, भाग -1, पृ0 = 312, तथा फरिश्ता, भाग-1, पृ0-327

बच निकला । अन्त में पराजित सुल्तान हुसैन शाह शर्की के प्रति सहानुभूति एवं उदारता दर्शाते हुए सुल्तान बहलोल लोदी ने उसे मिर्जापुर जिले में गंगा नदी के किनारे स्थित चुनार के निकट कुछ क्षेत्र दे दिया ।[1] यह क्षेत्र पहले कभी उसकी जागी थी । सुल्तान बहलोल लोदी ने अपने पुत्र बारबक शाह को जौनपुर में सिंहासनारूढ किया।[2] इस प्रकार जौनुपर की सल्तनत से शर्की राज्य समाप्त हो गया तथा वहाँ लोदी शासक ने अपने सिक्के प्रचलित किये ।[3] सभी शर्की प्रदेशों पर अधिकार कर लिया गया तथा वहाँ शासन करने के लिए अफगान अधिकारियों की नियुक्ति कर दी गयी ।[4]

हुसैन शाह शर्की अपनी प्रकृति के अनुरूप अभी भी शान्त नहीं हुआ तथा जौनपुर से अफगानों की सत्ता उखाड फेंकने के उद्देश्य से एक बार पुन: प्रयत्न किया । जिसके परिणामस्वरूप लोदी शासक बारबक शाह को आत्मसमर्पण करने के लिए विवश होना पड़ा परन्तु सुल्तान बहलोल लोदी पुन: वहाँ पहुँच गया और

1• निजामी ,पृ0 - 16

2• तारीखे दाऊदी, फो0-20 अ , तथा मखजन फो0 - 115 ब

3• मखजन , फो0 - 115 अ

4• निजामी, पृ0 - 16

स्थिति अपने नियंत्रण में करने के उद्देश्य से अपनी सेना को दो दलों में विभाजित किया । एक का नेतृत्व अहमद खाँ तथा कुतुब खाँ लोदी को दिया, जिसमें पन्द्रह हजार अश्वारोही सैनिक थे तथा दूसरे दल का नेतृत्व दौलत खाँ लोदी के सुपुर्द किया जिसमें पाँच हजार अश्वारोही सैनिकों की संख्या थी ।[1] एक नीति के तहत घात लगाकर अचानक आक्रमण करने की योजना बनायी गयी। जिसके अन्तर्गत सेना के दूसरे दल को शर्कियों से लड़ना था तथा प्रथम दल को शर्की सेना को अस्त व्यस्त करने के लिए बाद में रणक्षेत्र में आना था । इस सुनियोजित एवं व्यवस्थित आक्रमण नीति के कारण हुसैन शाह शर्की एक बार फिर पराजित हुआ और उसे भागकर बिहार में शरण लेनी पड़ी । पुनः बारबक सिंहासनारूढ हुआ ।[2]

1488-89ई० में सुल्तान बहलोल लोदी का देहावसान हो गया तथा सुल्तान सिकन्दर लोदी दिल्ली के सिंहासन पर बैठा ।[3] परन्तु कुछ अमीर बारबक

- -

1· डा० शेफाली चटर्जी, पृ० 141

2· वही

3· तारीखे दाऊदी, फो० - 34 ब

शाह को दिल्ली के सिंहासन पर बैठाना चाहते थे । जिसके परिणामस्वरूप सुल्तान सिकन्दर लोदी तथा बारबक शाह के मध्य अर्न्तद्वन्द प्रारम्भ हो गया । इसी समय बारबक शाह ने स्वयं को स्वतन्त्र घोषित कर दिया।[1] यह समय निर्वासित सुल्तान हुसैन शाह शर्की के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण था । हुसैन शाह शर्की ने बारबक शाह का ध्यान दिल्ली की ओर मोडने तथा जौनपुर में अपनी सत्ता पुर्नगठित करने का एक अच्छा सुअवसर समझा ।[2] परन्तु सुल्तान सिकन्दर लोदी ने इन विषम परिस्थितियों का डटकर दृढ़ता के साथ मुकाबला किया । सुल्तान सिकन्दर लोदी ने एक बार फिर बारबक शाह का दमन करने के पश्चात पुन: उसे जौनपुर में स्थापित करना अधिक नीति सम्मत समझते हुए बारबक शाह को पुन: जौनपुर में स्थापित किया ।[2]

यद्यपि हुसैन शाह शर्की जौनपुर से निकल चुका था और शर्की सत्ता ध्वस्त हो चुकी थी परन्तु प्रदेश के जमींदार व सरदार अभी भी हुसैन शाह

- -

1• तारीखे दाऊदी, फो0 45-ब, 46 -अ,

2• के0एन0निजामी, पृ0 - 16

शर्की के प्रति निष्ठावान थे । अतः हुसेन शाह शर्की ने जीवन पर्यन्त अपने खोये हुए राज्य को प्राप्त करने के प्रति आशान्वित रहा तथा समय - समय पर संघर्ष करता रहा । हुसेन शाह शर्की के प्रति निष्ठावान सरदारों में शक्तिशाली राजपूत सरदार बचगोती राजपूत जोगा था ।[1] जिसने लोदी सत्ता के अन्तर्गत आने वाले क्षेत्रों में अराजकता व अव्यवस्था उत्पन्न कर दिया था तथा इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से हुसेन शाह शर्की का समर्थन किया था ।[2] जौनपुर के शासक बारबक शाह तथा सुल्तान सिकन्दर लोदी को इस प्रकार से परेशान करने के पश्चात वह सुल्तान हुसेन,शर्की की ओर चला और उससे जौंद के दुर्ग में आकर मिला ।[3] सुल्तान सिकन्दर लोदी ने हुसेन शाह शर्की के पास सन्देश भिजवाया कि या तो वह उसके अपराधी राजपूत जोगा को उसे समर्पित कर दे अथवा उसकी ओर से उसे दण्डित करें ।[4] सुल्तान सिकन्दर के इस संदेश के प्रति उत्तर में हुसेन शाह शर्की ने यह उत्तर दिया कि " जोगा मेरा नौकर है । तुम्हारा पिता

- -

1• सलातीने अफगाना, पृ0-38, इलियट ,जिल्द-4, पृ0-347

2• निजामी, पृ0 - 16

3• वही

4• सलातीने अफगाना - पृ0- 39

एक सैनिक मात्र था, जिससे मैं तलवार तौल रहा था । मेरे लिए तुम एक मूर्ख बालक हो । यदि तुम बनवास करोगे तो मैं अपनी तलवार से नहीं, अपने जूतों से तुम्हारी धुनाई करूँगा ।[1] इस उत्तर के बाद सिकन्दर लोदी के पास हुसेन शाह शर्की के विरुद्ध सैनिक कार्यवाई के अलावा और कोई विकल्प नहीं रह गया था । अत: 1492 ई0 में कटघर के निकट दोनों सेनाओं का मुकाबला हुआ ।[2] इस युद्ध में हुसेन शाह शर्की बुरी तरह पराजित हुआ तथा एक बार पुन: उसे भागकर बिहार में शरण लेनी पड़ी ।[3] परन्तु कुछ समय तक चुनार, चंदेरी और बिहार उसके अधिकार में रहा ।

सुल्तान सिकन्दर लोदी जौनपुर से वापस चला आया । परन्तु एक बार पुन: स्थायी सरदार बारबक शाह के विरुद्ध उठ खड़े हुए और उसे जौनपुर से मार भगाया । सुल्तान सिकन्दर लोदी इसे बारबक शाह की अयोग्यता मानते हुए उसे बन्दी बना लिया ।[4]

- -

1• तारीखे दाऊदी, फो0 46 ब,

2• तारीखे दाऊदी, फो0 - 47 अ

3• तारीखे दाउदी, फो0 - 47 अ

4• निजामी, पृ0 17 तथा इलियट जिल्द -5, पृ0 76

अब सुल्तान सिकन्दर लोदी को यह पूर्ण विश्वास हो गया था कि जब तक हुसेन शाह शर्की बिहार में है, जौनपुर में शान्ति स्थापित होना असम्भव है। इसलिए अब वह हुसेन शाह शर्की के दुर्गों की तरफ बढ़ा।[1] सुल्तान सिकन्दर लोदी के आदेशानुसार मुबारक खाँ ने चुनार घेर लिया। दुर्ग के शर्की अधिकारी ने हुसेन शाह शर्की से सहायता माँगी। तत्पश्चात हुसेन शाह शर्की ने एक राजपूत सरदार उसकी सहायता के लिए भेजा। 1493 ई0 में चुनार के युद्ध में सुल्तान सिकन्दर लोदी की सेनाएं पराजित हुयी और मुबारक खाँ बन्दी बना लिया गया।[2]

तत्पश्चात सुल्तान सिकन्दर लोदी ने स्वयं चुनार की ओर प्रस्थान किया किन्तु उसे कोई सफलता नहीं मिली। फिर वह भट्टा के शासक भेद की तरफ मुखातिब हुआ, जिसने मुबारक खाँ को बन्दी बना रखा था।[3] भट्टा का राजा भेद घबरा गया तथा उसने मुबारक खाँ को रिहा कर स्वयं हुसेन शाह शर्की के

- -

1· निजामी, पृ0-17, तथा इलियट जिल्द 5, पृ0 - 76

2· डि0गा0मिर्जापुर, जिल्द-27, (इलाहाबाद, 1911), पृ0- 333- 34

3· निजामी, पृ0- 17 तथा डार्न, पृ0 - 57-58

पास पहुँच गया । 1494 ई0 में सुल्तान सिकन्दर लोदी ने पुन: थट्टा के राजा भेद के विरुद्ध कूच किया तथा उसे पराजित कर दिया ।[1] तत्पश्चात सुल्तान सिकन्दर लोदी ने पफूंद की ओर प्रस्थान किया जो थट्टा के अधीन था।[2] इस अभियान में सुल्तान सिकन्दर लोदी की सेना को अनेक कठिनायाइं का सामना करना पड़ा तब परिवहन की बदतर व्यवस्था एवं मार्गों की खराब स्थिति के कारण सेना के नब्बे प्रतिशत घोड़े नष्ट हो गये ।[3] इधर हुसेन शाह शर्की के समर्थकों ने उसे संदेश भेजा कि वह अपना खोया हुआ राज्य पुन: प्राप्त करने का प्रयास करे । यह संदेशपाकर सुल्तान हुसेन शाह शर्की तुरन्त चल पडा।[4] मार्ग में राजपूत तथा अन्य सरदार भी उससे मिल गये । 1494 ई0 सुल्तान सिकन्दर लोदी ने बनारस से छत्तीस मील दूर सुल्तान हुसेन शाह शर्की की सेना का सामना किया । एक बार पुन: भयंकर युद्ध हुआ तथा हुसेन शाह शर्की बुरी तरह पराजित हुआ ।[5] हुसेन शाह शर्की भट्टा प्रदेश की ओर भागा ।[6] परन्तु

- -

1· ब्रिग्स, जिल्द - 1, पृ0 - 333

2· टवाइलाइट, पृ0 - 170, फुटनोट- 47

3· तबकाते अकबरी, भाग-1, पृ0- 318-319

4· मखजन, फो0 121 अ

5· फरिश्ता, जिल्द-1, पृ0 181

6· निजामी, पृ0 - 17

सुल्तान सिकन्दर लोदी ने उसका पोक्षा किया । इस विषम परिस्थिति में सुल्तान हुसेन शाह शर्की ने बिहार का किला मलिक कंदू के अधिकार में दिया तथा स्वयं कुलगाँव (बिहार के भागलपुर जिले में) की ओर चला जो लखनौती के अधीन था ।[1] लखनौती के शासक सुल्तान अलाउद्दीन हुसेन शाह ने उसका स्वागत किया तथा उसे समस्त सुविधा प्रदान की एवं कुलगाँव परगना भी प्रदान किया । वहाँ पर हुसेन शाह शर्की को अपने सिक्के चलाने का भी अधिकार प्रदान किया गया ।[2]

1495 ई० में सुल्तान सिकन्दर लोदी ने मलिक कंदू के विरूद्ध एक सेना भेजी । मलिक कंदू दुर्ग छोड़कर भाग गया तथा दुर्ग पर सुल्तान सिकन्दर लोदी का अधिकार हो गया तथा मुबारक खाँ नूहानी को दुर्ग की सुरक्षा का कार्य भार सौंप दिया गया ।[3] तत्पश्चात सुल्तान सिकन्दर लोदी ने बंगाल के शासकके विरूद्ध अभियान संचालित करने की योजना बनायी , क्योंकि बंगाल के शासक ने शर्की

1• तबकाते अकबरी, भाग-1, पृ0 - 319

2• अफसानाए शाहान, पृ0 - 29बी

3• निजामी, पृ0 - 17

शासक को शरणदे रखी थी ।[1] सुल्तान सिकन्दर ने सीमा के अनेक महत्त्वपूर्ण स्थानों को अपने अधिकार में लेकर अपनी स्थिति मजबूर कर ली । जिसके परिणाम स्वरूप अलाउद्दीन हुसेन शाह उसकी गतिविधियों को चुनौती नहीं दे सका । बंगाल के शासक ने अपने पुत्र दनियाल के नेतृत्व में एक सेना लोदी सुल्तान से मुकाबला करने के लिए भेजा । इधर दनियाल के विरूद्ध सुल्तान सिकन्दर लोदी ने महमूद खाँ लोदी तथा मुबारक खाँ नूहानी के नेतृत्व में सेना भेजा । दोनों सेनाये पटना जिले में बाढ के निकट एक दूसरे के सामने हुयी, परन्तु इसके पूर्व की युद्ध आरम्भ होता सन्धि वार्ता आरम्भ हो गयी तथा दोनों पक्षों ने एक दूसरे की अखण्डता का सम्मान करने तथा एक दूसरे के शत्रुओं को शरण न देने का फैसला किया ।[2]

तत्पश्चात सुल्तान सिकन्दर लोदी जौनपुर लौट आया तथा वहाँ छः मास तक विश्राम किया । उसने सभी शर्की भवनों तथा स्मारकों को नष्ट कर दिया । वह शर्कियों द्वारा निर्मित मस्जिदों को भी खण्डित करने जा रहा था

- -

1• तबकाते अकबरी, भाग-1, पृ0- 320

2• वही

परन्तु उल्मा ने सुल्तान सिकन्दर लोदी से इस सीमा तक विनाश न करने को कहा ।[1]

शर्की सल्तनत की सत्ता जिस प्रकार से अफगानों द्वारा नष्ट की जा रही थी उससे सुल्तान हुसेन शाह शर्की बहुत दुखी हुआ और बिलम्ब किये बिना उसने अपना सिंहासन प्राप्त करने का एक और प्रयास किया । बंगाल के शासक अलाउद्दीन हुसेन ने उसे सैनिक कार्यवाही स्थगित करने की सलाह दिया ।[2] किन्तु 1500 ई० में हुसेन शाह शर्की पुन: आगे बढ़ा तथा बिहार पहुँचकर वहा के दुर्ग को घेर लिया ।[3] अफगान राज्यपाल दरिया खाँ ने सुल्तान सिकन्दर से मदद माँगी । इस बार सुल्तान हुसेन शाह शर्की ने अपना यह अन्तिम अवरोध बड़ी दृढ़ता से कार्यान्वित किया तथा एक ही रात में उसने दुर्ग के चारों तरफ की खाई का पानी निकलवा दिया ।[4] परन्तु दरिया खाँ की सहायता के लिए

- -

1• निजामी; पृ० - 17

2• वही

3• अफसानाए शाहान, पृ० - 30 अ

4• वही ।

नौ हजार अश्वारोहियों की सेना के आ जाने से सुल्तान हुसेन शाह शर्की की स्थिति संकटपूर्ण हो गयी तथा उसे निराश होकर कुलगाँव लौटना पड़ा ।[1] पूर्णतया निराशा तथा कुण्ठा से ग्रसित सुल्तान हुसेन शाह शर्की की कुलगाँव में 911 हि0/ 1505 ई0 में मृत्यु हो गयी ।[2] उसके साथ ही शर्की वंश के अन्तिम अवशेष भी समाप्त हो गये ।

1• निजामी, पृ0 - 18

2• डि0ग0 जौनपुर, पृ0 - 164, तथा टवाइलाइट, पृ0 -151 फुटनोट-111

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

सामाजिक - इतिहास

भाग - ।

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

"सामाजिक इतिहास"

भाग - 1

प्राचीन काल से ही भारतीय समाज विभिन्न जातियों एवं समुदायों के सम्मिश्रण का केन्द्र रहा है । मध्य कालीन भारत में इस्लामी संस्कृति का तीव्रगति से विस्तार होने के कारण इस युग में मुस्लिम समुदाय ने भारतीय समाज में अपना एक विशेष स्थान निर्धारित किया वही हिन्दू समाज अपनी पुरानी संस्कृति एवं सामाजिक परम्पराओं के तहत निरन्तर अपना स्थान बनाये रखने में सफल रहा । यद्यपि मुस्लिम काल में हिन्दू समाज को प्रतिकूल परिस्थितियों के दौर से गुजरना पड़ा, परन्तु हिन्दू समाज ने मुस्लिम समाज के साथ सामंजस्य स्थापित करते हुए अपनी परम्पराओं को जीवित रखा । मुस्लिम समाज के विस्तार एवं विकास के परिणामस्वरूप पूर्व भारत में इस नये सम्मिश्रित समाज के अद्भुत उदाहरण के रूप में जौनपुर राज्य का समाज है, जिसके अध्ययन की सुलभता के लिए ही हम इसे हिन्दू व मुस्लिम वर्गों में विभक्त कर रहे हैं ।

हिन्दू समाज - हिन्दू समाज की एक प्रमुख विशेषता "वर्ण - संस्था" है परन्तु हिन्दू समाज में प्रारम्भ से ही जातीय निर्धारण व्यक्ति के जन्म पर निर्भर है।[1]

1· दि लिगेसी आफ इण्डिया, सं0, जी0टी0गारेट, आक्सफोर्ड, 1962, पृ0-124

प्रसिद्ध यात्री अलबरूनी ने मध्य कालीन हिन्दू समाज के विभिन्न सामाजिक वर्गों का वर्णन किया है । जाति प्रथा के सम्बन्ध में अलबरूनी की व्याख्या निम्नवत है - " हिन्दू अपनी जाति को वर्ण अथवा रंग कहते हैं तथा वंशावली की दृष्टि से उन्हें " जातक " अर्थात " जन्म " कहते हैं । प्रारम्भ से ही ये चार जातियाँ (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, एवं शूद्र) हैं ।[1]

प्राचीन काल से ही ब्राह्मणों का हिन्दू समाज में उच्चतम स्थान निर्धारित है । प्राचीन हिन्दू विधि दाता मनु के अनुसार - " अपनी श्रेष्ठता के कारण , अपनी उत्पत्ति की विशिष्टता के कारण, प्रतिबन्धित नियमों के पालन के कारण तथा अपने विशिष्ट संस्कारों के कारण ब्राह्मण सभी वर्णों का प्रभु हैं ।"[2]

1· अलबरूनीज इण्डिया, ।(सचाउ) पृ० - 100

2· दि लाज आफ मनु, अध्याय 10, श्लोक - 3, तथा सेक्रेड बुक्स आफ दि ईस्ट भाग- 25, (एफ० मैक्समुलर द्वारा सम्पादित) पृ० - 402 अध्याय --1, श्लोक - 98-100

12वीं शताब्दी के अन्त तक ब्राह्मण समाज प्रादेशिक आधार पर विभाजित हो चुका था तथा उनमें जातियाँ तथा उपजातियाँ स्थापित हो रही थीं ।[1] इसी दौरान पूर्वी भारत में निम्न जाति के ब्राहमणों की संख्या में वृद्धि हुयी । इस काल में उच्च वर्ग के पुरोहितों ने निम्न जाति के ब्राह्मणों से दूरी बनाना प्रारम्भ कर दिया तथा साधारण पुरोहितों व गाँव के पुरोहितों में भेद-भाव उत्पन्न हो गया । ये ब्राहमण कोई भी व्यवसाय कर सकते थे । ये अपने कार्यों के साथ - साथ खेती कर सकते थे तथा योद्धा, व्यापारी आदि भी बन सकते थे ।[2] परन्तु ब्राहमणों अधिकांशतः अध्यापन का कार्य करते थे ।[3] इनको प्रायः विप्र कहकर भी सम्बोधित किया जाता था ।[4] इस प्रकार इस काल में अन्तर्प्रादेशिक एवं व्यवसायिक गतिशीलता की झलक मिलती है ।

1· वी०एन०एस०यादव [illegible], 19

2· वही

3· कबीर ग्रन्थावली , दोहा - 10, पृ० - 62

4· मृगावती, दोहा-1, पृ०-1, मधुमालती, दोहा-1, पृ०-81 तथा पृ० - 102, 438

13वीं तथा 14वीं शताब्दी में हिन्दू समाज की स्थिति यथावत विद्यमान रही । मुसलमानों के आगमन के पश्चात ही परिवर्तनीय हिन्दू समाज में पुरानी मान्यताएं व परम्परायें समाप्त होती रही तथा वर्ण व्यवस्था नष्ट होने लगी ।[1] क्षेत्रीय शासकों के पतन के साथ ही ब्राहमणों की स्थिति निरन्तर दयनीय होती चली गयी ।[2] इसी काल में हिन्दुओं ने व्यवसायिक प्रवृत्ति के चलते अनेक व्यवसायों को अपनाया ।

क्षत्रिय -

प्राचीन समाज की व्यवस्था के अन्तर्गत अगला स्थान "क्षत्रिय" को प्राप्त था जिनके विषय में यह धारणा थी कि इनकी उत्पत्ति ब्रह्मा की बाहु तथा उनके कन्धों से हुयी है ।[3] समाज में क्षत्रियों का स्थान ब्राहमण से ज्यादा नीचे नहीं था।[4] समाज में क्षत्रियों का कार्य प्रजा पर शासन करना तथा उनकी रक्षा करना था ।[5] दण्ड विधान का प्रयोग राजाओं (क्षत्रियों)

1• वी0एन0एस0यादव , पृ0- 19

2• वही, पृ0- 24

3• अलबरूनीज इण्डिया (सचाउ) पृ0 - 101

4• वही,पृ0-136,कबीर ग्रन्थावली,पृ0 - 376, दो0 11

5• वही,पृ0-161-62

के निरीक्षण में होता था ।[1] परन्तु मुसलमानों के आगमन के पश्चात से ही समाज में आन्तरिक ढांचे में परिवर्तन होने लगा ।[2] जैसे - जैसे तुर्कों का बढ़ता गया एवं क्षत्रियों की पराजय व उनके राज्य समाप्त होने लगे, वैसे-वैसे हिन्दू समाज की पुरानी मान्यतायें व परम्परायें ही नहीं अपितु वर्णव्यवस्था भी, जो कि समाज का मुख्य आधार थी, नष्ट होने लगी ।[3]

वैश्य -

प्राचीन समाज में वैश्य केवल व्यवसायिक कार्यों को ही करता था तथा उसका यह धर्म होता था कि वह कृषि करें, पशुपालन का कार्य करें तथा ब्राहमणों को उनकी आवश्यकताओं से निवृत्त करें।[4] वैश्य, ब्राह्मण व क्षत्रिय के पश्चात तीसरे स्थान पर थे । प्रारम्भ में वैश्य जातियों तथा उपजातियों में अन्तर था तथा वे शूद्र से भिन्न थे । परन्तु 10वीं शताब्दी के राजनीतिक एवं आर्थिक पतन के कारण वैश्यों की स्थिति परिवर्तित हो हो गयी । उनमें तथा शुद्रों में कोई विशेष अन्तर नहीं रह गया ।[5] परन्तु

- -

1. राधेश्याम , पृ0- 209

2. अलबरूनीज इण्डिया ﴾सचाउ﴿ पृ0 - 136

3. डा0हेरम्ब चतुर्वेदी का अप्रकाशित शोध ग्रन्थ, इ0वि0वि0, पृ0-34-38 ﴾दि सोसायटी आफ नार्थ इण्डिया इन द सिक्सटीज सेन्चुरी एस डिपेक्ट यू0 कन्टम्परी हिन्दी, लिट्रेचर ।

4. बी0एन0एस0यादव ﴾ ﴿, पृ0 - 38

5. अलबरूनीज इण्डिया ﴾सचाउ﴿ पृ0- 138, तथा आर0एस0शर्मा, शूद्रास इन ऐनसिएन्ट इण्डिया, पृ0-28।

12वीं शताब्दी तक जब वाणिज्य का पुनः विकास हुआ तो वैश्य समुदाय पुनः समृद्धिशाली हो गया ।

शूद्र – प्राचीन भारतीय समाज में शूद्रों को हेय दृष्टि से देखा जाता था तथा शूद्र नौकरों की भाँति होते थे एवं उनका प्रमुख कर्तव्य ब्राह्मणों व क्षत्रियों की सेवा करना होता है ।[1] समाज में शूद्रों की स्थिति बहुत ही बदतर थी । वे दासों की भाँति कार्य करते थे, जिसके बदले में उच्च जातियों द्वारा प्राप्त धन ही उनकी आजीविका का प्रमुख साधन था ।[2] 12वीं शताब्दी के बाद निम्न जातियों ने अपने सामाजिक व आर्थिक स्तर को ऊँचा करने के लिए एक प्रदेश से दूसरे प्रदेशों में जाकर बसना प्रारम्भ किया तथा उन्होंने नवीन व्यवसाय अपनाकर अपनी निम्नता के कालिख को मिटाना प्रारम्भ किया । 15वीं शताब्दी तक उन्हीं में से धार्मिक व सामाजिक सुधारक उत्पन्न हुए , जिन्होंने भक्ति आन्दोलन के द्वारा ऊँच नीच के भेदभाव को दूर करने का प्रयास किया ।[3]

1• अलबरूनीज इण्डिया (सचाउ) पृ0–138 तथा आर0एस0शर्मा, शूद्रास इन ऐन्सिएन्ट इण्डिया, पृ0– 281•

2• राधेश्याम , पृ0 – 209

3• डा0 शिरम्ब चतुर्वेदी, उल्लिखित शोध प्रबन्ध, पृ0–58

मध्य काल तक 36 जातियाँ व उपजातियाँ ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्यों, तथा शूद्रों के अतिरिक्त उत्पन्न हो गयी थी ।[1] इनमें मदिरा बनाने वाले कल्लाल, स्वर्णकार, जुलाहे, पान बेचने वाला, लोहार, गडरिया, दूध बेचने वाला, बढ़ई, धातुकार, भाट, अहीर, कुम्हार, काक्षी, माली, तेली, नाई, नट, गायक, विशबक, नर्तक, रंगरेज, छपाई करने वाले, तथा अन्य व्यवसाय करने वाले लोग शामिल है । इस काल में विभिन्न उद्योगों में निरन्तर परिवर्तन होने के कारण तथा श्रम की गतिशीलता एवं कुशल कारीगरी के विकास के परिणामस्वरूप व्यवसायिक जातियों में भी उपजातियाँ, वर्ग तथा उपवर्ग उत्पन्न हो गये ।[2]

14वीं तथा 15वीं शताब्दी पुनर्जागरण का युग था । इस काल में एकेश्वरवाद व निर्गुण ब्रह्म की उपासना, ब्राह्य आडम्बरों व मूर्ति पूजा पर प्रहार, एवं जन भाषाओं में सन्तों की वाणियों ने जाति-पाँति के बन्धन को ढीला कर दिया एवं ब्राहमणवर्ग के प्रभाव को भी कम कर दिया । अनेक

- -

1• हेरम्ब चतुर्वेदी, उल्लिखित शोध प्रबन्ध, पृ0 - 58

2• वही, अध्याय,-2-3, पृ0 - 138, तथा राधेश्याम, पृ0- 270

ब्राह्मणों ने अपने पूर्वजों का व्यवसाय छोड दिया तथा ज्योतिष शास्त्र व आयुर्वेद का व्यवसाय ग्रहण कर लिया तथा शेष जातियों ने कृषि, वाणिज्य व व्यापार को अपना व्यवसाय बनाया । इस प्रकार से हिन्दू समाज के ढाँचे में आन्तरिक एवं वाह्य दबावों के कारण निरन्तर परिवर्तन आया तथा तत्कालीन समाज स्पष्टत: तीन वर्गों में विभाजित हो गया । प्रथम वर्ग अभिजात वर्ग था । द्वितीय पुरोहित वर्ग तथा तीसरा सर्व साधारण वर्ग था ।

हिन्दू अभिजात वर्ग - हिन्दू अभिजात वर्ग में, हिन्दू शासक, अमीर तथा समाज के उच्च परिवारों के सदस्य थे । इस काल में हिन्दू अभिजात वर्ग कभी एक संगठित इकाई के रूप में नहीं रहा । जैसे स्वायत्त शासक, विभिन्न श्रेणियों के हिन्दू अमीर इत्यादि । इस काल में स्वायत्त शासकों के लिए कई पर्यायवाची शब्दों का उपयोग किया । उदाहरणार्थ राजा, राना, राय, रावल, रावत, जमींदार, इत्यादि शब्दों का प्रयोग किया गया था ।[1]

1• डा0 हेरम्ब चतुर्वेदी, अध्याय -2,3 , पृ0 - 65-138, तथा राधेश्याम पृ0 - 270

इस काल में राज्यों के अन्तर्गत स्वायत्त शासकों का अस्तित्व प्रकाश में आता है । 14वीं शताब्दी में 1377 से 1421 ई0 के मध्य राय सु सुरोधरन का शासन था ।[1] इटावा पर हिन्दू शासकों का राज्य लम्बे समय तक विद्यमान रहा । इसी काल में गोरखपुर तथा खरोसा के राय का उल्लेख भी प्राप्त होता है।[2] कटेहर के राय हर सिंह[3], इटावा के राय साबिर[4], तथा बाद में राय दादू,[5] बक्सर में राय त्रिलोक चन्द्र का प्रभाव था ।[6] जौनपुर के स्वतन्त्र राज्य में हिन्दू अभिजात वर्ग को प्रश्रय दिया गया तथा शासन में उनकी सहायता की गयी । इस प्रकार से प्रशासन मुसलमानों की प्रधानता के बावजूद प्रशासन में उनकी स्थिति प्रतिष्ठित बनी रही । हिन्दू जमींदारों की स्थिति दो बातों पर निर्भर करती थी । प्रथम कि वे शासक के प्रति निष्ठावान है या नहीं तथा द्वितीय कि उनकी व्यक्तिगत स्थिति कैसी है ।[7] अधिकांश हिन्दू जमींदार व अमीर केन्द्र के प्रति निष्ठावान बने

---

1. कृष्ण प्रसाद, इटावा फोर्ट इन्सक्रिप्सन, इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस, वाल्टेर, 1979
2. बरनी , पृ0 - 588, रिज्वी, पृ0- 40
3. याहिया, पृ0 - 169
4. वही, पृ0 - 172, रिजवी पृ0 7
5. निजामुद्दीन अहमद, पृ0 -324
6. वही
7. राधेश्याम , पृ0 - 218

रहे तथा राज्य की कृपा अर्जित करते रहे । कुछ विद्रोही हिन्दू शासकों का उल्लेख भी प्राप्त होता है जो केन्द्र द्वारा समय - समय पर दण्डित किये गये ।[1]

हिन्दू पुरोहित वर्ग - इस काल में हिन्दू पुरोहितों ने ज्योतिषियों के रूप में अपनी पहचान बनाई ।[2] तत्कालीन समाज में ज्योतिषियों का उच्च स्थान प्राप्त था। उन्हें तत्कालीन शासकों का प्रश्रय प्राप्त था । कोई भी मुहल्ला या कस्बा ज्योतिषियों से रिक्त नहीं था । सुल्तान, मलिक, अमीर तथा प्रतिष्ठित व्यक्ति आदि ज्योतिषियों को बहुत सा इनाम तथा धन दिया करते थे । यह ज्योतिषी कुण्डलियाँ बनाया करते थे । शहर के लोग बिना ज्योतिषी के पूर्व परामर्श के कोई भी शुभ कार्य नहीं करते थे ।[2] ये ज्योतिषी भविष्य वाणियाँ भी किया करते थे । भविष्य बताने वाले ज्योतिष में " रम्भोल, कोल " अत्यधिक प्रसिद्ध हुआ ।[3] इस प्रकार इस काल में ब्राह्मणों विद्या को अपनी आजीविका का प्रमुख साधन बना लिया था तथा ज्योतिषाच।

---

1. डा०शेफाली चटर्जी, (उल्लिखित शोध- प्रबंध) पृ०- 132

2. मृगावती, पृ०-12, दोहा-16, तथा वी०एन०एस०यादव, पृ०-20, हे०चतुर्वेदी पृ०- 22-23

3. मिनहाज, पृ०-555, निजामुद्दीन अहमद, पृ०-327, रिजवी, पृ०-114

के रूप में समाज में इन्हें काफी सम्मान एवं उपहार प्राप्त होता था ।[1]

सर्वसाधारण वर्ग - सर्व साधारण वर्ग के अन्तर्गत विभिन्न व्यवसाय कर अपनी जीविका चलाने वाला वर्ग था । हिन्दुओं में व्यापारियों की कई प्रमुख श्रेणियां स्थापित हो गयी थी । इन व्यापारियों के अन्तर्गत विभिन्न व्यवसाय होते थे । हिन्दू व्यापारी वर्ग इस काल में इतना समृद्ध हो गया कि वह लोगों को ऋण देने लगा था ।[2] इस काल में जौनपुर शहर बहुत ही व्यस्त एवं समृद्ध बाजार था ।[3] इस बाजार में हर समुदाय के व्यापारी दिखाई देते थे ।[4] जिन लोगों ने भिन्न - भिन्न व्यवसाय द्वारा अपनी आजीविका की वे निम्नवत है ।

1· कल्लाल - इसकाल में मदिरा बनाने वाले कल्लाल का उल्लेख मिलता है।[5]

1· देखे सन्दर्भ पृ0 9 व 10

2· कबीर ग्रन्थावली, दो-32, पृ0-285, तथा दो0-6, पृ0-372 तथा डा0 हेरम्ब चतुर्वेदी (शोध प्रबन्ध) पृ0- 46 - 47

3· कीर्तिलता, पृ0- 47

4· डा0 गोपाली चटर्जी, (शोध प्रबन्ध), पृ0- 217

5· कबीर, दोहा-2, पृ0-32, दोहा, -5, पृ0-46, तथा डा0 चतुर्वेदी, पृ0-105-07

कबीर ने शराबोत्पादन की बडी भट्ठियों का उल्लेख किया है जिसमें लहड़ (खाद्यान्न) में गुड़ आदि, डालकर मदिरा तैयार की जाती थी।[1]

2• स्वर्णकार - सोने के आभूषण बनाने व बेचने वाले स्वर्णकार कहे जाते थे।[2] सोने की सफाई तथा शुद्धता की प्रक्रिया से भी उस काल के स्वर्णकार भलीभाँति अवगत थे।[3] अत: उस काल में आभूषण बनाई, ढलाई, व कटाई, आदि के कार्य भी बरीकी व प्रशिक्षित ढंग से सम्पन्न होते थे।[4]

3• जुलाहे - यह वर्ग सूत कातने का काम करता था, जिससे कपड़ा तैयार किया जाता था।[5]

4• लोहार - लोहे का सामान बेचने वाले को लोहार के नाम से पुकारा जाता था।[6] तलवार से लेकर साधारण मकान व मन्दिरों के निर्माण में

- -

1• कबीर ग्रन्थावली, दो -3, पृ0- 234
2• वही, दोहा-17, पृ0- 154-55, तथा मृगावती, दोहा -35, पृ0-28
3• डा0चतुर्वेदी, पृ0-97
4• वही, पृ0-96-100
5• कबीर, दो0-44, पृ0-204, तथा अलबरूनी, पृ0-47
6• कबीर, पृ0-5, दो0-28, दो0-51, पृ0-46, दो0-8, पृ0-17

लोहार का कार्य आवश्यक ही नहीं अपरिहार्य था ।[1]

5· कुम्हार -

मिट्टी के बर्तन बनाने वाले को कुम्हार कहा जाता था ।[2]
कबीरदास ने इन्हें " कुलाल " शब्द से भी सम्बोधित किया है ।[3] मध्य कालीन समाज में धातुओं के बर्तनों का चलन तो था ही परन्तु अनेक सामाजिक धार्मिक आयोजनों में प्राय: मिट्टी के बर्तन इत्यादि, प्रयोग होते थे । नाना प्रकार के बर्तन बनाने में कुम्हार प्रवीण हो गये थे ।[4] कबीर ने कुम्हार के विकसित चाल का वर्णन अनेक दोहों में किया है ।[5] साथ ही कबीर मिट्टी के कच्चे बर्तनों को पकाने की विधि का वर्णन भी करते हैं ।[6]

6· बढई --

लकडी का काम करने वाला व्यक्ति बढइ कहलाता था ।[7]

- -

1· मृगावती, दो-35, पृ0-28, तथा कबीर- दो0-5, पृ0-44 (उद्धत-510 चतुर्वेदी शोध प्रबन्ध, पृ0- 95-96)

2· कबीर, दो0-28, पृ0-5, तथा दोहा -8, पृ0-14

3· वही, दो0-7, पृ0-307

4· डा0 चतुर्वेदी, पृ0-89-91

5· कबीर, दो0-1, पृ0-31 तथा दो0=38, 39, पृ0- 44

6· कबीर, दो0-1, पृ0-31

7· कबीर, दो-55, पृ0-178 तथा दो0-11, पृ0- 376

लोहार की ही भाँति बढ़ई भी मकान, आदि के निर्माण में खिड़की, दरवाजे, रोशनदान के निर्माण के माध्यम से आवश्यक हो गये थे।[1] इस काल में घुड़सवारों की बढ़ती संख्या व सेना में उनके महत्त्व को देखते हुए, घोड़े की काठी का निर्माण एक बड़ा उद्योग था, जिसके दायित्व का निर्वहन, यही बढ़ई करते थे।[2]

7• तेली - तेल बनाने व बेचने वाला तेली के नाम से जाना जाता था।[3]

8• नाई - बाल बनाने व हजामत करने वाले को नाई कहा जाता था।[4]

ये भी समाज के अविभाज्य अंग थे, जिनका सहयोग व भागीदारी अनेक अनुष्ठान व धार्मिक, सामाजिक आयोजनों में आवश्यक थी।[5]

- -

1• मृगावती, दो0-35, पृ0-28 ् उद्धृत हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0- 49 सन्दर्भ 167

2• वही, दो0- 348, पृ0-301, तथा डा0 चतुर्वेदी, पृ0- 94

3• कबीर, दो0-23, पृ0-16 तथा ज्योतिरेश्वर, प्रथम कल्लोल, पृ0-1

4• कबीर, दो0-11, पृ0- 375

5• मृगावती, दो0-424, पृ0- 367, तथा हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0-87-88

9· रंगरेज - कपड़ों की रंगाई एक प्रमुख व्यवसाय था तथा इस कार्य के करने वाले का " रंगरेज " कहा जाता था ।[1]

10· नट - विभिन्न करतब दिखाकर लोगों का मनोरंजन करने वालों को नट की संज्ञा प्राप्त थी ।[2] कबीर ने इन्हें " बाजीगर " भी कहा है ।[3] प्रायः हमें समकालीन साहित्य में उनकी स्त्रियों की भी सहभागिदारी का उल्लेख मिलता है । नट अथवा बाजीगर के तमाशों में वे भी बराबर हिस्सा लेती थी तथा उन्हें "नटी " व बाजी गरनी " कहा गया है ।[4]

11· तंबोली - इस काल में पान व सुपाडी बेचने वाला व्यवसाय भी प्रचलित था, इस व्यवसाय को करने वालों को "तंबोली " कहा जाता था ।[5] प्राय: सुल्तानों, उनकी रानियों तथा अभिजात्य वर्ग में तंबोली को विशिष्ट

- -

1· कबीर, दो-4, पृ0- 102
2· कबीर, दोहा-29, पृ0-11, तथा दोहा - 109, पृ0 - 209
3· कबीर, दोहा-34, पृ0-287
4· हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0- 127
5· कबीर, दो -29, पृ0- 42, तथा अलबरूनी, पृ0- 237

वेतन भोगी, कर्मचारियों के रूपमें नियुक्त किया जाता था, ताकि मेहमानों का स्वागत पान से अवश्य हो सके ।[1]

12. धोबी - कपड़े धुलने वाले को धोबी कहा जाता था।[2] आमतौर पर ये कुलीन एवं अभिजात्य वर्ग के लोगों के वस्त्र धुला करते थे ।[3]

शताब्दियों से भारतीय समाज कृषि पर आधारित रहा है, जिसके कारण हिन्दू समाज, ग्रामीण समुदाय से विशेष रूप से सम्बद्ध रहा । कृषि कार्य हेतु श्रमिक एवं ग्रामीण शिल्पकार तथा सेवक हिन्दू समाज के एक प्रमुख अंग के रूप में विद्यमान रहे ।[5]

इसके अतिरिक्त हिन्दू समाज के कुछ व्यक्ति शासन व्यवस्था के अन्तर्गत सेना में सैनिक तथा अधिकारियों के रूप में भी विद्यमान थे ।

---

1. मृगावती , दो0- 35, पृ0- 28 तथा हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0- 113-114
2. कबीर, दो0-11, पृ0-50 तथा मृगावती, दो0-424,पृ0-367
3. हेरम्ब, चतुर्वेदी, पृ0- 86-87
4. वही, अध्याय 2 व 3
5. वही

विभिन्न हिन्दू सैन्य सेवा में रहेतेथे तथा उन्हें वेतन इत्यादि प्राप्त होता था । समाज में उन्हें सामान्य स्थान ही प्राप्त रहा । इनकी भू - राजस्व व्यवस्था के अन्तर्गत या प्रशासनिक व्यवस्था में भी विभिन्न अधिकारियों के रूप में शासकों द्वारा नियुक्ति की जाती रही ।

मुस्लिम समाज -
--- ------

निरूमित काल में मुस्लिम समाज की रचना अत्यन्त सरल थी । सुल्तान प्रजा का नेता तथा समाज का प्रधान होता था । एक राजा तथा समाज के नेता कि हैसियत से वह सामाजिक एवं सांस्कृतिक आचरण निर्धारित करता था। कुरान पाक में सुल्तान के प्रभाव का उल्लेख इस प्रकार है - " हे इमान " इस्लाम धर्म " वालो । अल्लाह और रसूल का आदेश मानों । साथ ही "उलिल उमरा " अर्थात सुल्तान का भी आदेश मानो ।[1] इस प्रकार सुल्तान ही मुस्लिम समाज का सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति था ।

मध्य काल में भारत वर्ष की सम्पन्नता ने विदेशी मुसलमानों को भारत की ओर आकृष्ट किया तथा सातवीं शताब्दी में प्रथम बार मुसलमानों ने भारत

- -

1• तारीखे फकरूद्दीन मुबारक शाह, ﴾ई0 डेनिसन राम द्वारा सम्पादित﴿ पृ0-12

में प्रवेश किया ।[1] इसके पश्चात भारत में निरन्तर मुस्लिम शासकों द्वारा प्रलोभन देकर हिन्दुओं को मुसलमान बनाये जाने एवं व्यापार के कारण आने वाले मुसलमानों के द्वारा भारत में मुस्लिम जनसंख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई ।[2] जौनपुर राज्य में विदेशों से मुसलमानों का आगमन निरन्तर जारी रहा ।[3] इस प्रकार 16वीं शताब्दी तक भारत को कुल जनसंख्या का 1/10 भाग मुसलमानों का था ।[4]

इस प्रकार भारतीय समाज में मुसलमानों ने अपना अलग अस्तित्व निर्धारित किया तथा मध्य काल के अन्त तक भारतीय समाज का अंग बन गये । इस काल में अनेक सूफी सन्तों तथा विद्वानों ने भी मुस्लिम समाज को भारत में एक दिशा प्रदान की । जिसमें जौनपुर राज्य अनेक सूफी सन्तों ने महत्वपूर्ण कार्य किया।

इस काल में विदेशी मुसलमानों का भारत को अप्रवासी होना तथा धर्म परिवर्तित भारतीय मुसलमानों की संख्या में निरन्तर वृद्धि के कारण अनेक समस्याएं उत्पन्न हुयी । मुसलमान समाज के अन्तर्गत संघर्ष हो गया । जिसके कारण

---

1. राधेश्याम, पृ0 - 176
2. इब्नबतूता, पृ0-67, अब्दुल करीम, पृ0-143-44, मुहम्मद मुजीब-इण्डियन मुस्लिम्स पृ0 - 21-22
3. राधेश्याम, पृ0- 184
4. के0एस0लाल, पृ0- 143

वर्ग भेद की भावना को प्रश्रय मिला । परिणाम स्वरूप मुस्लिम समाज वर्गों में विभाजित हो गया ।

सुल्तान के ठीक पश्चात दो स्थूल सामाजिक वर्ग थे - " अहल-ए-शेफ " (तलवार धारी) और " अहल -ए- कुलम " (लेखनी धारी)[1] इसमें - अहल-ए-कुलम " वर्ग प्रथम एक या दो पीढ़ियों तक पूर्णरूपेण अत्तुर्की विदेशियों तक ही सीमित था । इन्हीं में से लिपिक सेवाओं, जैसे - कातिब, दबीर, वजीर, आदि के लिए लोग नियुक्त होते थे ।[2] कुलीन वर्ग (उमरा अथवा खान) की गणना " अहल - ए - शेफ " की श्रेणी में होती थी । वे साधारणतया सत्तारूढ़ सुल्तान के पक्ष में होते थे । परन्तु जब सुल्तान दुर्बल या अयोग्य होता था तो वे स्वयं शासक वंश स्थापित कर लेते थे ।[3]

कुलीन वर्ग जौनपुर की सल्तनत का विशाल आधार था । एक कुलीन

- -

1• हबीबुल्लाह, दि फाउन्डेशन आफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया, पृ0- 274

2• वही

3• के0एम0अशरफ , पृ0 - 10, 55

सामान्यतया सुल्तान या किसी अन्य बड़े कुलीन के दास या अनुचर के रूप में अपना जीवन प्रारम्भ करता था तथा क्रमिक पदोन्नति से एक उच्च पद पर आसीन हो जाता था तथा अमीर की प्रतिष्ठा प्राप्त कर लेता था ।[1] जौनपुर राज्य में एक कुलीन की सर्वोच्च उपाधि "खान" थी ।[2] इसके पश्चात " मलिक " तथा अन्त में " अमीर " की उपाधि थी ।[3]

कुलीन वर्ग की रचना विजातीय थी, यथा, तुर्की, अरबी, अफगानी, पारसी, मिस्री, मुगल और भारतीय । मुस्लिम अभिजात्य वर्ग मध्य काल के प्रारम्भिक हिस्से तक विदेशी अप्रवासियों द्वारा गठित था, किंतु परिस्थिति के अनुसार वे इसी समाज का अभिन्न अंग हो गये ।[4] भारतीय मुसलमानों की अधिकांश संख्या उन्हीं लोगों की है, जिनके पूर्वजों ने इस्लाम धर्म स्वीकार किया था।[5]

1• पी०एन०ओझा०आस्पेक्टस आफ मेडिकल इण्डियन कल्चर, पृ०-130-131

2• वही तथा डा० शेफाली चटर्जी , पृ०- 221

3• वही

4• यूसूफ, हुसैन, पृ०- 129

5• वही

14 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में शर्की राज्य में भारतीय मुसलमानों ने राज्य के कार्यों क में हाथ बटाना प्रारम्भ किया, परन्तु उनका सहयोग सदा आर्थिक एवं महत्वपूर्ण नहीं होता था ।[1] कुलीन वर्ग राज्य में सेनानायकों, प्रशासकों तथा यदा- कदा राजकर्ता के रूप में अपने प्रभाव युक्त सामर्थ्य का प्रयोग करते थे । शर्की शासन में शक्तिशाली शासक के अधीन कुलीन, राज्य की सेवा भक्ति के साथ करते थे । परन्तु दुर्बल होने पर समाप्त करने के लिए भी सचेष्ट थे ।[2] जौनपुर के शर्की शासन के सभी कुलीन खेलकूद तथा तलवार बाजी के शौकीन थे तथा सैनिक कवायद में विशेष रुचि रखते थे ।[3] इनमें से अनेक कलाओं एवं विधाओं के पोषक थे तथा स्वयं भी विद्वान, नम्र, शिष्ट और विनीत थे ।[4]

शर्की शासन में " उलेमा " का भी एक विशिष्ट स्थान था । ये आध्यात्मिक सिद्धान्तों की व्याख्या करते थे ।[5] सुल्तान इब्राहिम शाह शर्की

- -

1· पी०एन०ओझा, पृ०- 128

2· डा० शेफाली चटर्जी, पृ० -221

3· के०एस० लाल, पृ०- 263

4· दि रेहला, आफ इब्नबतूता, पृ०-13

5· इंडि० हि०का०प्रो०सी०, पटना, 1954, पृ० 257 तथा एम०मुजीब, पृ०- 207

इन उलेमाओं का अत्यधिक सम्मान करता था तथा उसने अपने समय के प्रसिद्ध विद्वान काजी शिहाबुद्दीन दौलताबादी को " मलिक -उल - उलमा " की सम्मानित उपाधि से विभूषित किया था ।[1] वर्ग के व्यक्ति अदालती और धर्मोपदेश- विषयक सेवाओं पर नियुक्त किये जाते थे और जहाँ कहीं भी मस्जिद होती, प्रत्येक मुस्लिम बस्ती में एक " इमाम " एक " काजि़ब" एक एक " मुफ्ती " होते थे, जो उस पक्ष का प्रतिनिधित्व करते थे जिसे राज्य की मान्यता प्राप्त होती थी । वे शिक्षा संस्थाओं पर निश्चित रूप से नियंत्रण रखते थे तथा इस प्रकार धार्मिक चिन्तन एवं शिक्षा को विकसित करते थे जो कि इनके महात्म्य को दृढ़ता प्रदान करता था ।[2] "सदरूस्सदर " का प्राधिकारी जो कि इस वर्ग का सभापतित्व करता था, " मुशेख " नामक वर्ग को छोड़कर शिक्षित मुसलमानों को स्वीकार कर लेता था ।[3] इस प्रकार तत्कालीन मुस्लिम समाज में उलेमा वर्ग प्रभावी एवं सशक्त वर्ग के रूप में विद्यमान था ।

1· तज्जालिये नूर, जिल्द -2, पृ0- 34

2· किशोरी प्रसाद शाहू, पृ0- 20

3· ए0बी0एमहबीबुल्लाह , पृ0 - 274

सैद्धान्तिक रूप से मुस्लिम समाज जाति- प्रथा विहिन था । किन्तु सार्वलौकिक मुस्लिम बन्धुता भारतीय वातावरण में सामाजिक भेदभाव में अछूता नहीं रहा ।

कुलीन वर्ग के अतिरिक्त अन्य मुस्लिम जनता जन साधारण के दायरे में आती थी तथा उनकी जीवन चर्या लगभग विशाल बहुसंख्यक हिन्दू जनता के ही समान थी । इस काल में अनेक मुसलमानों का मुख्य व्यवसाय व्यापार था । इन मुसलमान व्यापारियों ने मुस्लिम समाज के मध्य वर्ग का सृजन किया ।[1] इसके अतिरिक्त विविध शिक्षा व धर्म प्रचार के साथ - साथ मदरसों व मस्जिदों में शिक्षा देने वाले धर्मशास्त्री, शिक्षक, उपदेशक, दार्शनिक साहित्यकार, लेखक तथा इतिहासकार, आदि भी मध्य वर्ग के सदस्य कहे जाते थे ।[2] इसी प्रकार जैसे - जैसे नगरीकरण मे प्रगति हुयी, वैसे - वैसे सामान्य आय अर्जित करने वाले लोगों का उत्कर्ष हुआ । ये मुसलमान समाज के मध्य वर्ग का अंग थे ।[3]

- -

1• राधेश्याम - पृ० - 191

2• राधेश्याम , पृ० - 191

3• के०पी० साहू, पृ० - 20

मध्य वर्ग के नीचे मुस्लिम हजाम, दर्जी, धोबी, मल्लाह, घसियारे, बाजे वाले, तम्बोली, माली, तेली, मदारी, संगीतज्ञ और चरवाहे इत्यादि थे । भिखारी और निराश्रित भी इसी श्रेणी में आते थे ।[1]

इसी वर्ग का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग था, जिसमें सूफी सन्त और " दरवेश " शामिल थे ।[2] ये सम्पूर्ण राज्य में व्याप्त थे । इनका सर्व-साधारण पर पर्याप्त प्रभाव था तथा ये जनता के बहुत क निकट थे । इनके खानका (आश्रम) विद्वानों, कुलीनों और जन साधारण के मिलन स्थल थे ।[3] इन सूफी सन्तों ने राज्य में स्वस्थ सामाजिक एवं राजनैतिक वातावरण उत्पन्न करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाया । शर्की राज्य में सैय्यद अशरफ जहाँगीर सम्मानी की खनकाह विशेष रूप से उल्लेखनीय है।[4] साधारणतया शासकों ने उदारता से इन सन्तों को जागीरें भी प्रदान की ।[5]

1· ए०बी०हबीबुल्लाह , पृ०- 274

2· किशोरी प्रसाद साहू, पृ०- 20

3· डा०शेफाली चटर्जी- पृ०- 243

4· एम मुजीब, पृ०- 171, सन्दर्भ 8,तथा डा०शेफाली चटर्जी, पृ०- 245

5· दि रेहला आफ इब्नबतूता, पृ० 70 , तथा निजामुद्दीन औलिया, राहतुल कूलूब , पृ०- 39-40

मुस्लिम आबादी का एक वर्ग गृह सेवकों तथा गुलामों के रूप में विद्यमान थी, जिनकी विशाल संख्या थी।[1] प्रत्येक सुल्तान, कुलीन तथा सम्पन्न व्यक्ति, स्त्री पुरुषों का गुलाम के रूप में रखते थे। उन्हें गृहस्थी के कार्यों में तथा कारखानों में नियुक्त किया जाता था।[2] सुल्तान कभी - कभी दासों की सेवा व भक्ति से प्रसन्न होकर उन्हें मुक्त भी कर देता था।[3] इसके अतिरिक्त गुलामों में आसामी, चीन, तुर्किस्तान, और ईरान जैसे देशों से मँगाये गये, स्त्री - पुरुष थे।[4] दासियाँ दो प्रकार की होती थी - 1· वे जो गृह सेविकाओं का कार्य करती थी तथा (2) वे जो मनोरंजन व समागम के लिए खरीदी जाती थी।[5] साधारणतया युद्धों में बन्दी लोग गुलाम बनाये जाते थे तथा बाजारों में खुले आम गुलामों का क्रय विक्रय होता था।[6]

1· पी0एन0 ओझा, पृ0- 133- 134

2· पी0एन0ओझा, पृ0- 133- 14

3· के0पी0शाह, पृ0 - 21

4· वही

5· वही

6· कीर्तिलता - पृ0 - 38

हिन्दू मुस्लिम अर्न्तक्रिया :

जौनपुर राज्य की मिश्रित जनसंख्या में हिन्दू तथा मुसलमानों की प्रधानता थी, जो अपनी - अपनी विशिष्ट जीवन पद्धति का निर्वाह करते थे दोनों ही सम्प्रदायों की विचारधारा एवं रीति - रिवाज अलग - अलग थे । विजयी मुसलमानों को हिन्दू परम्पराओं एवं विश्वासों के प्रति सम्मान की भावना बहुत ही कम थी ।[1]

यद्यपि दोनों जातियाँ साथ - साथ रहती थी, परन्तु उनकी विचार - धारा एवं धार्मिक परम्पराओं में कोई सामंजस्य नहीं था । ऐतिहासिक तथ्यों से यह बात स्पष्ट होती है कि मध्यकालीन भारतीय समाज हिन्दू तथा मुसलमान के मध्य स्पष्टत: विभाजित था तथा उनकी आध्यात्मिक प्रेरणा के स्रोत अलग - अलग थे ।[2] सूफी सन्तों तथा भक्तों ने दोनों सम्प्रदाय निकट लाने का प्रयत्न किया ।

1• कीर्तिलता, पृ0- 42-44, 90 तथा ई0 एण्ड डो0, पृ0 - 3, पृ0- 546

2• यूसुफ हुसैन, पृ0- 121-22

जाति प्रथा इस विभाजन का प्रमुख आधार थी, जिसका भारत के समस्त समाज सुधारकों द्वारा विरोध किया गया । दक्षिण भारत के धार्मिक सुधार आन्दोलन से उत्तरी भारत भी अछूता नहीं रहा । इसका सम्पूर्ण श्रेय रामानन्द को है, जिन्होंने उत्तर भारत में भी दक्षिण भारत के भक्ति आन्दोलन के प्रभाव का विस्तार किया ।[1]

रामानन्द की शिष्य परम्परा में कबीर का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जिनके अथक प्रयासों ने समाज को एक नई दिशा प्रदान किया तथा सामाजिक बुराइयों को दूर करने के लिए आवाज उठायी ।[2] उन्होंने ऊंच और नीच के भेद - भाव का डटकर विरोध किया तथा अपनी रचनाओं में समाज के ठेकेदारों (उच्च वर्गीय लोगों) की जमकर आलोचना की ।[3] कबीर ने हिन्दू तथा मुस्लिम के भेदभाव अस्वीकार किया तथा कहा कि दोनों एक है तथा एक ही ईश्वर दोनों के लिए उपास्य है एवं उनका निर्माण एक ही रक्त

- -

1• तारा चन्द, पृ0 - 132

2• वही

3• कबीर ग्रन्थावली, साखी शेष कौअंग, दोहा- 20,21, पृ0- 78 कुसंगति कौअंग - दोहा - 7, पृ0- 81

से हुआ है ।[1]

कबीर ने अपनी रचनाओं में भ्रातृत्व के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया, जो समस्त जातियों को निकट लाने का एक प्रयास था । कबीर ने हिन्दू तथा मुस्लिम धर्मों के उन समस्त सिद्धान्तों को त्याग दिया जिनका नहीं कोई सामाजिक महत्व था और न ही उनसे किसी का कल्याण ही सम्भव था । उन्होंने दोनों धर्मों सामान्य सिद्धान्तों तथा समानताओं को ग्रहण किया।[2] इस्लाम के कुछ सिद्धान्तों को आत्मासात् कर लेने के कारण कबीर के सिद्धान्त व्यापक हो गये थे ।[3]

कुछ फारसी विद्वानों ने हिन्दी में रचनायें करके, मजहबी लोगो पर तीखा प्रहार किया । इनमें प्रथम नाम जौनपुर के विद्वान " नूर मुहम्मद " का लिया जाता है ।[4] इस सन्दर्भ में रमर्ग काल के एक अन्य महत्वपूर्ण विद्वान एवं

- -

1• ताराचन्द , पृ० - 132

2• वही, पृ०- 121

3• यूसुफ हुसैन, पृ०- 14

4• नूर मुहम्मद कृत " अनुराग बाँसुरी " , पृ० - 12

सूफी सन्त " मखदूम दनियाल खिजरी " जौनपुरी" का नाम भी अग्रणी है ।[1] सैय्यद मुहम्मद जौनपुरी " 15वीं शताब्दी के मध्य के एक प्रमुख विद्वान थे । ये हिन्दू - मुस्लिम एकता के प्रबल समर्थक थे ।[2]

सूफी सन्तों तथा विद्वानों ने भातृत्व के सिद्वान्त का प्रतिपादन किया जो समस्त जातियों को एक दूसरे के निकट लाता था । ये विद्वान वर्णाश्रम प्रथा के साथ - साथ अन्ध विश्वासों पर आधारित धर्मों की शत्रुता का उन्मूलन करने के लिए प्रयासरत थे तथा लोगों के मध्य सामाजिक एवं धार्मिक शान्ति स्थापित करने के इच्छुक थे । इन सूफी साधकों एवं रहस्यवादी विचारकों ने अपने विचारों द्वारा इस्लाम को हिन्दू धर्म के साथ सम्बन्ध स्थापित करने एवं हिन्दुओं के हृदय में गम्भीर रूप से प्रवेश प्राप्त करने का मार्ग प्रशस्त किया । इन्होंने शर्कीशासकों के संरक्षण में जौनपुर के सामाजिक जीवन को काफी प्रभावित किया ।

- -

1• तजल्लिये नूर, जिल्द - 9, पृ0 - 56

2• वही, पृ0--58, एम0मुजीब , पृ0- 12, 99, 101, 107, 110, 237, 272, 333

शर्की शासकों के अन्तर्गत धर्म निरपेक्ष भावना को विस्तृत होने का पर्याप्त अवसर प्राप्त हुआ। जौनपुर के अत्यन्त सुन्दर शिव मन्दिरों का अस्तित्व इस बात का प्रबल प्रमाण है कि शर्की शासक अपने से पूर्व के मुस्लिम शासकों की भाँति धर्मान्ध नहीं थे।[1] इस दृष्टिकोण से सुल्तान इब्राहिम शाह शर्की सार्वाधिक उदार शासक सिद्ध हुआ। उसने न केवल कीर्तिसिंह को पुन: विरहुत का शासक बनाने में अपना पूर्ण सहयोग ही दिया वरन् राज्याभिषेक समारोह को हिन्दू विधि से सम्पन्न कराने की अनुमति भी प्रदान की।[2]

सुल्तान इब्राहिम शाह शर्की सभी धर्मों का आदर करता था। उसके लिए हिन्दू तथा मुस्लिम प्रजा समान थी। उसके शासन काल में मस्जिद निर्माण की घटना इस बात का प्रमाण है कि वह समाज में दोनों जातियों के अस्तित्व को समान रूप से स्वीकार करता था।[3]

- -

1. इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, पटना (1954), पृ0-254, तथा कीर्तिलता, पृ0- 26
2. वही, पृ0 - 258
3. सलातीने जौनपुर, पृ0- 14

यद्यपि विद्यापति कीर्तिलता में 1402 ई० के जौनपुर के सामाजिक जीवन में हिन्दू तथा मुस्लिम प्रजा के पारस्परिक सम्बन्ध के बारे में बताते हुए कहा है कि यद्यपि दोनों जातियाँ संयुक्त रूप से निवा कर रही थी परन्तु उनका पारस्परिक सम्बन्ध सन्तोष जनक नहीं था ।[1] हिन्दू व मुसलमान दोनों मिलकर रहते हुए भी एक दूसरे के धर्म का उपहास करते थे ।[2] फिर भी यह सत्य है कि दोनों जातियों के मध्य विभेद को कम करने के लिए बहुत से कदम उठाये गये ।[3] जामी-उल-उलूम से पता चलता है कि सुल्तान हुसेन शाह शर्की ने सत्यपीर नामक एक धार्मिक सम्प्रदाय को स्थापना की थी, जो इस्लाम तथा हिन्दू धर्म का सम्मिश्रण था ।[4] हेवेल ने भी इसका समर्थन करते हुए कहा है कि हिन्दू और मुसलमान दोनों के दैवी उपासना के लिए संस्कृत शब्द "सत्य" तथा अरबी शब्द " पीर " के संयोग से " सत्यपीर " का निर्माण किया ।[5]

---

1. कीर्तिलता , पृ०- 43-45
2. वही
3. अली अहमद खाँ, पृ०- 8
4. वही
5. ई०बी०हैवल, पृ०-338, तथा ताराचन्द, पृ०- 174

समाज सुधारकों में कबीर, नानक, इत्यादि ने अपनी वाणियों के द्वारा दोनों को एक दूसरे के निकट ला दिया । वे एक ही शिक्षा देते थे कि सम्पूर्ण मानव जाति की एक ही ईश्वर द्वारा सृष्टि हुयी है ।

दोनों सम्प्रदायों ने एक दूसरे की अच्छी बातों को ग्रहण किया । मुस्लिम सभ्यता की यह एक प्रमुख विशेषता थी कि वे जब भी मिलते थे तो परस्पर सम्भाषण करते थे ।[1] निःसन्देह यह एक अच्छा रिवाज था, जिससे हिन्दू भी प्रभावित हुए ।

स्थापत्य कला के क्षेत्र में भी दोनों सम्प्रदायों का संयुक्त प्रयास देखने को मिलता है । 14वीं शताब्दी में सूरजमुखी, गुलाब, कमल, इत्यादि हिन्दू शिल्प कला की जो छाप शर्की कालीन स्थापत्य एवं भवन निर्माण कला में दृष्टिगोचर होते है, वह दोनों जातियों के पारस्परिक सौहार्द का ही प्रतीक है।[2]

1· कीर्तिलता, पृ0- 38

2· के0एम0पाठीक्कर, भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण , पृ0- 129-30

भारतीय संगीत कला ने भी हिन्दू मुस्लिम सम्बन्ध को नया आयाम दिया । जौनपुर के शासक हुसेन शाह शर्की ने "ख्याल " का अविष्कार किया जो भारतीय संगीत के एक महत्वपूर्ण अंग के रूप में माना जाता है[1] जबकि "ध्रुपद " जो हिन्दू संगीत का अंग था , मुस्लिम संगीत के अंग के रूपमें प्रतिष्ठा प्राप्त किया ।[2]

सभ्यता तथा संस्कृति का अदान- प्रदान तभी सम्भव होता है जबकि दोनों सम्प्रदायों में मध्य आत्मिक एवं मधुर सम्बन्ध हो।शर्की शासकों इस दिशा में ठोस प्रयास किया गया , जिसके शर्की शासन काल में जौनपुर के समाज में हिन्दू तथा मुसलमानों के मध्य पारस्परिक सम्बन्धों में उदारता की झलक दिखायी पड़ती है ।

-"समाज में स्त्रियों की दशा "

समाज में स्त्रियों की स्थिति से ही सामाजिक अवस्था प्रतिबिम्बित होती है ।[3] परन्तु मुस्लिम काल में स्त्रियों की स्थिति प्राचीन भारतीय

1· प्रोमोशन आफ लार्निंग, इन इण्डिया, पृ0- 157-158

2· वहीं

3· रेखा मिश्रा ﴾वर्तमान प्रो0 रेखा जोशी﴿, वीमेन इन मुगल इण्डिया, पृ0-1

स्त्रियों के समान उच्च नहीं थी ।[1] किसी भी स्त्री को स्वतन्त्र रूप से जीवन निर्वाह करने का कोई अधिकार नहीं था । जब वे अविवाहित होती थी तो अपने पिता के नियंत्रण में रहती थी, विवाह के पश्चात स्त्री पति के नियंत्रण में तथा पति की मृत्यु के पश्चात पुत्र के संरक्षण में रहती थी ।[2]

राज परिवार की स्त्रियों का एक विशिष्ट स्थान था । शासक परिवार की स्त्रियों को उच्च स्तरीय व्यक्तिगत शिक्षा दी जाती थी ।[3] बीबी राजी जो सुल्तान महमूद शाह शर्की की पत्नी थी ।[4] अत्यन्त कुशल व बुद्धिमान स्त्री थी । इस एक स्त्री ने जौनपुर के सम्पूर्ण इतिहास को प्रभावित किया ।[5] इसी से पता चलता है कि राज- परिवारों में स्त्रियों को पर्याप्त सम्मान प्राप्त था ।

1· रेखा मिश्रा, पृ0-129,तथा हेरम्ब चतुर्वेदी पृ0- 139,-40,

2· मनु, पृ0-327-28, तथा रेखा मिश्रा, पृ0- 88

3· मख्जान, फो0 - 105, डा0शेफाली चटर्जी, कृत शर्की सुल्तानों का इतिहास से उद्धृत पृ0- 220

4· तारीखे दाऊदी, फो0-13 अ

5· वही

अन्य वर्गों की स्त्रियों के सन्दर्भ में यह बात लागू नहीं होती थी तथा वे सदैव पुरुषों पर आश्रित ही रही । मध्यम वर्गीय परिवार में स्त्री माँ के रूप में श्रद्धेय तथा पत्नी सहयोगी के रूपमें देखी जाती थी । तथा पारिवारिक मामलों में पर्याप्त हस्तक्षेप होता था ।[1] यद्यपि वाह्य मामलों में वह हस्तक्षेप नहीं करती थी । तत्कालीन समाज में स्त्रियों की स्थिति का अवलोकन निम्न मापदण्डों के आधार पर किया जा सकता है ।

पर्दा प्रथा -

पर्दा एक पारसी शब्द है । जिसका अर्थ होता है आवरण । अपने मूलार्थ के साथ ही इस शब्द ने एक और अर्थ अपना लिया - " स्त्रियों की एकान्तता", जिसकी सार्थकता परिवार की सामाजिक प्रतिष्ठा पर निर्भर करती थी । यह प्रथा प्राचीन भारत में मान्य नहीं थी ।[2]

भारतवर्ष के इस्लाम के आगमन के परिणामस्वरूप पर्दा प्रथा प्रचलित हुई ।[3] सम्भवतः विदेशी आक्रमणकारियों से सुरक्षित रहने तथा कुछ

- -

1• अलबरूनी (सचाउ) खण्ड-1, पृ0- 181

2• अल्टेकर, पृ0- 206, तथा डा0हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0- 146

3• डा0 हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0- 147

सीमा तक शासक वर्ग के अनुसरण के रूप में यह प्रथा सामान्य हो चली थी ।[1]

जौनपुर के समाज में पर्दा प्रथा प्रचलित थी ।[2] जौनपुर के मुस्लिम समाज में उच्च वर्ग की महिलाएं तो पर्दा करती थी परन्तु निम्न वर्ग और निर्धन वर्ग की महिलाओं के लिए अपनी जीविकोपार्जन के लिए पर्दा प्रथा का सख्ती से पालन करना सम्भव नहीं था ।[3] निम्न वर्ग की स्त्रियां गलियों में सैकड़ों सखियों के साथ बैठी रहती थी, जिससे यह प्रतीत होता है कि निम्न वर्ग की स्त्रियों में पर्दा नहीं था । बाजार में स्त्रियां क्रय - विक्रय का काम भी करती थी ।[4] अत्यन्त निम्न वर्ग की स्त्रियां राजाओं, सामन्तों तथा अन्य अमीरों के घरों में घरेलू काम काज भी करती थीं ।[5]

1• विद्यापति ठाकुर, सन्दर्भ -62, (उद्धृत हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0-147) तथा रेखा मिश्रा, पृ0- 135-35

2• कीर्तिलता, पृ0-32, तथा कबीर, पृ0-275-76 दो0-15

3• वही

4• मखजन, फो0-105अ, तथा कीर्तिलता, पृ0-34

5• वही

परन्तु राज परिवार की स्त्रियाँ इन सबसे भिन्न थीं । यद्यपि वे पर्दा तो करती थी परन्तु उनका राजनीति तथा प्रशासन में प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष हस्तक्षेप अथवा भागीदारी रहती थी ।[1]

उच्च श्रेणी की हिन्दू स्त्रियाँ भी पर्दा प्रथा का पालन करती थी । प्राय: मुस्लिम स्त्रियों की भाँति ही विशेष अवसरों पर पालकी या डोली में बैठकर ही कहीं जाती थीं ।[2]

हिन्दू स्त्रियों में एक साधारण एवं सर्वत्र मार्गी पर्दे का प्रचलन था, जिसे घूंघट कहा जाता था ।[3] यह एक प्रकार का आंशिक पर्दा था जिससे केवल मुँह छिपाया जाता था । सामान्यत: हिन्दू परिवार की स्त्रियाँ अपने श्वसुर व पति के सामने घूंघट निकालती थीं ।[4]

- -

1• मखजन, पो0 -105 अ

2• कबीर, पृ0 340, दो0 - 218

3• मीरा न माधुरी द्वितीय संस्करण, वि0स0-2013, दो0-15, पृ0-80 तथा कबीर, पृ0-275-76, दो0-15 तथा के0एम0अशरफ, पृ0-139

4• जायसी-{कहरानामा व मसलानामा} पृ0- 88, 92

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि तत्कालीन समाज में पृथा पृथा के कारण हिन्दू और मुस्लिम दोनों जातियों की स्त्रियों की विकास पक्ष पर पर्याप्त अवरोध उत्पन्न हुए । यह पृथा उनकी " हीनता " की भावना एवं मानसिक अपरिपक्वता का प्रबल कारण सिद्ध हुई।

वेश्यावृत्ति - इस काल में जौनपुर के समाज में वेश्याओं की भी पर्याप्त संख्या थी ।[1] विशिष्ट अवसरों पर जैसे कि सार्वजनिक भोजों, त्योहारों, शादी विवाह आदि में तथा मनोरंजन के लिए वेश्याओं तथा नर्तकियों को बुलाया जाता था।[2] उन्हें सामान्यत: नर्तकी, वेश्या, पातुर या गणिका आदि नामों से पुकारा जाता था ।[3] विद्यापति ने "कीर्तिलता" में जौनपुर की रूपवती युवतियों की, जो बार वनिताओं की रूप में काम करती थी का विस्तृत वर्णन किया है । यहाँ की वेश्याओं अवैध तरीकों से

- -

1• कबीर ग्रन्थावली, साखी, सुमिरन को अंग, दो0- 22, पृ0-10

2• कबीर का बीजक ग्रन्थ, पृथम संस्करण (1955) पृ0- 252 तथा ज्योतिरेश्वर, का वर्ण रत्नाकर (1940) चतुर्थ कल्लोल, पृ0-26-27 तथा विद्यापति का पुरूष परीक्षा (1851) पृष्ठ-150

3• वही, तथा डा0हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0- 179-80

अपनी जीविका चलाती थी और लोग अपनी काम पिपासा की तृप्ति के लिए उन पर निर्भर करते थे।[1] ये औरते बाजार में एकत्र होकर अन्य युवतियों को भी अपने पेशे में शामिल करने के लिए प्रलोभन देती थीं।[2] उनकी लज्जा अस्वाभाविक थी और रूप रंग कृत्रिम था। उन्हें केवल धन से प्रेम था और दूसरे को भुलाने के लिए ही विनम्रता का प्रदर्शन करती थीं। अपने पति से वंचित होते हुए भी वे अपने माँग में सिन्दूर भरती थीं जो वास्तव में उनकी बदनामी का प्रतीक था।[3] सुल्तान इब्राहिम शाह शर्की के संरक्षण में जौनपुर की वेश्याएं आनन्द और समृद्व का जीवन व्यतीत कर रही थीं।[4] जौनपुर की इन वार वनिताओं के इस वर्णन से प्रकट होता है कि समीक्षाधीन, अवधि में वेश्यावृत्ति एक विधि सम्मत सामाजिक बुराई थी।[5]

- -

1. कीर्तिलता, प्रथम संस्करण, 1962, द्वितीय पल्लव, छन्द -16, दो0-113-18 पृ0- 78-79
2. वही, छन्द 24, दो0138 पृ0- 85
3. वही, छन्द 25, दो0- 132-33, पृ0-82-83
4. वही, छन्द -25, दो0- 153, पृ0-91
5. जे0यू0पी0, हिस्ट्री सोसायटी, खण्ड-4, भाग-1, 2 1956 "जौनपुर इन विद्यापतिज कीर्तिलता," शीर्षक निबन्ध पृ0- 110-111

सती- प्रथा -

नि:संदेह हिन्दू स्त्री के जीवन में सबसे दुखद घटना उसके पति की मृत्यु होती थी ।[1] निम्न वर्गों के अतिरिक्त अन्य हिन्दू स्त्रियों को अपने पति के मौतके बाद या तो अपने मृत पति के चिता पर या पति के मृत्यु के बाद एक अलग चिता पर जलकर मर जाना पड़ता था ।[2] पहली स्थिति में यानी पति के शव के साथ मरने को " सह मरण " या "सह गमन" कहते थे ।[3] दूसरे प्रकार के धार्मिक कृत्य को " अनुमरण " या "अनुगमन " अर्थात पति के पीछे इस लोक से जाना कहा जाता था ।[4] सह मरणकी प्रथा अधिक लोक प्रिय थी ।[5] प्राय: सती कर रही स्त्रियाँ चिता पर अपने साथ सुहाग चिन्ह सम्बद्ध करके चिता पर आरूढ़ होती थीं ।[6] इस प्रकार इस काल में सती प्रथा विद्यामान थी जो स्त्रियों की दयनीय व असहाय स्थिति की द्योतक थी ।

---

1. रेखा मिश्रा, पृ0-132,
2. कबीर, पृ0-119, दो0-34 तथा विलियम क्रुक पृ0-153
3. मृगावती, पृ0-202 तथा कबीर साखी सार, साखी 34-36, पृ0-172-73
4. वही
5. वही
6. कबीर, पृ0-115, दो0-12, तथा मृगावती, पृ0-365-66, दो0-422

जौहर -

सती प्रथा की तरह भयानक परन्तु इससे अधिक आहत एक और प्रथा विद्यमान थी, जिसे जौहर कहा जाता था ।[1] यह प्रथा प्रमुखत: वीर राजपूत घरानों तक ही सीमित थी । यद्यपि अन्य घरानों में भी इसके लागू किये जाने के संकेत मिलते हैं ।[2] जब कोई राजपूत सरदार और उसके योद्धा युद्ध में लड़ते - लड़ते निराश हो जाते थे तो वे पराजय को सम्मुख आया देखकर, सामान्यत: अपनी महिलाओं को मौत के घाट उतार देते थे या उन्हें अग्नि के हवाले कर देते थे ।[3] ऐसा इसलिए करते थे कि उनके सतीत्व की रक्षा हो सके । जब मुहम्मद तुगलक कम्पिला के राय को घेरे लिया था, क्योंकि उसने बहाउद्दीन (गुस्तास्प) नामक एक राज्य-विद्रोही को शरण दी थी, तब कम्पिला के राय ने " जौहर " रचाया था । इब्नबतूता के अनुसार प्रत्येक स्त्री स्नान करके चन्दन मलकर आती थीं तथा राय के सम्मुख भूमि का चुम्बन करती थी और अपने आप को अग्नि

---

1. डा0चतुर्वेदी, पृ0-106, तथा विद्यापति कृत कुश परीक्षा, पृ0- 13 तथा तारीखे मुबारक शाही, पृ0- 462
2. वही
3. के0एम0अशरफ, पृ0-159

को समर्पित कर देती थी ।[1] इस प्रकार की भयावह घटनायें एवं प्रथाएं तत्कालीन समाज में स्त्रियों की बिगडती स्थिति को प्रतिबिम्बित करती हैं।

स्त्री शिक्षा : -

शर्की शासन काल में जौनपुर में स्त्रियों की शिक्षा की शिक्षा की व्यवस्था थी । जौनपुर में इस काल में, बौद्धिक क्षेत्र में स्त्रियों की प्रगति प्रशंसनीय है । लड़कियों की शिक्षा के लिए पृथक स्कूलों का प्रबन्ध था ।[2] जौनपुर को स्त्री शिक्षा के महत्वपूर्ण केन्द्र के रूप में भी जाना जाता था । शिक्षा के क्षेत्र में महमूद शाह शर्की की विदुषी पत्नी बीबीराजी की एक अलग प्रतिष्ठा थी । शिक्षा में, विशेषकर, स्त्री शिक्षा में रुचि रखने वाली इस महिला ने जौनपुर में स्त्रियों की शिक्षा के लिए अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये । 15वीं शताब्दी के मध्य में उसने शानदार जामी मसजिद, उससे संलग्न एक खानकाह (मठ) तथा एक मदरसे का निर्माण जौनपुर में किया और इसका

1· इब्नबतूता , पृ०- 96

2· जाफर, पृ० - 8

म "नमाजगाह " रखा ।[1] उसने शिक्षा प्राप्त करने वाली विद्यार्थियों एवं
क्षकों के लिए अनुदान, एवं छात्रवृत्तियों की पूर्ण व्यवस्था की ।[2] इन
यवस्थाओं के बावजूद समाज में स्त्रियों ने शिक्षा ग्रहण करने में विशेष रुचि
हीं दिखाई ।[3] परन्तु उच्च वर्गीय स्त्रियाँ जो शिक्षा ग्रहण करना चाहती
ी, के लिए जौनपुर में शिक्षा की उत्तम व्यवस्था विद्यमान थी । ज्यादातर
स्त्रियाँ घरों में व्यक्तिगत शिक्षिकाओं से ही शिक्षा प्राप्त करती थी ।

इन विश्लेषणों के आधार पर कहा जा सकता है कि 14वीं तथा
15वीं शताब्दी में जौनपुर के समाज में स्त्रियों की स्थिति मिली- जुली थी ।
कहीं स्त्रियाँ विशिष्टता की परिधि में थी तो कहीं निर्धनता के कारण
मजदूरों के रूप में विद्यमान थी । उच्च वर्गीय हिन्दू महिलाएं तथा मुस्लिम
महिलाओं की स्थिति समाज में कुछ ठीक थी , परन्तु निम्न वर्गीय महिलाएं
शोषण का शिकार थी ।

---

1. आर0डब्लू, पोगसन, पृ0-56 तथा जाफर, पृ0- 128
2. एन0एन0लॉ, प्रोमोशन आफ लर्निंग इन इण्डिया, पृ0-101
3. डा0शेफाली चटर्जी, पृ0 -

शिक्षा व्यवस्था :

जौनपुर के शर्की शासन काल में एक ओर जहाँ प्रशासनिक व्यवस्था उत्तम थी, वहीं शिक्षा के क्षेत्र में भी जौनपुर ने प्र्याप्त प्रगति की । साहित्य समाज का दर्पण होता है और शिक्षा के बिना साहित्य अधूरा रहता है ।

मुस्लिम संस्कृति के विकास में दिल्ली शासकों के अतिरिक्त प्रान्तीय राज्यों ने भी शिक्षा के सामान्य प्रगति के क्षेत्र में अभूतपूर्व योगदान दिया ।[1] इन प्रान्तीय राज्यों में जौनपुर ने शिक्षा के क्षेत्र में पर्याप्त प्रगति की । तत्कालीन समाज में शिक्षा ग्रहण करने का एक मात्र उद्देश्य धार्मिक एवं नैतिक प्रशिक्षण प्राप्त करना था ।

सैनिक शिक्षा, शिक्षा का एक महत्वपूर्ण अंग था । घुड़सवारी व धनुर्विद्या का प्रशिक्षण दिया जाता था ।[2] सुल्तान यदा - कदा विद्वान

1• एन0एन0लौ0, प्रोमोशन आफ लर्निंग इन इण्डिया, पृ0– 80

2• डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0 – 188

शिक्षकों को राजकीय कार्यों में सहयोग हेतु आमन्त्रित करते थे । वे राजनीतिक संस्थानों के सम्बन्ध में अत्यन्त व्यवहारिक ज्ञान रखते थे । अत: राजनीतिक ज्ञान भी शिक्षा का प्रमुख अंग था । छात्रों को ललित कलाओं का भी प्रशिक्षण दिया जाता था तथा छात्र संगीत, चित्र कला एवं अन्य ललित कलाओं के प्रशिक्षण हेतु शिक्षक के निवास स्थान पर जाते थे ।[1] यान्त्रिक प्रशिक्षण की भी व्यवस्था थी ।[2]

धर्मशास्त्र एवं तात्विक विषयों के अतिरिक्त इतिहास, छन्द शास्त्र, लेखन कला और गणित पर भी विशेष ध्यान दिया जाता था।[3] धार्मिक शिक्षा का भी प्राविधान था जो छात्रों के लिए विशेष रूप से अनिवार्य थी ।

शिक्षा विधि:

मुस्लिम भारत में राज्य के समस्त मकतब, मदरसों, मस्जिदों

- -

1· इम्पी०गजाटियर आफ इण्डिया, जिल्द -4, पृ0-436

2· वही

3· जाफर, पृ0 - 12

खन्काहों, (मठों), एवं व्यक्तिगत भवनों में शिक्षा प्रदान की जाती है ।
मुख्यतया शिक्षा की तीन विधियाँ सर्वमान्य थी:-

1• उच्चतर शिक्षा,

2• माध्यमिक शिक्षा, तथा

3• प्रारम्भिक या प्राइमरी शिक्षा ।[1]

उच्चतर शिक्षा उच्च शिक्षित प्राध्यापकों द्वारा दी जाती थी । विद्वान एवं प्रसिद्ध सूफी सन्त छात्रों को शिक्षा प्रदान करते थे । माध्यमिक शिक्षा मस्जिदों एवं मठों में दी जाती थी ।[2] समस्त प्रतिष्ठित सन्तों का मकबरा शिक्षा का एक महत्वपूर्ण केन्द्र माना जाता था । इनके असीम परिश्रम एवं विस्तृत ज्ञान के कारण लोग उनका आध्यात्मिक उपदेशक के रूपमें सम्मान करते थे ।[3]

- -

1• इम्पी0 गज़ेटियर, जिल्द -4, पृ0- 16

2• जाफर , पृ0- 19

3• वही ।

प्राइमरी स्कूलों एवं व्यक्तिगत भवनों में प्रारम्भिक शिक्षा की उत्तम व्यवस्था थी ।[1] जब छात्र अच्छी तरह से लिखने एवं पढ़ने में पारंगत हो जाता था तो उसे मकतब या मदरसों में कला एवं विज्ञान के अध्ययन की अनुमति दी जाती थी ।[2]

शिक्षा के क्षेत्र में धार्मिक संस्थायें महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती थी । 11वीं शताब्दी के लगभग मुस्लिम क्षेत्रों में उच्च विद्या की संस्थाएं धार्मिक झुकाव के साथ शिक्षा केन्द्रों के रूप में विकसित हो चुकी थी, जिन्हें मदरसा कहा जाता था ।[3] विशेष रूप से धार्मिक शिक्षा के मदरसे हुआ करते थे । इनमें धार्मिक शिक्षा के साथ - साथ सहायतार्थ भाषा सम्बन्धी शिक्षा भी दी जाती थी । ये मदरसे कट्टर धर्मवादिता के पोषक थे तथा इन्हें सरकारी आर्थिक सहायता भी प्राप्त थी ।[4]

2· जाफर, पृ० 109 तथा डा०शेफाली चटर्जी, पृ० 189

3· जाफर , पृ० - 20

4· डा० शेफाली चटर्जी, पृ० - 190

मध्य युगीन विचार धारा में धार्मिक प्रभाव बढ़ जाने के कारण राजनीति, दर्शन शास्त्र और शिक्षा को उसके अन्तर्गत कर दिया गया था। मदरसों के अलावा मकतब मुस्लिम राज्य में उच्च श्रेणी की शिक्षा के केन्द्र थे, जिनमें प्राथमिक तथा माध्यमिक से निम्न श्रेणी की शिक्षा दी जाती थी। धर्म समस्त शिक्षा का मूल आधार था। प्रत्येक मदरसा तथा मकतब अपनी मस्जिद के साथ सम्बन्धित रहता था।[1]

प्रत्येक मसजिद में छात्रों को धर्म के साथ - साथ विज्ञान के सम्बन्ध में निर्देश देने के लिए अलग - अलग कक्षाएं होती थीं जिसमें धार्मिक शिक्षा के साथ ही साथ धर्म निरपेक्ष शिक्षा प्रणाली को भी प्रोत्साहन मिला।

इन धार्मिक तथा शिक्षा सम्बन्धी संस्थाओं की सुव्यवस्था के लिए राज्य द्वारा अलग से विभाग खोले गये थे। सुल्तान एवं अमीर वर्ग अपने व्यय पर राज्यों के विभिन्न भागों में मकतब तथा मदरसे एवं पुस्तकालय खोलते थे।[2]

1· जाफर, पृ0 - 27

2· वही, पृ0 - 9

इस काल में शिक्षा का माध्यम तथा दरबार की भाषा फारसी थी ।[1] मुसलमानों के लिए अरबी का ज्ञान अनिवार्य था क्योंकि अरबी, " कुरान" की भाषा थी । प्रत्येक मुस्लिम छात्र के लिए यह आवश्यक था कि सर्वप्रथम वह " कुरान " का अध्ययन करे, उसके पश्चात उसे अन्य कलाओं एवं विज्ञान को पढ़ने की अनुमति थी । परीक्षा का व्यवस्था उस समय प्रचलित नहीं थी ।[2]

शिक्षकों को समाज में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था ।[3] शिक्षकों तथा छात्रों का सम्बन्ध पिता - पुत्र की भाँति था ।[4] शिक्षक छात्रों से किसी प्रकार का नियमित शुल्क नहीं लेता था । इस काल में शिक्षण की घरेलू पद्धति प्रचलित थी । कभी - कभी एक विद्वान व्यक्ति के स्थान को निर्देशन का केन्द्र बना दिया जाता था जो यदा - कदा छात्रों के छात्रावास का भी समुचित प्रबन्ध किया करता था ।[5]

1· जाफर, पृ0-- 20

2· प्रो0बनारसी प्रसाद सक्सेना,मुगल सम्राट शाहजहाँ, पृ0- 258

3· कबीर, ग्रन्थावली (सं0 माता प्रसाद गुप्ता) साखी,1, पद-1,5 पृ0 - 1

4· जाफर, पृ0-- 5

5· एन0एस0ला0, प्रोमोशन आफ लर्निंग इन इण्डिया, पृ0- 117

आम तौर पर एकान्तवासी सूफी सन्त ही धार्मिक शिक्षा प्रदान करते थे। ये लोग या तो निःशुल्क या नाम मात्र पारिश्रमिक लेकर शिक्षा प्रदान करते थे।[1] राज्य द्वारा परिचालित शिक्षण संस्थाओं के शिक्षकों को वेतन दिया जाता था। उनके वेतन के लिए कुछ भू - सम्पत्ति राज्य की ओर से निर्धारित थी, परन्तु व्यक्तिगत स्कूलों के शिक्षक वैयक्तिक सेवा एवं पुरस्कार के अतिरिक्त कुछ नहीं लेते थे। गाँव के शिक्षकों को उनका वेतन अनाज के रूप में दिया जाता था।[2]

जौनपुरकेप्राय: सभी शासक इस बात का गौरव अनुभव करते थे कि उन्होंने शिक्षा और विज्ञान को राजकीय संरक्षण प्रदान किया।[3] उच्चतर शिक्षा के केन्द्र के रूप में जौनपुर विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए भारत के समस्त भागों से छात्र यहाँ आते थे।[4]

1• डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0 - 190
2• जाफर, पृ0 - 11
3• डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0- 191
4• वही

यहाँ तक कि अफगानिस्तान और बुखारा के छात्र भी यहाँ के प्रसिद्ध विद्वानों में व्याख्यान सुनने आते थे ।[1] जौनपुरी शिक्षा की तुलना उन विश्वविद्यालयों की शिक्षा प्रणाली से की जा सकती है जहाँ विभिन्न देशों के विद्वान शिक्षा देते थे एवं विदेशों में शिक्षा के नवीनतम विकास के प्रति अपने को जागरूक रखते थे ।[2] इन विद्वानों में अधिकतर नये थे जिन्होंने अपनी शिक्षा, अरब, फारस, ईराक, एवं ईरान से प्राप्त की थी तथा जौनपुर आकर स्थायी रूप से बस गये थे ।[3]

छात्रों के क्रमिक विकास की जानकारी शैक्षिक पदाधिकारियों द्वारा ही की जाती थी ।[4] वर्तमान दीक्षान्त समारोह के सदृश ही उस समय भी प्रतिवर्ष एक समारोह का आयोजन सिंहासनारूढ़ शासक के द्वारा

1• जाफर, पृ0- 18

2• अली मेंहदी जान, जामी-उल-उलूम मुल्ला महमूदस डिटर्मिनेशन एण्ड फ्रीवील पृ0 - 7

3• वही , पृ0- 7

4• जाफर , पृ0- 24

किया जाता था । इस समारोह में उल्लेखनीय विद्वान पुरस्कृत किये जाते थे । यह समस्त कार्य शिक्षा को उन्नत बनाने की दृष्टि से ही किया जाता था ।[1]

सुल्तान इब्राहिम शर्की से लेकर सुल्तान हुसेन शाह शर्की तक सभी शर्की सुल्तानों ने शिक्षा को उन्नत बनाने का अथक प्रयास किया । शर्की सुल्तानों में सुल्तान इब्राहिम शाह शर्की शिक्षा के क्षेत्र में सबसे उल्लेखनीय शासक के रूप में माना जाता है । इसी के शासन काल में ही शिक्षा सम्बन्धी गौरव के कारण जौनपुर भारत का "शीराज " (शीराज -ए- हिन्द) होने का महत्त्वपूर्ण गौरव प्राप्त किया ।[2]

जौनपुर के शैक्षिक गौरव से प्रभावित होकर "फरीद" जो बाद में इतिहास में शेरशाह के नाम से जाना जाता है, ने अपनी शिक्षा जौनपुर के

- -

1• डा० शेफाली चटर्जी, पृ० - 192

2• वही, पृ० - 61

मदरसों में ही प्राप्त की ।[1] अपने पिता को लिखे गये एक पत्र में " फरीद" ने इसका उल्लेख किया है कि सासाराम की अपेक्षा जौनपुर शैक्षिक निर्देशन के क्षेत्र में उत्तम स्थान है ।[2]

इस प्रकार शर्की शासकों के अथक प्रयास के फलस्वरूप जौनपुर ने अभूतपूर्व शैक्षिक ख्याति अर्जित की । भारत वर्ष में शिक्षा के क्षेत्र में जौनपुर को " इल डो राडो " के नाम से सम्बोधित किया जाता है ।[3]

मि0 डंकन जो 1787 ई0 में बनारस के रेजीडेन्ट नियुक्त किये गये थे , ने अपने लेख में कहा है कि " शिक्षा के क्षेत्र में यह शहर प्रतिष्ठा के चरमोत्कर्ष पर पहुँच गया था । इसलिए इस शहर को " शीराज" तथा "भारत वर्ष का मध्ययुगीन पेरिस " कहा जाने लगा था ।[4]

1• शेरशाह , अब्बास खाँ शेरवानी, पृ0 - 20

2• वही, पृ0-19-20, प्रोमोशन आफ लर्निंग इन इण्डिया, पृ0-100, युसुफ हुसैन, पृ0 - 72

3• जाफर , पृ0 - 63

4• वही, शर्की आर्कि0 आफ जौनपुर, पृ0 - 21

सुल्तान सिकन्दर लोदी की ध्वंसात्मक कार्यवाइयों के परिणाम स्वरूप जौनपुर के शिक्षा के सारे केन्द्र नष्ट हो गये, परन्तु जो भी अवशिष्ट रहे , वे जौनपुर के गौरवशाली अतीत को बताने के लिए पर्याप्त हैं ।[1]

- -

1• डा0 शेफाली, चटर्जी, पृ0 - 196•

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx xxxx

सामाजिक इतिहास - भाग - 2

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

सामाजिक इतिहास

भाग - 2

धार्मिक उत्सव एवं त्योहार :

प्राचीन काल से ही धार्मिक उत्सवों एवं त्योहारों को मनाये जाने की विशेषता भारतीय समाज का प्रमुख अंग रही है । मध्यकालीन भारतीय में हिन्दू -मुस्लिम दोनों ही सम्प्रदाय अपने त्योहारों को बडी धूमधाम से मनाते थे । इस काल में हिन्दू एवं मुस्लिम दोनों के अलग - अलग त्योहार हुआ करते थे तथा सभी त्योहारों को मनाने का ढंग भिन्न - भिन्न था। हिन्दुओं एवं मुस्लिम के धार्मिक उत्सव एवं त्योहारों की रूपरेखा इस प्रकार है ।

हिन्दू तीज - त्योहार एवं तीर्थयात्रायें -

हिन्दुओं के त्योहार प्राय: साल की सभी महत्वपूर्ण ऋतुओं में होते थे । हिन्दु त्योहार अधिकांशत: महिलाओं व बच्चों द्वारा मनाये जाते थे ।[1]

---

1. अल्बरूनी, इण्डिया 2, (सचाउ), पृ० - 178-184

चैत्र मास की ग्यारहवीं तारीख (एकादशी) को हिन्दुओं द्वारा एक त्योहार मनाया जाता था जिसे " हिंडोली -चैत्र " कहते थे । इस अवसर पर लोग देवग्रह या वासुदेव के मन्दिर में एकत्र होते थे तथा यह त्योहार मनाते थे, अपने घरों में भी लो ग पूरे दिन उत्सव मनाते थे ।[1]

चैत्र की पूर्णिमा को वहन्त (बसन्त) नामक त्योहार होता था जिसमें महिलायें आभूषणों से सुसज्जित होकर अपने पति से उपहारों की माँग करती थी । चैत्र मास की ही बाइसवीं तारीख को चैत्र षष्ठी नामक त्योहार होता था, जिसमें भगवती की उत्साह एवं उल्लास के साथ पूजा की जाती थी ।[2]

वैशाख की तृतीया को एक त्योहार होता था जिसे गौर-त्र (गौरी तृतीया) कहा जाता है । इस अवसर पर पर्वत हिमवत की पुत्री और महादेव की पत्नी गौरी की पूजा होती थी ।[3]

1· अलबरूनीज, इण्डिया 2, (सचाउ) पृ0 -178 ,मृगावती ,पृ0-79

2· वही, पृ0 178-179

3· वही, पृ0- 179

ज्येष्ठ के प्रथम दिन, जो कि नये चन्द्रमा का दिन होता है, हिन्दू एक उत्सव मनाते थे तथा अनुकूल शकुन करने के लिए जल में सभी बीजों के प्रथम फलों को फेंकते थे। इस मास की पूर्णिमा के दिन महिलाओं का त्योहार पड़ता था जिसे " रूप - पंका " कहा जाता था।[1]

भाद्र पद के महीने में जब चन्द्रमा दसवें कक्ष - माघ में रहता है तो वे एक त्योहार मनाते थे, जिसे पितृ-पक्ष कहा जाता था। अर्थात् अपने पूर्वजों का पखवारा, क्योंकि चन्द्रमा इस कक्ष में उस समय प्रवेश करता है जब नव चन्द्र का समय समीप रहता है। वे अपने पूर्वजों के नाम पर इस पखवारे में भिक्षुओं को शिक्षा प्रदान करते थे।[2]

हिन्दुओं का सबसे महत्वपूर्ण त्योहार " बसन्त पंचमी ", होली, दीपावली, शिवरात्रि एवं एकादशी आदि है।

बसंत पंचमी का त्योहार बसंत का पूर्व सूचक है जो माघ मास में

- -

1• अलबरूनीज, इण्डिया 2 ॥सचाउ॥ पृ0-178, मृगाक्षी, पृ0 - 79

2• वही, पृ0 - 180

मनाया जाता था ।[1] इस अवसर पर गीत गाये जाते थे जिसे " चंचरी " कहा जाता था । लोक नृत्य होता था तथा अबीर गुलाल आदि छिड़का जाता था ।[2]

होली, जैसा कि आज भी है, हिन्दुओं का सबसे महत्त्वपूर्ण व लोकप्रिय त्योहार था । यह फाल्गुन के शुक्ल पक्ष के अन्तिम दिन मनाया जाता था । होली के पूर्व तीन दिनों तक सभी वर्णों और वर्गों के हिन्दू, हर किसी, यहाँ तक कि अपरिचित पथिक को भी केशरिया और अन्य रंगीन जल से भिगो डालते थे । तीसरे दिन सन्ध्या को प्रायः सम्पूर्ण जन समुदाय एक बृहदाकार उत्सवाग्नि के चारों ओर एकत्र होता था और अगली फसल अच्छी होने के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता था ।[3]

श्रावण मास की पूर्णमासी ब्राहमणों का प्रिय त्योहार था । सिल्क और पत्नी से बनी राखियाँ भाइयों की कलाई में बहने या अन्य कुमारियाँ

---

1. ढोला मारूरा दूहा, द्वितीय संस्करण, वि०सं० 2011, दोहा-145, पृ०-82
2. जायसी, पदमावत, द्वितीय संस्करण, वि०सं०-2018, सर्ग-32, दोहा-252/12 पृष्ठ- 426
3. मीरा की पदावली, शक 1884, पद-78, 115 व 148, पृ०-125, 136 पद 175, पृ०- 153

पहनाती थी, जिसे प्रेम व स्नेह का प्रतीक माना जाता था ।[1]

क्षत्रियों व कृषक- वर्गों के बीच दशहरा बहुत ही लोकप्रिय त्योहार था, जो आश्विन के शुक्ल पक्ष के दसवें दिन पड़ता था । देवी दुर्गा की पूजा, विशेष रूप से बंगाल में, बड़े उत्साह और उमंग के साथ की जाती थी । इसका दूसरा पहलू यह था कि हिन्दुओं के विभिन्न वर्गों द्वारा अपनाये गये व्यापार, धन्धे या पेशे के औजारों की पूजा होती थी ।[2]

दीपावली जिसे सामान्यतया दिवाली कहा जाता था, हिन्दुओं का एक महत्वपूर्ण तथा हर्षोल्लास का पूर्व था ।[3] अलबरूनी के अनुसार जब जै कार्तिक के प्रथम दिन, जो नये चन्द्रमा का दिन होता है और जब सूर्य तुला में अग्रसर होता है, तब दिवाली पड़ती है । इस दिन रात्रि के आगमन पर हर

1· के०एम०अशरफ, लाइफ एण्ड कन्डीशन आफ दि पिपुल्स आफ हिन्दुस्तान (1959) पृ0- 203-4

2· वही

3· अब्दुल रहमान कृत संदेश रासक (1960) सर्ग -3, छन्द -178, पृ0 - 53

जगह बड़ी संख्या में दीप जलाये जाते थे ताकि हवा पूर्णतः स्वच्छ हो सके । यह धन की द्योतक लक्ष्मी का त्योहार भी माना जाता था । हिन्दुओं का विश्वास है कि कृत युग में यह त्योहार भाग्य का त्योहार माना जाता था ।[1]

तीर्थ यात्राएं हिन्दुओं के लिए अनिवार्य नहीं थी बल्कि वैकल्पिक व कीर्तिप्रदायी थी । कोई भी व्यक्ति पवित्र प्रदेश, किसी पूजनीय प्रतिमा या पवित्र नदियों के जल में स्नान के लिए चल पड़ता था । इस समय गंगा व यमुना पवित्र नदियों के रूप में विद्यमान थी ।[2] पवित्र स्थानों के रूप में काशी (बनारस) प्रसिद्ध था ।[3] मथुरा भी एक धार्मिक स्थान था ।[4]

इस प्रकार हिन्दुओं में त्योहारों के प्रति उल्लास एवं इस समय के समाज की एक प्रमुख विशेषता थी ।

1• अलबरूनीज इण्डिया-2 (सचाउ) पृ0-182, विलियम कुक, रेलिजन एण्ड फोकलोर आफ इण्डिया, लन्दन (1926), पृ0- 346

2• अलबरूनीज इण्डिया 2 (सचाउ) पृ0-144-45

3• वही, पृ0- 146-47

4• वही, पृ0 - 147-48

मुस्लिम त्योहार एवं तीर्थ यात्राएं :

इस काल में मुस्लिम समाज के मध्य भी अनेक उत्सव, त्योहार एवं तीर्थयात्राएं प्रचलित थी।[1] अधिकांश मुसलमान मक्का की तीर्थयात्रा करते थे, जबकि अन्य ईद के मौके पर होने वाली इबादतों में शामिल होते थे । शर्की शासन काल में मुस्लिम समाज अपने त्योहारों को बड़ी धूम-धाम से मनाया करता था । इस काल में स्वाभाविक रूप से भारतीय वातावरण तथा परम्पराओं का मुस्लिम समाज पर प्रभाव पड़ा ।[2] इसलिए बदलते हुए समय के साथ मुसलमानों ने की ही भाँति अपने त्योहारों को सामाजिक एवं मनोरंजनात्मक प्रवृत्ति का आवरण दिया । इस काल में मुसलमानों द्वारा मनाये जाने वाले प्रमुख धार्मिक उत्सव तथा त्योहार निम्नलिखित है -

नौरोज -

मुस्लिम समुदाय सरकारी त्योहार के रूप में " नौरोज " मनाता था , जो सामान्यतया " इरानी नव वर्ष के दिन मनाया जाता था ।[3]

1· के0पी0 साहू, पृ0- 266

2· के0एम0अशरफ, पृ0- 204

3· अमीर खुसरो, ऐजाज-ए-खुसरवी, भाग - 4, पृ0-229-30

यह बसन्त का त्योहार था, जो बड़े उद्यानों और नदी, तट, पर स्थिति बगीचों में मनाया जाता था तथा इसका मुख्य आकर्षण आकर्षण संगीत तथा रंग- बिरंगे फूल हुआ करते थे ।[1] यह त्योहार मुख्यत: मुसलमानों के उच्च वर्गों तक ही, जो सुल्तान से घनिष्ठ सम्बन्ध रखते थे, तक ही सिमित था ।[2]

ईद-उल-फित्र - मुस्लिम समुदाय के मध्य धार्मिक लोगों के लिए इद-उल-फित्र सर्वाधिक महत्व का त्योहार था ।[3] इस त्योहार की तारीख का निर्धारण चाँद देखने से होता था ।[4] इस अवसर पर चारों ओर खुशियाँ मनायी जाती थी तथा ढोल पीटे जाते थे ।[5] मस्जिद में ईद की नमाज पढ़ने के बाद जश्न मनाने का कार्यक्रम होता था ।[6] एक दूसरे को उपहार देना, सन्तों के दर्शन करना व मजलिसे आयोजित करना, इस त्योहार का महत्वपूर्ण अंग था[7]। इस त्योहार

1· नूह-सिपेहर, पृ0-368 ﴾उद्धृत के0पी0साहू पृ0-267﴿
2· के0एम0अशरफ, पृ0-205,
3· अमीर खुसरो, पृ0-326-27 तथा इब्नबतूता, पृ0-60-62
4· के0पी0साहू, पृ0-267
5· अफीफ, पृ0-361, तथा रिजवी पृ0-143
6· इब्नबतूता, पृ0-60-62
7· इब्नबतूता, पृ0-60-62 तथा अफीफ, पृ0-361-62 तथा रिजवी, पृ0-143-44

में विशेष रूप से शाही जुलूस निकाला जाता था ।[1]

ईद-उल-जुहा :- वर्ष के अन्तिम माह जिल हज्जा के दसवें दिन मुसलमान ईद-उल-जुहा का त्योहार मानते थे ।[2] इस त्योहार पर ऊँट या भेड़ या बकरी की बलि दी जाती है तथा उसके बाद यह त्योहार जश्न के साथ मनाया जाता है ।[3]

शबे- बारात -

शा-बान महीने की चौदहवीं रात को मनाये जाने वाला मुसलमानों का यह एक महत्त्वपूर्ण त्योहार था ।[4] भारत में कभी - कभी प्रार्थनाएं (इबादतें) केवल समूहों या अनेक लोगों द्वारा समवेत रूप से की जाती थी ।[5] धार्मिक रूप से उत्साही लोग यह पूरी रात खास इबादतें करने और पवित्र कुरान पढ़ने में बिता देते थे । इस अवसर पर मस्जिदों में मोमबत्तियाँ भेजने, और फुलझड़िया तथा पटाखे छोड़ने का लोकप्रिय रिवाज था।[6] सम्भवत: शबे-बारात मनाने के

1· अफीफ , पृ0- 361 तथा रिजवी, पृ0- 143
2· अमीर खुसरो, पृ0- 229-30, तथा बरनी, पृ0- 113-14
3· किरान-उस्सादैन , पृ0-73-82, तथा रशीद, पृ0- 124
4· के0एम0अशरफ, पृ0-205,तथा डा0ई0डी0रास (हिन्दू मुसलमान फिस्टस) पृ0 - 111-12
5· फवेद-उल-फुआद, पृ0- 324
6· एजाज-ए-खुसरवी, पृ0-324

लिए फुलझडिया तथा पटाखे छोड़ने का सर्वसाधारण प्रचलन मुसलमानों ने हिन्दुओं व ईसाइयों से लिया ।[1]

महर्रम :

मुसलमानों के लिए यह एक शौक का त्योहार था जो खास तौर पर शिया तथा कट्टर धार्मिक विचारों वाले मुसलमानों द्वारा मनाया जाता था।[2] इस त्योहार को मनाने में मुस्लिम सम्प्रदाय मुहर्रम के प्रथम दस दिन कर्बला के बीरों की शहादत के विवरण पढ़ते थे तथा उनकी रूहों की चिर शान्ति के लिए खास तौर पर इबादतें (प्रार्थनाएं) करते थे ।[2] इस अवसर पर जुलूसों में तजिये निकलते थे, जिन्हें मकबरों का लघु अनुकरणात्मक रूप माना जाता था ।[4]

उर्स -

उपरोक्त त्योहारों के अतिरिक्त मुसलमान सूफी सन्तों की दरगाहों मजारों, तथा मकबरों पर जाकर इनकी बरसी, या " उस " मनाया करते थे ।[5]

1• एडम मेज, (दि रेनेसा आफ इस्लाम) पृ0- 421, के0एम0अशरफ- पृ0- 205
2• एजाज-ए खुसरवी, पृ0-328
3• मिनहाज, पृ0-619, रिजवी पृ0-27
4• के0एम0अशरफ, पृ0- 206-207
5• मीराते- सिकन्दरी (प्रथम संस्मरण) पृ0- 103

ऐसे अवसरों पर सूफी सन्तों तथा विद्वानों की दरगाहों पर हिन्दू - मुसलमानों एकत्र होते थे । उर्स के दिनों में सन्त की स्मृति में कव्वालियाँ, उनकी प्रशंसा में तज्कीरें तथा कवि गोष्ठियाँ आदि हुआ करती थी ।[1]

खान पान तथा वेशभूषा -

प्राचीन काल से ही भारतीय अपने दैनिक भोजन पर विशेष ध्यान देते रहे हैं । कालक्रम में उन्होंने अपने पाक -कुशलता का प्रदर्शन किया है । समाज के विभिन्न स्तरों में, अपनी स्थिति एवं साधन के अनुरूप विभिन्न प्रकार के भोजन प्रचलित थे ।[2]

जब भारतीयों का सम्पर्क मुस्लिम समुदाय से हुआ तो एक नये युग का प्रारम्भ हुआ । अनेक नवीन प्रणालियाँ एवं रीतियाँ भारतीयों ने अपनाया , जिसका प्रभाव उनके विविध जीवन स्तर पर पड़ा । भारतीयों के खान-पान पर मुस्लिम सम्पर्क का जितना प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा, उतना जीवन के किसी अन्य पहलू पर परिलक्षित नहीं होता है । इस सन्दर्भ में मध्यकालीन भारतीय समाज में जौनपुर

- -

1• तारीखे मुबारक शाही, पृ० - 238

2• के०पी० साहू, पृ०- 29

राज्य में प्रचलित खान - पान व्यवस्था एक सुन्दर उदाहरण है ।

खान- पान :-

हिन्दू एवं मुस्लिम दोनों ही जातियों के कुलीनों तथा अमीरों में विभिन्न प्रकार के पौष्टिक भोजन का प्रचलन था । सुल्तान साधारणतया अपने कुलीनों तथा अमीरों के संग एक ही दस्तर ख्वान पर खाना खाते थे ।[1] इस प्रकार के विशेष सामुदायिक सहभोज का एक कारण तो इस्लाम धर्म में निहित भ्रातृभाव था तथा एक अन्य कारण सुल्तानों की कूटनीतिक व्यूह कौशल भी था ।

राजकीय भोजनों में अधिकतर ब्रन्ज[2] (चावल), सुर्ख-बिरियानी[3] (आधुनिक पुलाव), नान[4] (एक प्रकार की रोटी), नान-ए तन्दूरी[5]

1• तारीखे दाऊदी, पारसी पाण्डुलिपि ,ओ0पी0एस0पी0-86(बी)

2• तारीखे दाउदी, " " सं0 100, सूची पत्र सं0-548, ओ0पी0एल0

3• आइन(एस)अलीगढ़, 1917, पृ0- 119

4• अमीर खुशरो (हश्त- लहिश्त) मौलाना सुलेमान अशरफ द्वारा सम्पादित पृ0 - 126

5• तारीखे शाही, पृ0- 58

समोसा[1], काबाब-ए-मुर्ग[2], बच्च-ए-ए-मुर्ग[3], हल्वा[4], एवं मछली का समावेश होता था ।

13वीं शताब्दी से 15वीं शताब्दी के अन्त तक समकालीन ऐतिहासि ग्रन्थों में गेहूं या मैदा की बनी हुयी रोटियों का उल्लेख प्राप्त होता है । सामान्यतः लोग चना, मटर, ज्वार तथा बाजरे का प्रयोग रोटी बनाने में किया करते थे ।[5] चावल, सब्जी तथा सरसों के तेल का प्रयोग भी किया जाता था।[6] इस काल में 21 प्रकार के चावल का उल्लेख मिलता है ।[7] चावल की फसल बंगाल में वर्ष में दो बार होती थी । यहाँ गेहूं, सोयाबीन विभिन्न प्रकार की दालें, बाजरा, अदरख, सरसों, प्याज, बैंगन, तथा अनेक प्रकार की सब्जियाँ भी पैदा होती थी ।[8] गेहूं की रोटी व पूरी लोग दाल,

- -

1. मीरात-ए-सिकन्दरी, पृ0- 71

2. तारीखे शाही, पृ0- 118

3. टी0एफ0एस0 (बी), सैय्यद खाँ द्वारा सम्पादित (1926) पृ0- 116

4. तारीखे बैहक्वी (डब्लू0एच0मोर्के द्वारा सम्पादित पृ0- 123

5. रिजवी, पृ0- 160

6. इलियट एण्ड डाडसन, पृ0- 583

7. के0एस0लाल, पृ0- 273

8. वही

माँस तथा सब्जियों के साथ खाते थे। चपातियाँ तन्दूर व चूल्हे में पकाई जाती थी।[1] अन्य व्यंजनों में मट्ठा, खजूर, माँस तथा माँस का सूप(आश) पराठा हलवा, हरीसा प्रचलित थे।[2] कहीं - कहीं लोग खिचड़ी व सत्तू खाते थे।[3]

भोजन दो प्रकार का होता था, शाकाहारी तथा माँसाहारी भारतीय समाज में अधिकांश लोग शाकाहारी थे। हिन्दू,मुस्लिम सन्त, पुरोहित, पंडित , ब्राहमण, जैन व बौद्ध या वैष्णव मत के मानने वाले अधिकांश लोग शाकाहारी थे। शाकाहारी भोजनों में विभिन्न प्रकार की मौसिमी सब्जियाँ, अनाज तथा दूध से निर्मित वस्तुएं एवं मिठाइयाँ इत्यादि सम्मिलित थे।[4]

समकालीन साहित्य में माँसाहारी, भोजन के सम्बन्ध में अनेक सन्दर्भ प्राप्त होते थे। समुद्र तटीय प्रदेश में मछली पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध थी और इस कारण वहाँ के लोग मछली का सेवन करते थे। शहरों व गाँवों में

1• फुतूहाते- फिरोजशाही, पृ0- 174, 273

2• इब्नबतूता, पृ0- 38

3• वही0 पृ0- 49

4• राधेश्याम , पृ0- 246-48

जहाँ नदियाँ, पोखर, ताल से मछली प्राप्त होती थी वहाँ समाज में ऐसा वर्ग था, जो कि मछली खाता था । विद्यापति ने कीर्तिलता में जौनपुर के मछली बाजार का विस्तृत वर्णन किया है । [1] इस काल में विभिन्न प्रकार की मछलियाँ बाजार में उपलब्ध थी । मांशाहारी भोजन में गाय व बकरे का गोस्त, मुर्गे का माँस खाने का अत्यधिक प्रचलन था । इसके अतिरिक्त भेंड,बकरी, भैंसे , हिरन, पाक्षियों, में कबूतर ,सारस, हरियल इत्यादि जीव- जन्तुओं का माँस खाया जाता था ।[2]

विभिन्न प्रकार के शाकाहारी तथा मांशाहारी व्यजंनों के पकाने में , नमक,तेल, चीनी, प्याज, लहसुन, अदरख, विभिन्न मसालें, सिरके आदि का प्रयोग किया जाता था ।[3]

- -

1. कीर्तिलता , पृ0- ।
2. राधेश्याम , पृ0- 250
3. वही,

पान -

इस काल में पान खाने का रिवाज था तथा विभिन्न समारोहों एवं उत्सवों में पान अवश्य रहता था । इसीलिए समाज पान लगाने वाले तम्बोलियों की संख्या पर्याप्त मात्रा में थी ।[1] पान के पत्ते में चूना लगाकर व सुपाड़ी डालकर पान खाने के पर्याप्त उदाहरण प्राप्त होते हैं ।[2]

पेय पदार्थ :

पानी मनुष्य के लिए अत्यावश्यक था तथा शुद्ध जल का प्रयोग स्वास्थ्य के लिए लाभदायक माना जाता था । सर्वत्र शर्बत का प्रयोग होता था । अनेक पेय पदार्थों में फुक्का भी सम्मिलित था ।[3] शर्बत में अतर के शर्बत, मिश्री व गुलाब जल, कस्तूरी तथा शहद मिले हुए शर्बत का उल्लेख मिलता है ।[4]

1· कबीर, दो0-29, पृ0-42, तथा अलबरूनी, पृ0- 237 तथा मृगावती, दो0 - 35, पृ0- 28

2· इब्नबतूता , पृ0- 244

3· इब्नबतूता, पृ0-4,6, 49,65,66, 119,121,तथा 139

4· रिजवी, पृ0- 406-407

यहाँ मन्दिरा पान का भी प्रचलन था । मित्रों की गोष्ठियों में बैठकर मदिरापान करना एक आम रिवाज था । अंगूर, जौ तथा चावल से निर्मित शराब उत्पादन की प्रक्रिया का उल्लेख प्राप्त होता है ।[1]

हिन्दू भोजन से पूर्व मदिरापान करते थे । शासकों के यहाँ मदिरापान कराने के लिए सुन्दर दासियाँ नियुक्त होती थीं ।

वेश भूषा -

इस काल में हिन्दू व मुसलमान दोनों ही अपनी वेशभूषा के लिए बहुत ही सजग थे । वे अपनी आय, सामाजिक स्तर तथा जलवायु के अनुसार ही परिधान धारण करते थे ।

सुल्तान तथा सम्पन्न लोगों की पोशाक -

सुल्तान आकर्षक एवं सुशोभित वस्त्र धारण किया करते थे । सुल्तान तथा कुलीनों की पोशाक में सामान्यतया कुलाह[2] एवं पयराहन[3] का समावेश होता था । सुल्तान एक प्रकार का

1• कबीर, दो०-3, पृ०- 234

2• तारीखे दाउदी, कैटलाग सं० 548, ओ०पी०एल०, फो०-58ए, तथा 58बी

3• टी०एच०एल०﴾ए﴿ बि०ब०इण्डिया, कलकत्ता, 1891, पृ०-146

कसा हुआ "घाघरा"[1] "काबा" पहना करते थे, जो कि ऋतु के अनुसार महीन मलमल अथवा ऊन का बना हुआ होता था।

कभी - कभी वे "बागा"[2] (एक प्रकार का लम्बा लबादा) भी धारण करते थे। मलमल अथवा किसी अन्य प्रकार के कपड़े की जाँघिया प्रयोग करने का उल्लेख भी प्राप्त होता है।[3] सुल्तानों एवं कुलीनों का एक पृथक कमेष होता था, जिसे "जामा-ए-खाना" कहा जाता था।[4] सुल्तान रात्रि में एक भिन्न शयन वस्त्र का प्रयोग करते थे, जिसे "जामा-ए-ख्वाब" कहते थे।[5] इसके अतिरिक्त वे "मोजा"[6] तथा सुनिर्मित जूते अथवा "ककश"[7] पहनते थे। इसी प्रकार मुस्लिम कुलीन वर्ग भी अपनी पोशाकों में रेशमी कपड़े

- -

1• मसूदकृत तारीखे-बेहकी, डब्लू एच०मोर्ले, कलकत्ता द्वारा सम्पादित, 1862, पृ०- 78

2• मझन कृत मधुमालती, पृ०-452, पृ०- 397

3• आई०सी०भाग-31, जुलाई 1957, पृ०- 256

4• टी०एफ०एस० (ए), बिब्ब), इण्ड, कलकत्ता, 1891) पृ०-101

5• तारीखे शाही, पृ०-49

6• तारीखे फरिश्ता, भाग-1, पृ०-133 तथा मीरात, ए-सिकन्दरी, पृ०"6

7• टी०एफ०एस०(ए) पृ०- 104

पहनते थे ।[1] यदा कदा वे सुगन्ध और ताजगी के लिए ग्रीष्म ऋतु में खस का कुलाह भी पहनते थे ।[2]

आरम्भ में हिन्दुओं को मुस्लिम वेशभूषा से अत्यधिक घृणा थी परन्तु ज्यों - ज्यों हिन्दू वर्ग, मुस्लिम वर्ग के संसर्ग में आता गया उन्होंने उनकी पोशाकों का अनुकरण करना प्रारम्भ कर दिया ।

सम्पन्न मुस्लिम वर्ग की भाँति हिन्दू कुलीन वर्ग भी "क़ाबा" धारण थे । यद्यपि इसमें कुछ भिन्नता होती थी । सम्पन्न हिन्दू वर्ग की सामान्य पोशाक में " बागा "[3] अथवा उत्कृष्ट प्रकार की "धोती "[4] साथ में चादर अथवा " ओहारन "[5] धारण करते थे । इस काल में हिन्दुओं द्वारा उपयोग में किये जाने वाले " पजामा " का उल्लेख भी मिलता है । सम्पन्न

1• ई०डेनिसन रास, द्वारा सम्पादित जे०डब्लू०, भाग-1, पृ0-354

2• अमीर खुसरो, देवल रानी खिज्र खाँ, पृ0- 300

3• मंझन कृत मधुमालती, छन्द -552, पृ0- 397

4• कुतुबन की मृगावती, पृ0- 173

5• अलबरूनीज इण्डिया, ॥सचाउ॥ पृ0- 180

हिन्दू वर्ग में " पाग " या "पगड़ी " का इस्तेमाल अत्यन्त लोकप्रिय था ।[1] आम तौर चप्पलों का प्रयोग होता था, परन्तु " जूते " का प्रयोग भी पर्याप्त रूप से प्रचलित था ।[2]

स्त्रियों की वेशभूषा -

अवलोकित काल की स्त्रियाँ लगभग समान प्रकार के वस्त्र धारण करती थी । साडी तथा " अँगिया " हिन्दू स्त्रियों का सामान्य परिधान था ।[3] मलमल या रेशम की उत्तम प्रकार की साड़ियां सम्पन्न वर्ग की स्त्रियों में अत्यधिक लोकप्रिय थीं ।[4] हिन्दू महिलाएं एक डोरी का भी प्रयोग करती थी जिसे निबिन्ध कहा जाता था ।[5] इसी डोरी से कमर में कपड़े को बांधा जाता था । अँगिया को कंचुकी[6], कंचुली या चोली[7] भी

1· अल्बरूनीज इण्डिया (सचाउ) पृ0- 180

2· कीर्तिलता, छ0-27, दो0-168 , पृ0- 96

3· के0पी0साहू, पृ0-87

4· विद्यापति की पदावली, पद-164,पृ0- 270

5· वही, पद-76, दो0-8,पृ0-124, तथा पद-84,दो-2,पृ0-134

6· कुतुबन रचित मृगावती, दो0-203,पृ0- 136, तथा मंझन कृत मधुमालती दो0-206,पृ0-175 तथा दो0- 451 , पृ0- 396

7· ज्योतिरीश्वर कृत वर्णरत्नाकर, पृ0- 4

कहाजाता था । कभी - कभी उच्च वर्गीय महिलायें अत्यन्त पतली अंगिया धारण करती थी । जिससे उनका बदन स्पष्ट दिखाई पड़ता था ।[1] इस युग में घघरा भी अत्यन्त लोकप्रिय था ।[2] उच्च वर्गीय हिन्दू स्त्रियाँ जब भी घर से बाहर जाती थी तो " ओढ़नी " या " दुपट्टा " का प्रयोग करती थी ।[3]

मुस्लिम महिलाएं अपने शलवार तथा पजामा तथा आधी बांह वाली कमीज से पहचानी जाती थी । उच्च वर्ग की महिलाएं कुलीन वर्ग के पुरूषों की भाँति भी वस्त्र धारण किया करती थी ।[4] नर्तकियां व गणिकाएं स्वयं को आकर्षक बनाने के लिए निमित्त रेशम से बने अत्यन्त कसे हुए तथा जालीदार वस्त्र धारण करतीथी।[5]

- -

1• विद्यापति की पदावली, पद-208 , दो-19, पृ0-347

2• कुतुबन की मृगावती, पृ0-141

3• के0पी0साहू, पृ0- 92-93

4• तारीखे-हक्की, फारसी पाण्डुलिपि संख्या-89 ,कैटलाग सं0-537

5• अमीर खुसरो, कृत नहूर-सिपर, पृ0- 397

पुरुषों को श्रृंगार विधि तथा उनके आभूषण :

उच्च वर्गीय पुरुष अपने शारीरिक आकर्षण की वृद्धि हेतु अनेकों युक्तियाँ अपनाते थे। पुरुष अपने श्वेत केश को काला करने के लिए "केशकल्प" अथवा "खिजाब" का प्रयोग करते थे।[1] पुरुष एवं महिलाएं दोनों ही बालों को संवारने के लिए "कंघी" अथवा "ककही" का प्रयोग करते थे।[2]

नित्य कार्यारम्भ से पूर्व स्नान करने का रिवाज था। अलबरूनी हिन्दुओं में प्रचलित धावन क्रिया का उल्लेख इस प्रकार करता है "धावन क्रिया में वे सर्वप्रथम अपना पद धोते हैं फिर मुख। वे पत्नियों से सम्भोग के पूर्व भी स्वयं को स्वच्छ कर लेते हैं।[3] वे केशर एवं अन्य सुगंधयुक्त श्वेत चन्दन लगाते थे परन्तु गरीब वर्ग के लोग सरसों के तेल से ही संतुष्ट रहते थे।[4] इसके अतिरिक्त नाना प्रकार के सुगन्ध एवं सुगन्धित वस्तुएं, यथा -

---

1• अमीर खुसरो कृत मतला उल अनवार, पृ0- 173

2• मंझन कृत मधुमालती, छ0- 452, पृ0- 397

3• अलबरूनीज इण्डिया, (सचाउ) पृ0-181

4• विद्यापति की कीर्तिलता, छन्द-24, दो0-101, पृ0- 184

मृगमद[1]; कतूरी[2], अगरजाह[3], अगर[4], कर्पूर[5], कुंकुम[6] आदि भी व्यवहार में लाये जाते थे। इस्काल में साबुन के प्रयोग का उल्लेख भी प्राप्त होता है।[7] काजल[8] का प्रयोग नेत्र की क्रान्ति एवं ज्योति बढ़ाने के लिए होता था। हिन्दू अपने मस्तक पर तिलक लगाते थे।[9]

दर्पण का प्रयोग भी सामान्य रूप से होता था।[10]

1• मंझन की मधुमालती, पृ0-426, तथा तविद्यापति की पदावली पद-135, पृ0-180

2• कुतुबन की मृगावती, दो0-192, पृ0- 131

3• वही, पृ0-131

4• वही दो0-192, पृ0-131 तथा मंझन की मधुमालती, दो0-53, पृ0-44

5• मंझन की मधुमालती, पृ0-135 तथा ज्योतिरेश्वर, तृतीय पल्लव, पृ0-11

6• मृगावती, दो0-192, पृ0-131, पृ0 तथा मंझन की मधुमालती, दो0-439-पृ0- 385

8• कबीर बचनावली, ﴾अयोध्या सिंह उपाध्याय द्वारा संकलित﴿ पद -166, पृ0-164

8• कबीर साखी, सार, प्रथम संस्करण, 1956, साखी, -2, पृ0-109

9• मंझन की मधुमालती, दो0-81, पृ0- 61

10• मंझन की मधुमालती, दो0- 429, पृ0- 375

उच्च वर्गीय हिन्दुओं में बहुमूल्य आभूषण के लिए रुचि थी ।[1] आभूषणों में बावजूद, मेखला[2], नूपुर, मुद्रिका अथवा अंगूठी, हार[3] एवं कुण्डल,[4] मुख्य है।

हिन्दुओं के विपरीत मुसलमानों में आभूषणों के प्रति आकर्षण नाम मात्र था ।

स्त्रियों की श्रृंगार विधि एवं उनके आभूषण :

साधारणतया स्त्रियाँ विभिन्न प्रकार की श्रृंगार विधियों एवं आभूषणों के प्रयोग में पुरुषों से अधिक शौकीन थी । बारहवीं शताब्दी से ही भारतीय स्त्रियों में सोलह श्रृंगार ﴾ षोड्स श्रृंगार ﴿ का ज्ञान था । जैसे-"मज्जन", स्नान, वस्त्र, पत्रावली रचना, सिन्दूर, तिलक, कुण्डल अज्जन, ओष्ट सिंगार, कुसुम गंध,

---

1• अलबरूनीज इण्डिया ﴾सचाउ﴿ पृ0- 181

2• कबीर वचनावली, पद-393, पृ0- 40

3• तारीखे फरिश्चता, भाग-1, पृ0- 41

4• कुतुबन की मृगावती, दो0-207, पृ0- 138

कपोल पर तिल लगाना, गले में हार पहनना, कंचुकी पहनना, कमर में छुडघंटिका पहनना, तथा पैरों में पायल पहनना ।[1]

विद्यापति की कीर्तिलता में गणिकाओं की श्रृंगार विधियों का उल्लेख प्राप्त होता है।[2] कुतुबन की मृगावती में बारह प्रकार के आभूषणों का उल्लेख मिलता है ।[3]

श्रृंगार विधियों के अनेक वस्तुओं में पुष्प का विशेष महत्त्व था । स्त्रियाँ अपने केश को पुष्पों से सुशोभित करती थी तथा पुष्पों को आभूषण की भाँति पहनती थी ।[4] युवतियाँ अपनी केश राशि की वेणियाँ बनाती थी ।[5]

1• विद्यापति की पदावली, पद-73, पृ0-111 तथा कबीर साखी सार, साखी, 23, पृ0- 116

2• कीर्तिलता, छं0- 24, दो0- 136 , पृ0-84 तथा मधुमालती दो-206, पृ0-174

3•मृगावती, दो0- 192,193 पृ0- 131

4• विद्यापति की पदावली, पद-42,दो0-6,पृ0-126

5• मृगावती, पृ0- 141

माँग में सिन्दूर भरना विवाहित स्त्रियों के लिए शुभ माना जाता था तथा सिन्दूर रखने के लिए - " सिन्धोरा " का प्रयोग होता था ।[1] अपने पैरों तथा नाखूनों को रंगने के लिए स्त्रियाँ "महावर " का प्रयोग करती थी ।[2] शरीर पर उबटन लगाने का प्रचलन भी, था ।[3] चन्दन तथा कुंकुम का प्रयोग भी होता था ।[4]

- -

1· मृगावती, पृ0- 156

2· विद्यापति की पदावली, पद-4, पृ0-92 तथा पद-91, पृ0-145

3· मधुमालती, दो0- 439, पृ0- 385

4· मृगावती, पृ0-141 तथा विद्यापति की पदावली, दो0-33, पृ0-59

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

आर्थिक इतिहास

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

" आर्थिक - इतिहास "

मुसलमानों ने कुरान के सिद्धान्तों एवं प्रमुख इस्लामी नियमों (हेदाया) के मुख्य सिद्धान्तों एवं धाराओं को ही अपनी अर्थव्यवस्था के निर्माण के सम्बन्ध में लागू किया ।[1]

भारत में भी अर्थव्यवस्था प्राचीन मुश्लिम करारोपण के सिद्धान्त पर ही आधारित थी । प्राचीन हनीफी - सिद्धान्त ही प्रचलन में थे तथा यही सिद्धान्त सम्पूर्ण मुस्लिम काल के राज्य - धर्म में अवस्थित थे । दिल्ली सल्तनत व उससे सम्बद्ध सभी प्रान्तीय शासकों ने इसी सिद्धान्त को अपनी अर्थव्यवस्था का आधार बनाया ।[2]

सुल्तानों को अपनी सेना के उपर बहुत अधिक धन व्यय करना पड़ता था । राज दरबार, राजमहल एवं शासक के व्यक्तिगत सेवकों पर भी राज्य की आय का एक बहुत बड़ा भाग व्यय होता था । इसके अतिरिक्त

---

1. आर० रिकार्डस, दि हिस्ट्री आफ इण्डिया (लंदन-1829), जिल्द -1, पृ०- 28।
2. आर०पी० त्रिपाठी, पृ०- 338

प्रशासनिक कर्मचारियों के वेतन, भत्ते, आदि में भी राज्य की आय का एक - एक बहुत बड़ा अंश व्यय हो जाता था ।[1] इन सबकी पूर्ति हेतु दो प्रकार के कर लगाये जाते थे - §1§ धार्मिक कर, §2§ सामान्य कर । धार्मिक कर का सामूहिक नाम था " जकात " § सम्पत्ति कर § , जिसे केवल मुसलमानों से ही वसूल किया जाता था । सामान्य करों के अन्तर्गत मुख्य रूप से जजिया, जो गैर मुस्लिमों से वसूल किया जाता था । तथा खराज अथवा भू - राजस्व एवं खुम्स थे ।[2]

शर्की शासकों के समय अर्थ व्यवस्था से सम्बन्धित विस्तृत विवरण नहीं प्राप्त होता है । ऐसा अनुमान है कि इन शासकों ने भी दिल्ली सल्तनत की कर व्यवस्था का ही अनुकरण किया था ।[3] परन्तु शर्की शासकों के समय में विशेषकर इब्राहिम शाह शर्की के शासन काल में " जाजिया" कर लगाने का

- -

1· डा० शेफाली चटर्जी , पृ० - 176

2· एल०पी०आगनाइडस, मोहम्मडन थ्योरीज आफ फाइनेन्स, पृ० -525

3· डा० शेफाली चटर्जी, पृ० - 176

प्रमाण नहीं मिलता है ।[1] सुल्तान स्वयं सभी वर्गों व सम्प्रदाय के लोगों के साथ समान व्यवहार करता था । हिन्दुओं के प्रति शर्की सुल्तान विशेष रूप से दयालु थे । जिसका प्रमाण तिरहुत के हिन्दू शासक कीर्ति सिंह की सहायता में ही परिलक्षित होता है ।[2]

राजस्व विभाग की देखरेख तथा उस पर यथोचित नियंत्रण का कर्तव्य एवं अधिकार दीवान के पास होता था ।[3] वह आय तथा व्यय का हिसाब रखता था । उसकी अनुमति या मोहर के बिना न तो कोई खर्च ही हो सकता था और न ही किसी सरकारी कागज को प्रमाणिक ही माना जाता था ।[4]

यद्यपि सल्तनत काल में " दीवान " का कोई अस्तित्व नहीं मिलता नहीं मिलता है , परन्तु शर्की शासन में दीवान एक महत्वपूर्ण पद था ।

1• सलातीने जौनपुर, पृ0-14

2• कीर्तिलता, पृ0- 15-16 तथा सलातीने जौनपुर, पृ0- 15

3• इन साइक्लोपीडिया आफ इस्लाम ,जिल्द-1, पृ0- 979

4• यदुनाथ सरकार, मुगल शासन पद्धति, पृ0-23-24

इब्राहिम शाह शर्की के समय नन्द लाल अपनी योग्यता एवं ईमानदारी के कारण दीवान पद पर नियुक्त किये गये थे ।[1]

टकसाल व मुद्रायें -

शर्की कालीन मुद्राओं में हमें सुल्तान उस शर्क मलिक सरवर ख्वाजा जहाँ एवं उसके दत्तक पुत्र मलिक मुबारक करनफल के नामों का कोई उल्लेख नहीं प्राप्त होता है ।[2] यद्यपि " मिरातुल इसरार " एवं " जौनपुर नामा " में यह उल्लेख मिलता है कि सुल्तान -उस-शर्क ने " अताबक - ए- आजम की उपाधिधारण कर अपने नाम से खुत्बा व सिक्का प्रचलित किया ।[3] परन्तु यह कथन अधिक विश्वसनीय हैकि सुल्तान - उस - शर्क की आन्तरिक इच्छा अपने नाम का खुत्बा तथा सिक्का जारीकरने की थी , पर मृत्यु ने उसे ऐसा करने का अवसर नहीं दिया ।[4] इस सम्बन्ध में

1• डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0- 177

2• तारीखे फरिश्ता , जिल्द -2, पृ0- 304

3• मिरातुल इसरार, फो0 - 540 अ, तथा जौनपुर नामा ,फो0-4 अ

4• तारीखे फरिश्ता, जिल्द -2, पृ0- 305

तबकाते अकबरी मौन है ।

ख्वाजा जहाँ का अधिकाश समय जौनपुर में अपनी सत्ता को सुदृढ़ बनाने में ही व्यतीत हो गया ।नवनिर्मित शर्की राज्य को वाह्य संकटों से बचाना ही उसका प्रथम उद्देश्य था । अत: मुद्रा तथा शासन व्यवस्था के सम्बन्ध में उसने कोई विशेषध्यान नहीं दिया ।[1] इसी प्रकार मुबारक शर्की का शासन काल अत्यन्त अल्प मात्र एक वर्ष व कुछ महीना ही था, अत: इतने अल्प समय में वह भी मुद्राओं के सम्बन्ध में कोई विशेष ध्यान नहीं दे पाया इस प्रकार मुबारक शाह शर्की की भी कोई मुद्रा उपलब्ध नहीं होती है । जबकि कुछ इतिहासकार इस बात का जिक्र करते हैं कि ख्वाजा जहाँ की मृत्यु के पश्चात मलिक मुबारक करनफल गद्दी पर बैठा और अपना नाम मुबारक शाह शर्की रखकर उसने अपने नाम का खुत्बा पढ़वाकर तथा सिक्के जारी कियें ।[2]

1· तारीखे फरिश्ता , जिल्द-2, पृ0- 305

2· हफ्ते गुल्शन , पो0-112, तथा सुबहे सादिक, फो0-1769-अ

कदाचित इन दोनों ही शासकों ने मुद्रायें जारी की थी, जिनका संग्रह पटना के संग्रहालय एवं अन्य स्थानों में आज भी सुरक्षित हैं ।[1] इनकी अस्पष्ट लिखावट अभी तक पढ़ी नहीं जा सकी है । सम्भव है कि इन मुद्राओं में ख्वाजा जहाँ एवं मुबारक शर्की की भी कोई मुद्रा हो ।

जौनपुर के तृतीय शर्की शासक सुल्तान इब्राहिम शाह शर्की (1400-1440 ई0) के शासन काल में स्पष्ट रूप से मुद्रायें प्राप्त हुयी हैं। इब्राहिम एवं उसके उत्तराधिकारियों ने 1476 ई0 तक मुद्राएं ढालने का कार्य जारी रखा , जब तक बहलोल लोदी ने हुसेन शर्की को जौनपुर से निष्कासित कर पुन: जौनपुर को दिल्ली के अधीनस्थ प्रान्तों में सम्मिलित नहीं कर लिया ।[2]

इस अवधि में जौनपुर के सम्बन्ध में यह धारणा पुष्ट हो गयी कि जौनपुर एक टकसाल शहर है ।[3]

1• सैयद हसन अस्करी, डिस्कर्सिव नोट्स आन दि शर्की मोनार्की आफ जौनपुर (इण्डियन हिस्ट्री, कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, 1960) भाग-1, पृ0-154-

2• डि0ग0 जौनपुर, पृ0- 173

3• वही

अपने चालीस वर्ष की शासन अवधि में इब्राहिम शर्की ने अनेक प्रकार की मुद्राओं का प्रचलन किया । उसके उत्तराधिकारियों में महमूद, मुहम्मद एवं हुसेन शर्की ने भी इस कार्य में प्रगति की ।[1] इन शासकों ने स्वर्ण मुद्रायें, ताम्र मुद्रायें,, चाँदी की मुद्राएं एवं मिश्रित धातु की मुद्राओं को तीन चार प्रकार के विभिन्न वजनों में दिल्ली की तत्कालिक मुद्राओं के अनुरूप ही ढाला ।[2]

इब्राहिम शाह शर्की की केवल एक मुद्रा को छोड़कर, जिसमें दिल्ली की साधारण शैली का ही अनुसरण किया गया है, अन्य तीन शर्की शासकों ने अपने पड़ोसी राज्य बंगाल के शासक जलालुद्दीन मुहम्मद से प्रभावित होकर मुद्राओं के विपरीत तथा अपनी परम्परागत कथा ﴾ पद्यों ﴿ को लिखनें में तुगरा लिपि का ही प्रयोग किया है ।[3] सीधी ओर की लिखावट में जिसका इब्राहिम एवं महमूद के द्वारा भी प्रयोग किया गया था में लिखा रहता था कि -

---

1• डा० शेफाली चटर्जी, पृ०- 227

2• वही

3• सी०जे०ब्राउन, दक्वायंस आफ इण्डिया ﴾ वाराणसी ﴿ 1973, पृ० - 85

इसलाम के सर्वोच्च नेता के समय में, विश्वास पात्र के सेनानायक का सहायक (नायब) ।[1]

सुलतान हुसेन शाह शर्की द्वारा " नायब " शब्द हटा देने से अब जौनपुर में भी दिल्ली शासकों की भाँति ही सिक्के जारी होने लगे थे ।[2]

खलीफा, विश्वासपात्रों का सेनानायक,
उसकी खिलाफत शाश्वत बनी रहे ।"[3]

पद्य शासक का नाम देता है एवं अन्तिम तीन शर्की शासकों की मुद्राओं पर उनकी वंशावली का नाम भी अंकित होता है ।[4]

---

1. सी0जे0ब्राउन, द क्वायंस आफ इण्डिया (वाराणसी) 1973, पृ0 - 85
2. डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0 - 227
3. सी0जे0ब्राउन, पृ0- 85
4. थामस एडवर्ड, दि क्रानिकल्स आफ दि पठान किंग्स आफ देहली), दिल्ली, 1976 (पृ0- 322

जौनपुर के शर्की शासकों द्वारा प्रचलित कुछ मुद्राये अब तक अस्पष्ट रूप में है । जिससे यह स्पष्ट नहीं किया जा सकता है कि वे मुद्रायें वास्तव में शर्की शासकों की ही है, या अन्य किसी शासक के समय की । शर्की राजवंश ने अपनी मुद्राओं में जो कि प्रचुर मात्रा में उनकी टकसाल में निर्मित की गयी थी पर अपनी राजधानी के नाम का उल्लेख नहीं किया है । और जो मुद्राये " शहर जौनपुर टकसाल में ढली थी उनसे किसी नाम की जानकारी प्राप्त नहीं होती है ।[1]

इब्राहिम शर्की की मुद्राएं -

शर्की शासन काल में सुल्तान इब्राहिम शर्की प्रथम शासक था जिसने मुद्राओं का प्रचलन किया । उसने सोने, चाँदी, ताँबे तथा मिश्रित धातुओं की मुद्राएं ढली ।[2]

1· जौनपुर, न्यू मिसेटिक सप्लीमेंट नं०-35 (प्रोसीडिंग्स आफ द एशियाटिक सोसायटी आफ बंगाल । न्यू सीरिज, जिल्द-17 (कलकत्ता 1922) पृ०-12[illegible]

2· डा० शेपाली चटर्जी, पृ०-228

स्वर्ण मुद्रा -

इब्राहिम शाह शर्की की सोने की मुद्राएं दुर्लभ हैं । उसने इस धातु में दो प्रकार की मुद्राओं को प्रचलित किया ।

सुल्तान की प्रथम प्रकार की सोने की मुद्राएं 148 से 175.4 ग्रेन के साधारण वजन में बनायी गयी थी, यह मुद्राएं फतह खाँ तुगलक की मुद्राओं से निकट साम्य रखती थी ।[1] इन मुद्राओं पर निम्नलिखित पंक्तियाँ हैं ।

मुद्रा में सोधा सोरअल सुल्तान-उल अजन स्वस अल दुनियाँ व अल-दीन अबुल मुजफ्फर इब्राहिम शाह सुल्तानी खुल्द मुमाल्क तल्ल अंकित है । मुद्रा की उल्टी ओर क्षेत्र में फी जमानी -ल- अल इमाम अमीर उल मोमनीन अबुल फतह खुल्द खिलाफ तहू अंकित हैं । हाशियों में परब-प्रजा अल दीनार फी वनह अहद लिखा हुआ है ।[2] इस प्रकार की मुद्राएं ब्रिटिश म्यूजियम में सुरक्षित हैं ।

1· थामस, पृ0- 298

2· वही, पृ0 - 321

सुल्तान इब्राहिम शाह शर्की की सोने की मुद्रा में द्वितीय प्रकार की मुद्रा तुगरा लिपि में थी । इस प्रकार की सोने की मुद्राएं बंगाल के शासक जलालुद्दीन मुहम्मद शाह द्वारा प्रचलित मुद्राओं के अनुकरण पर बनाई गयी थी । इस प्रकार की मुद्राओं पर लिखी प्रवृत्तियां ﴾सीधी ओर प्रथम प्रकार की मुद्राओं के सदृश है, केवल विश्वासपात्र का सेनानायक उपाधि को विश्वासपात्र का सहायक सेनानायक में परिवर्तित कर दिया गया है ।[1]

मुद्राओं के उल्टी तरफ इब्राहिम शाह ने अपने धार्मिक विश्वास को इन शब्दों में व्यक्त किया है ।

वह जो दयालु के अस्तित्व में विश्वासी है।
अबुल मुजफ्फर इब्राहिम शाह, सुल्तान ।।[2]

1· डा0 मेपाली चटर्जी, पृ0- 229

2· वही ।

इब्राहिम शाह शर्की की इस प्रकार की मुद्राओं का वजन 172 से 178•5 ग्रेन तक है ।[1]

इन स्वर्ण मुद्राओं की प्रमुख विशेषता यह है कि सीधी ओर के मुख्य अक्षरों के नीचे की ओर काफी बढ़ा चढ़ाकर लिखा गया है । उन पर जो पंक्तियां लिखी गयी वे भी अपवाद थीं । जिससे ऐसा लगता है कि यह कार्य अपूर्ण उपादों से किया गया था । अच्छी टकसाल में ऐसा कार्य नहीं हो सकता था ।[2]

चाँदी तथा ताँबे की मुद्राएं -
---------------------- सुल्तान इब्राहिम शाह शर्की ने चाँदी तथा ताँबे के सिक्कों को भी प्रचलित किया ।[3] परन्तु सुल्तान इब्राहिम शर्की की सोने, चाँदी, ताँबे तथा मिश्रित धातुओं में ढाली गयी मुद्राओं में से उसके

- -

1• थामस, पृ0- 298

2• थामस, पृ0- 321

3• एच0नेल्सन राइट, जिल्द-2, पृ0- 206-7

शासन काल के प्रारम्भिक दिनों में ढाली गयी चाँदी एवं ताँबे की मुद्राएं बहुत ही दुर्लभ है ।[1]

इब्राहिम का एक वर्गाकार चाँदी का सिक्का पाया गया हैं, जो उसकी स्वर्ण मुद्रा के दूसरे प्रकार के अनुरूप ढाला गया है । इसमें केवल इतना अन्तर है कि सीधी ओर की पंक्तियों को गोलाकृत में लिखने के स्थान पर वर्गाकार रूप में लिखा गया है । इस प्रकार के चाँदी तथा ताँबे के सिक्कों का वजन 140 ग्रेन है। इनकी लिखावट निम्नवत् है -

सीधी ओर - " इब्राहिम शाह सुल्तानी खुल्दत मुमालकतहू "

उल्टी ओर-"अल खलीफा अमीर उल मोमनीन खुल्दत खिलाफतहू

818/"[2]

1• एच०नेल्सन राइट, जिल्द-2, पृ0- 206-7

2• थामस, पृ0- 321

3•

एक दूसरे प्रकार की चाँदी - ताँबे की मुद्रा थी जिसका वजन 36 ग्रेन है, प्राप्त हुयी है । इस मुद्रा की निश्चित तिथि ज्ञात नहीं है । इस पर 822, 824, 836 एवं 844 हि0 तक की तिथियाँ मिलती है । इस पर लिखा हुआ है -

सीधी ओर - " इब्राहिम शाह सुल्तानी "

उल्टी ओर - " खलीफा अबुल फतह 836/ [1]

उड़ीसा के सम्बलपुर जिले के अमरा सब डिविजन में स्थित देवगढ़ से प्राप्त जौनपुर के शासकों की 71 ताम्र मुद्राओं के संग्रह में से 12 इब्राहिम शाह शर्की की, 33 महमूद, 4 मुहम्मद एवं 22 हुसेन शर्की एवं मदन देव की है, जो शर्की सामन्त के रूप में गोरखपुर तथा चम्पारन का शासक था ।[2]

---

1. थामस, पृ0- 321

2. इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसी0 (अलीगढ़, 1960), भाग-1, पृ0-156

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि इब्राहिम शाह शर्की ने ताँबे के सिक्के ढाले थे जो मिश्रित न होकर शुद्ध ताबे के बने हुए थे ।

18 दिसम्बर 1941 ई0 को 50 ताम्र- मुद्राओं का एक समूह बिहार के अन्तर्गत पिपरबर गाँव के एक धान के खेत में पाया गया था।[1]

इन 50 ताम्र मुद्राओं का सम्बन्ध, जौनपुर के शर्की राजवंश के 6 शासकों में से 4 शासकों के साथ है । इनकी तिथि हि0 827 और 86 के मध्य मानी गयी है । इस अनुसन्धान से प्राप्त 50 ताम्र मुद्राओं में से 22 मुद्राएं इब्राहिम शाह शर्की की बताई जाती है । जिनमें इनको ढालने की प्रारम्भिक तिथि 827 हि0 तथा नवीनतम तिथि 843 हि0 है । इन सिक्कों का वजन 67·11 ग्रेन से 66·73 ग्रेन तक है । इन सिक्कों के सीधी ओर " खलीफा उल - फतह " तथा तिथि दी गयी है तथा दूसरी ओर

1· एस0एच0शेरे (किंग्स आफ द जौनपुर डाइनेस्टी एण्ड देयर क्वायनेज) जे0बी0ओ0 आर0एस0 (पटना- 1942), जिल्द 28, भाग-3, पृ0-285 उद्धृत डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0 -

" इब्राहिम शाह सुल्तानी " लिखा हुआ है ।

महमूद शाह की मुद्राए -

सुल्तान इब्राहिम शाह शर्की की मृत्यु के पश्चात 1440 ई0 में उसका ज्येष्ठ पुत्र महमूद शाह जौनपुर के सिंहासन पर बैठा । उसने भी अपने पिता इब्राहिम शाह शर्की के समान सोने, चाँदी तथा ताँबे की मुद्राओं का प्रचलन किया ।

स्वर्ण मुद्रा -

महमूद शर्की ने अपने पूर्वज (इब्राहिम शाह) द्वारा प्रचलित द्वितीय प्रकार के सिक्कों को ही ढाला । महमूद शाह के इस प्रकार के सिक्कों की उपरी पंक्तियाँ इब्राहिम शर्की की स्वर्ण मुद्राओं के ही अनुरूप है- महमूद शर्की के सिक्कों पर निम्न पंक्तियाँ अंकित हैं -

- -

1• एस0ए0शेरे (किंग्स आफ द जौनपुर डाइनेस्टी एण्ड देयर क्वायनेज (जे0बी0ओ0 आर0एस0 (पटना - 1942(, जिल्द - 28, भाग-3(पृ0- 285 उद्धृत - डा0 शेफाली चटर्जी पृ0 - 285-87

गोलाकृति में - फ्री जमानिल झमामी नायबि अमीर उल -
मोमनीन अबुल फ्तह खुल्दत खिलाफहु ।"[1]

इसके विपरीत ओर की पंक्तियाँ जो तुगरा लिपि है, पृथक है । महमूद शर्की द्वारा प्रचलित स्वर्ण मुद्राओं की पंक्तियाँ इस प्रकार है ।

तुगरा लिपि में - " सुल्तान सैफुद्दुनिया वा उद्दीन अबुल मुजाहिद
महमूद बिन इब्राहिम ।"[2]

महमूद के इस प्रकार के सोने के सिक्के का वजन 175•2 ग्रेन है एवं इसके ढालने की तिथि 855 हि0 है ।[3]

चाँदी की मुद्राए -
------------------ महमूद शर्की की एक चाँदी की मुद्रा जो 176 ग्रेन वजन की है, पायी गयी है । यह महमूद के द्वितीय प्रकार के सोने के सिक्के के अनुरूप है । महमूद शर्की के शासन काल में कुछ शुद्ध चाँदी के सिक्के भी

1• सी0जे0ब्राउन, द क्वायन्स आफ इण्डिया, पृ0-85, उद्वत डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0 -
2• वही, पृ0 - 85
3• थामस, पृ0- 32।

ढाले गये , परन्तु वे नितान्त दुर्लभ है।[1]

चाँदी तथा ताँबे की मिश्रित मुद्रा -

महमूद शाह ने चाँदी एवं ताँबे की मिश्रित मुद्राओं का भी प्रचलन किया । इस प्रकार की मुद्राए हि0 845, 846, 849 तथा 856 में ढाली गयी । इनमें सिक्कों के दोनों तरफ इस प्रकार लिखा है -

सीधी ओर - " महमूद शाह, इब्न इब्राहिम शाह सुल्तानी खुल्दत ममालकत

उल्टी ओर - " अलखलीफा अमीर उल मोमिनीन खुल्दत खिलाफतहू 845।[1]

ताम्र मुद्रायें -

महमूद शाह ने अपने नाम से एक प्रकार की ताम्र मुद्राओं का भी प्रचलन प्रारम्भ किया, जिनमें पंक्तियाँ गोलाकृत में लिखी गयी । इसे आगे चलकर उसके उत्तराधिकारियों ने भी जारी रखा ।[2]

1• थामस, पृ0 - 322

2• सी0जे0ब्राउन, पृ0- 85

इस प्रकार की ताम्र मुद्राओं का वजन 144 ग्रेन बताया गया है, जो हि0 844 में ढाली गयी । सिक्के के दोनों तरफ की लिखावट इस प्रकार है -

सीधी ओर - " महमूद शाह बिन इब्राहिम शाह सुल्तान "

उल्टी ओर - " नायब अमीर उल मोमनीन 844 /[1]

1941 ई0 के अनुसन्धान से प्राप्त 25 ताम्र मुद्रायें सुल्तान महमूद शर्की की बतायी जाती है । इसमें सर्वप्रथम ढाली गयी मुद्रा की तिथि 846 हिजरी है , जबकि अन्तिम तिथि 857 हिजरी है । इस प्रकार की ताम्र मुद्राओं का वजन 69·58 ग्रेन से 71·80 ग्रेन तक है । इसमें सीधी तरफ " खलीफा अबुल फतह " तथा तिथि और उल्टी ओर " महमूद शाह, इब्राहिम शाह सुल्तानी " लिखा गया है ।[2]

- -

1· थामस, पृ0 - 322

2· किंग्स आफ दि जौनपुर डायनेस्टी एण्ड देयर क्वायनेज ﴾जे0वी0ओ0आर0 जिल्द -28, भाग -3, पृ0-287,-89 ,उद्दत डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0

मुहम्मद शाह की मुद्राएं -

सुल्तान महमूद शाह की मृत्यु के पश्चात उसका ज्येष्ठ पुत्र शहजादा भीखन खाँ, मुहम्मद शाह के नाम से 862 हि0 में तख्त पर बैठा । उसने मात्र पाँच महीने शासन किया ।[1]

चाँदी एवं ताँबे के मिश्रित सिक्के -

मुहम्मद शाह के पाँच महीने के अल्पकालीन शासन में एव मिश्रित धातु एवं ताँबे के सिक्के प्राप्त होते हैं । मिश्रित धातु के सिक्के में 861, 862 एवं 863 तिथि दी है । इसकी लिखावट इस प्रकार है -

सीधी ओर - मुहम्मद शाह बिन महमूद शाह बिन इब्राहिम शाह सुल्तानी खुल्दत मुमालकतहु ।

उल्टी ओर - अल खलीफा अमीर उल मोमनीन खुल्दत खिलाफतहु ।[2]

1· नेल्सन राइट, जिल्द -2, पृ0- 164

2· थामस, पृ0- 322

ताँबे की मुद्रा -

मुहम्मद शाह के 861 हिजरी के ताँबे के सिक्के भी प्राप्त हुए जिन पर इस प्रकार अंकित है -

सीधी ओर -"मुहम्मद शाह बिन महमूद शाह बिन इब्राहिम शाह सुल्त

उल्टी ओर -"नायब अमीर उल मोमनीन, 861 ।[1]

इसके अलावा ताँबे की दो मुद्रायें जिनकी तिथि 861 तथा 862हि0 है,[2] मुहम्मद शाह के शासन काल की मानी जाती है । मुहम्मद शाह की इस प्रकार की ताँबे की मुद्रा का वजन 69•99 ग्रेन से 71•13 ग्रेन है ।[3]

हुसेन शाह शर्की की मुद्राएं -

मुहम्मद शाह की मृत्यु के पश्चात उसका भाई हुसेन शाह 862 हि0 में जौनपुर के सिंहासन पर बैठा । उसके काल की प्रमुख मुद्राएं निम्नवत है -

1• थामस, पृ0- 322

2• किंग्स आफ दि जौनपुर डाइनेस्टी एण्ड देयर क्वायनेज ﴾जे0वी0ओ0आर0ए जिल्द-28, भाग-3, पृ0-294

3• वही

4• थॉमस, ﴾क्रानिकल्स आफ द प0ान किंग्स आफ देल्ही ﴾पृ0- 320

स्वर्ण मुद्रा -

सुल्तान हुसेन शाह ने अपने शासन काल में । सोने का सिक्का ढाला था । इस प्रकार के सिक्के का वेजन 180·3 ग्रेन है । यह इब्राहिम शर्की की मुद्रा के अनुरूप ढाला गया है , केवल हाशिया में लिखी हुयी लिखावट को पूर्णतया मिटा दिया गया है ।

ताम्र - मुद्रा -

सुल्तान हुसेन शाह शर्की द्वारा प्रचलित ताँबे के सिक्के 865 हिजरी में ढाले गये जिनका वजन 150 ग्रेन है । इस प्रकार मुद्रा पर लिखावट निम्नवत् है -

सीधी ओर - हुसेन शाह बिन महमूद शाह बिन इब्राहिम शाह सुल्तान ।

उल्टी ओर - नायब अमीर उल मोमनीन, 865 /[1]

इसके अतिरिक्त हुसेन शाह के हिजरी 880, 886, 897 एवं 900 के भी सिक्के प्राप्त हुए हैं ।[2]

1· थामस, पृ0- 322

2· वही

1491 ई० के अनुसंधान से प्राप्त मुद्राओं में हुसेन शाह शर्की की केवल एक ताम्र मुद्रा प्राप्त हुयी है । इसकी तिथि हिजरी 863 बतायी जाती है । इस सिक्के का वजन 72•20 ग्रेन है । इस प्रकार के सिक्के की लिखावट निम्न है :-

सीधी ओर - खलीफह अबुल फतह ।

उल्टी ओर - हुसेन शाह, बिन महमूद शाह, बिन इब्राहिम शाह सुल्तानी - 863 /[1]

863 हि० का सिक्का सुल्तान हुसेन शाह शर्की के, दिल्ली सुल्तानों, बहलोल लोदी एवं सिकन्दर लोदी के साथ, किये गये संघर्ष का परिचायक है ।[2]

1950 ई० में उड़ीसा में बमरा सब डिवीजन से प्राप्त 71 ताम्र-

1• किंग्स आफ दि जौनपुर डायनेस्टी एण्ड देयर क्वायनेज, जे०बी०ओ०आर०एस० जिल्द, 28, भाग-3, पृ०-289, उद्धृत-डा०शेफाली चटर्जी, पृ०

2• वही, पृ० - 295

मुद्राओं में से 22 मुद्रायें सुल्तान हुसेन शाह शर्की को मानी जाती है । जिनमें उसके नाम के साथ चम्पारन के मदन सिन्हा (1453-58 ई0) का नाम भी अंकित है ।[1]

बारबक शाह के सिक्के -

हुसेन शाह शर्की के पश्चात जौनपुर में बारबक शाह ने अपने नाम से सिक्के ढाले । उसके चाँदी एवं ताँबे के सिक्के जिनका वजन 120 ग्रेन माना गया है, हिजरी 892- 894 में ढाले गये हैं । बारबक शाह के इन सिक्कों में विशेष रूप से " शहर जौनपुर " के नाम का उल्लेख किया गया है इन सिक्कों पर निम्न पंक्तियाँ अंकित हैं -

बारबक शाह सुल्तान

नायब

अमीर उल मोमनीन

बशहर जौनुपर , 892 /[2]

1• सैयद हसन अस्करी, बिहार इन दि टाइम आफ दि लास्ट टू लोदी सुल्तान आफ देलही ,जे0बी0आर0एस0(जिल्द0 1955) पृ0-358-59

2• थामस, पृ0-377

जौनपुर गजेटियर से ज्ञात होता है कि कुछ अनिर्दिष्ट ताम्र - मुद्रायें एक या अधिक अल्पकालीन शासकों द्वारा ढाली गयी थी, जो किसी जलालुद्दीन शासक के नाम से प्रचलित थी ।[1]

जौनपुर के शर्की शासकों के सिक्कों की अपनी विशेषतायें थी । सबसे आश्चर्य जनक तथ्य यह है कि जौनपुर के सिक्कों में, जो उस समय के समीपवर्ती स्थानों से प्रामाणिक रूप से पाये गये थे, विभिन्न प्रकार की दशमलव प्रणाली प्रचलित थी ।[2]

स्थानीय पूर्वी टकसालों ने स्पष्ट रूप से ऊँचे औसत के सिक्के ढाले जिनका वजन ताँबे तथा सोने दोनों ही धातुओं से ज्यादा होता था । सोने के सिक्कों में 180 ग्रेन का 1 तोला माना गया है, जिसे भारत की परवर्ती अंग्रेज सरकार ने भी स्वीकार कर उसे सर्व- भारतीय वजन के औसत मापदण्ड के रूप में माना ।[3]

1• डि०ग०जौनपुर, पृ० - 173

2• थामस, पृ०- 323-24

3• वही

व्यवसाय -

इस काल में जौनपुर शहर बहुत ही व्यस्त एवं समृद्ध बाजार था ।[1] इस बाजार में भिन्न - भिन्न व्यवसायों द्वारा अपनी आजीविका सुनिश्चित करने वाले हर वर्ग के व्यवसायी थे ।[2] इस काल में प्रमुख रूप से जो व्यवसाय प्रचलित थे, वे निम्नवत् हैं -

1• शराबोत्पादन का व्यवसाय -

इस काल में शराबोत्पादन तथा शराब की बिक्री का व्यवसाय काफी समृद्ध था । कबीर दस ने शराब की बड़ी भट्ठियों का उल्लेख किया है, जिसमें लहड़ ‡ खाद्यान्न ‡ में गुड़ आदि मिलाकर मदिरा तैयार की जाती थी।[3] इस प्रकार इस काल में मदिरा का व्यवसाय फल-फूल रहा था तथा इसे बनाने वाले कल्लाल की आजिविका का प्रमुख साधन था ।[4]

- -

1• कीर्तिलता , पृ0 - 47

2• डा0 शेफाली चटर्जी - पृ0 - 218

3• कबीर ग्रन्थावली, दो0-3, पृ0- 234

4• कबीर, दो0-2, पृ0- 32 तथा दो0- 51, पृ0- 46

2• सोने के आभूषणों का व्यवसाय -

इस काल में जौनपुर में सोने के आभूषणों का व्यापक प्रचलन था तथा इस काल में लोग सोने की सफाई तथा शुद्धता की प्रक्रिया से भलीभाँति परिचित थे ।[1] अत: स्वर्णकारों द्वारा स्वर्ण धुलाई, आभूषण बनाने, ढालने तथा काटने का कार्य बारीक एवं प्रशिक्षित ढंग से होता था ।[2] इस प्रकार इस काल में स्वर्णकार के रूप में एक व्यवसायिक वर्ग विद्यमान था।[3] तथा यह व्यवसाय एक वर्ग की आजीविका के प्रमुख रूप में फल - फूल रहा था ।

3• सूत कातने तथा कपड़ा तैयार करने का व्यवसाय -

इस समय जौनपुर में कपड़ों की बिक्री एक प्रमुख व्यवसाय के रूप में विद्यमान थी । जुलाहों द्वारा सूत कातने तथा कपड़ा तैयार करने का

1• हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0- 97

2• वही, पृ0- 96-100

3• कबीर ग्रन्थावली , दो0- 17, पृ0- 154-55 तथा मृगावती, दो0-35 पृ0 - 28

उल्लेख मिलता है ।[1] जिससे स्पष्ट होता है कि इस काल में सूत कातने तथा उससे कपड़ा तैयार करने तथा बेचने का व्यवसाय काफी समृद्ध था ।[2]

4• लोहे का व्यवसाय -

लोहे के सामानों को बनाने तथा क्रिय के उल्लेख से यह प्रमाणित होता है कि इस काल में लोहे का व्यवसाय होता था[3] तथा तलवार से लेकर साधारण मकान व मंदिरों में प्रयुक्त होने वाली लौह सामग्री का व्यापक स्तर पर उपयोग होता था ।[4]

5• मिट्टी के बर्तनों का व्यवसाय -

मध्य कालीन समाज में धातुओं के बर्तनों का चलन था ही, परन्तु अनेक सामाजिक, धार्मिक आयोजनों में प्राय: मिट्टी के बर्तन इत्यादि प्रयुक्त होते थे । नाना प्रकार के बर्तन बनाने में कुम्हार प्रवीण हो गये थे ।[5]

1• कबीर ,दो0-44, पृ0-294

2• अलबरूनी, पृ0- 47

3• कबीर, पृ0-5,दो0=28,पृ0-46,दो0-51 तथा पृ0-11,दो0-8

4• मृगावती, दो0-35,पृ0-28 तथा कबीर, दो-5,पृ0-44, तथा हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0- 95-96

5• हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0-89-91

कबीर ने अनेक दोहों में कुम्हार के विकसित चाक का वर्णन किया है ।[1] साथ ही कबीर ने मिट्टी के कच्चे बर्तनों को पकाने की विधि का उल्लेख किया है।[2] अत: स्पष्ट है कि इस काल में यह व्यवसाय एक वर्ग की आजीविका का प्रमुख साधन था ।

6• लकड़ी का व्यवसाय - लोहे की ही भाँति लकड़ी भी मकान, आदि के निर्माण में, खिड़की , दरवाजे तथा रोशन दानों के माध्यम से आवश्यक हो गयी थी ।[2] इस काल में घुड़सवारों की बढ़ती संख्या व सेना में उनके महत्व को देखते , घोड़े की काठी का निर्माण एक बड़े उद्योग के रूप में विकसित हो गया था ।[3] इसी प्रकार से घर के बैठने के आसनों से लेकर कृषि हेतु हल आदि तथा बच्चों के झूलों तक का कार्य इसी कुटीर उद्योग के अन्तर्गत होता था ।[4]

1• कबीर, दो0- 1, पृ0-31, तथा दो0-38,39,पृ0- 44

2• कबीर, दो0-1, पृ0- 31

3• मृगावती ,दो0-35, पृ0- 28

4• वही, दो0-348,पृ0-301,तथा हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0-94

7• वस्त्र उद्योग - इस समय भारतवर्ष वस्त्र उद्योग के लिए बहुत प्रसिद्ध था तथा जौनपुर वस्त्र उद्योग व्यापक स्तर पर विद्यमान था । ज्योतिरीश्वर ने 20प्रकार के देशी वस्त्रों का उल्लेख किया है ।[1] विद्यापति ने "कीर्तिलता" में मौजला मोजो का वर्णन करते हुए लिखा है कि " उसने जौनपुर के बाजार में मौजला मोजा बिकते हुए देखा ।[2] इस प्रकार इस काल में जौनपुर में वस्त्र उद्योग काफी विकसित पैमाने पर होता था ।

8• तेल बनाने का व्यवसाय -

इस काल में तेल बनाने तथा बेचने का व्यवसाय भी होता था तथा तेल बनाने व बेचने वाला तेली के नाम से जाना जाता था ।[3] इस समय एक वर्ग जो तेली के नाम से सम्बोधित होता था विशेष इस व्यवसाय में संलग्न था तथा अपनी आजीविका के साधन के रूप में इस व्यवसाय को करता था ।

9• कपड़ों की रंगाई का व्यवसाय - इस काल में कपड़ों की रंगाई एक

1• डा0 हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0- 95

2• विद्यापति , कीर्तिलता, पृ0- 27

3• कबीर,दो0-23,पृ0-16, तथा ज्योतिरीश्वर, प्रथम कल्लोल -पृ0- ।

प्रमुख व्यवसाय के रूप में विद्यमान थी ।[1] कपड़ों को विभिन्न रंगों में रंगने का तकनीकी ज्ञान इस समय के रंगरेजों को प्राप्त था ।

इसके अतिरिक्त इस काल में अन्य छोटे - छोटे बहुत से व्यवसाय विद्यमान थे, जिससे लोग अपनी आजीविका चलाते थे -

बाल काटने तथा हजाम करने का व्यवसाय नाइयों द्वारा होता था।[2] ये नाई तथा इनकी पत्नियाँ सामाजिक एवं धार्मिक अनुष्ठानों में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते थे ।[3]

कपड़ों की सफाई, धुलाई करने का कार्य भी एक व्यवसाय के रूप में स्थापित था तथा इस कार्य को करने वाले " धोबी " कहे जाते थे ।[4] कुलीन एवं अभिजात्य वर्ग के लोगों की अधिक संख्या होने के कारण इस व्यवसाय

- -

1• कबीर, दो0-4, पृ0-102
2• कबीर, दो0-11, पृ0- 375
3• मृगावती, दो0-424, पृ0-367, तथा हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0-87-88
4• कबीर, दो0-11, पृ0-424, पृ0-367, तथा मृगावती, दो0-424, पृ0-367

से सम्बद्ध लोग भी बहुत बड़ी संख्या में रहे होंगे ।[1]

इस काल में पान तथा सुपाड़ी बेचने का व्यवसाय प्रचलित था, इस व्यवसाय को करने वाले को तम्बोली कहा जाता था ।[2] प्राय: सुल्तानों, उनकी रानियों, तथा अभिजात्य वर्ग में तम्बोलो को विधिवत वेतन भोगी, कर्मचारियों के रूप में नियुक्त किया जाता था ।[3]

विभिन्न करतबों को दिखाकर लोगों का मनोरंजन करना भी एक आजीविका अर्जित करने का साधन था । तथा यह कार्य करने वालों को "नट" की संज्ञा दी गयी है ।[4] प्राय: समकालीन साहित्य में उनकी स्त्रियों द्वारा भी खेल तथा तमाशे दिखाने का उल्लेख मिलता है । उन्हें " नटी " अथवा "बाजीगरनी " कहा जाता था ।[5]

- -

1• हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0- 86-87

2• कबीर, दो0-29, पृ0-42, तथा अलबरूनी, पृ0- 237

3• मृगावती, दो0-35, पृ0- 28

4• कबीर, दो0"- 29, पृ0-11 तथा दो0 -109, पृ0-209

5• हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0- 127

वेश्यावृत्ति समाज के एक अविच्छेद अंग के रूप में विद्यमान थी । ये वेश्यायें वेश्यावृत्ति के माध्यम से अपनी आजीविका निर्धारित करती थी। शर्की कालीन समाज में हमें वेश्याओं के अस्तित्व का पता चलता है । विद्यापति इनका वर्णन करते हुए कहा है कि " राजपथ के निकट चलने पर वेश्याओं के अनेक घर दिखाई पड़ते थे ।[1]

इन वेश्याओं के श्रृंगार का जो सजीव वर्णन कीर्तिलता में किया गया है उससे प्रतीत होता है कि ये वेश्यायें अपनी आजीविका के प्रति अधिक सचेत रहा करती थी ।[2]

इस काल में व्यापार एवं वाणिज्य से लेकर यातायात के साधन के रूप में नदी में नाव का इस्तेमाल भी परिलक्षित होता है,[3] जिससे नाव चलाने वाले वर्ग का ज्ञान होता है, जिसे " केवल " कहा जाता था । यह

1• कीर्तिलता, पृ0- 33

2• वही, पृ0- 36

3• अलबरूनी, पृ0- 122-124

वर्ग नाव द्वारा अपनी आजीविका सुनिश्चित करता था ।[1]

जौनपुर में भवनों के साथ विद्यमान उद्यान एवं बाग- बगीचे इस बात संकेत देते है कि इन्हें सुव्यवस्थित करने तथा इनकी देख रेख का कार्य भी आजीविका के साधन के रूप में प्रचलित था । इस कार्य को करने वाले वर्ग को माली की संज्ञा दी गयी है ।[2] जिन्हें शासक सांमत व समृद्ध वर्गों द्वारा नियुक्ति भी प्रदान की जाती थी ।

इस काल में भवन निर्माण का कार्य व्यापक स्तर पर होता था । शर्की कालीन इमारते इस बात का प्रमाण है कि भवनों के निर्माण के लिए कुशल कारीगरों को अस्तित्व विद्यमान था ।[3] जो अपनी आजीविका के साधन के रूप में इस कला का उपयोग करते थे ।[4]

- -

1· डा0 हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0- 82-85

2· मृगावती, पृ0- 162, दो0-201

3· पर्सी ब्राउन, पृ0- 42-44

4· वही ।

भवन निर्माण के कारण अन्य उद्योग भी अस्तित्व में थे । जैसे- पत्थर, गारा, चूना, ईट, लोहा इत्यादि भवन सामग्री जो भवन निर्माण के लिए आवश्यकता होती है, छोटे व्यवसायों का प्रमुख माध्यम थीं ।[1] यह व्यवसाय इस स्तर तक फैला हुआ था कि शर्की शासन (जो एक शताब्दी से कम समय तक ही विद्यमान रहा) में स्थापत्य कला के क्षेत्र में अपार ख्याति अर्जित की ।[2]

इस काल में चर्मउद्योग का भी विकास हुआ । इस काल में चमड़े की वस्तुओं की माँग बढ़ी । मध्यकालीन भारत में सिंचाई के लिए पानी निकालने के लिए चमड़े की मोट, घोड़ों के लिए रास व जीन, तलवार रखने के लिए म्यानें, जूतों, जूतियों, आदि का निर्माण चमड़े से ही होता था ।[3]

1• फर्ग्युसन, पृ0-188, तथा पर्सी ब्राउन, पृ0- 42-45

2• वही,

3• राधेश्याम, पृ0- 382

जौनपुर में सुगन्धियों तथा इत्र का व्यवसाय काफी समृद्ध था तथा सुगन्धियों एवं इत्र का उपयोग आम तौर पर आभिजात्य वर्ग करता था।[1] इस प्रकार यह व्यवसाय भी आजीविका के स्रोत के रूप में विद्यमान था। सुगन्धियों में कपूर, कुकुंम, गन्ध इत्यादि का विशेष रूप से विक्रय होता था।[2]

मछली पकड़ने तथा उसे बेचने का व्यवसाय मछुवारों द्वारा सम्पन्न होता था।[3]

ग्वाल तथा ग्वालिन मध्ययुगीन अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण व अपरिहार्य भूमिका निभाते थे। चूँकि समाज के प्रत्येक वर्ग को साधारणतया दूध से दुग्ध उत्पादों की सामान्य खान-पान में आवश्यकता होती थी अतः इनका महत्व था। अतः यह व्यवसाय उस काल में विकसित तथा सम्पन्न था।[4]

1· कीर्तिलता, पृ0- 68

2· वही, पृ0- 28

3· वही, पृ0- 30

4· डा0हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0- 100-105

जौनपुर का बाजार -

महाकवि विद्यापति ने जौनपुर के बाजार का रोचक वर्णन किया है ।

इस काल में सभी दृष्टिकोण से जौनपुर व्यस्त एवं समृद्ध शहर था । यातायात के लिए चौड़ी सड़के निश्चित योजना के आधार पर निर्मित थीं । शहर की सुन्दरता की ओर शासकों का भी पर्याप्त ध्यान था । आकर्षण का प्रमुख केन्द्र जौनपुर का बाजार था । जहाँ पर हर समुदाय के व्यापारी दिखाई देते थे । हर समय कोलाहल एवं शोर से कुछ भी सुनाई नहीं देता था। ऐसा लगता था मानों विशाल जन समुदाय उमड़ पड़ा हो । तैलंग, चोल, कलिंग, एवं बंगाल सभी स्थानों से व्यापारी यहाँ आते थे तथा अपनी भाषा में खरीददारी करते थे ।[1]

केन्द्रीय बाजार जो नगर का सबसे व्यस्ततम स्थान था, वस्तुओं के क्रय-विक्रय का एक शानदार चित्र उपस्थित करता था । विभिन्न प्रकार

1• कीर्तिलता, पृ0- 28-30, तथा पृ0- 48

की धातु की वस्तुओं का क्रय - विक्रय हो रहा था ।[1] बाजार में प्रसाधन सामग्री का बहुतायत में विक्रय हो रहा था ।[2] प्रचुर मात्रा में खाद्य- वस्तुएं एवं मछली बिकती थी । व्यवहारिक रूप से सभी प्रकार की उपभोग्य वस्तुओं का बाजार में क्रय - विक्रय होता था ।[3]

बाजार की परिकल्पना एवं व्यवस्थित आधार पर की गयी थी । भीड़ की विशालता का कहना ही क्या था । यहाँ तक कि एक के सिर(मस्तक) का तिलक छूटकर दूसरे के माथे में लग जाता था । ब्राह्मणों के लिए यह कठिन था कि वे अपने -" जनेउ " को चांडालों के स्पर्श से बचायें रख सकें ।[4]

यद्यपि सुल्तान इब्राहिम शाह शर्की एक शक्तिशाली शासक था फिर भी वह जौनपुर के आर्थिक जीवन को नियंत्रित करने एवं बाजार में

1• कीर्तिलता, पृ0-28-30 तथा पृ0- 29

2• वही, पृ0- 28

3• वही, पृ0- 30

4• वही, पृ0- 30

व्याप्त अराजकता को समाप्त करने में असफल रहा । विद्यापति ने लिखा है कि सेर भर पानी खरीद कर उसे भी पीते समय कपड़े से छानना पड़ता है, पान के लिए सोने का टंका दिया जाने लगा । ईंधन चन्दन के मोल बिकने लगा ।[1]

फिर भी जौनपुर का आर्थिक जीवन समृद्ध था तथा लोग खुशहाल थे ।

व्यापार तथा विनिमय -

मध्य काल में कृषि उत्पादन इतनी अधिक मात्रा में ग्रामों में तथा गैर कृषि उत्पादन शहरों में होता था कि स्थानीय जनता के उपयोग के बाद भी बाजार में विक्रय हेतु अत्यधिक मात्रा में समान बच जाता था । यह सामान कस्बों तथा शहरों के बाजारों में पहुँच जाता था जहाँ से देश में वरन् विदेशों में भी होती थी । इसी प्रकार विदेशी वस्तुओं की भी

- -

1. कीर्तिलता,, पृ0- 68.

माँग इस देश के विभिन्न वर्गों में थी । इस समस्त व्यापारिक प्रक्रिया के रूप में दो महत्त्वपूर्ण पहलू थे - 1• आन्तरिक एवं अन्तर्प्रादेशिक व्यापार तथा 2• वाह्य व्यापार ।[1]

देश की भौगोलिक दशा ने व्यापार व विनिमय की सुविधाएं यहाँ के लोगों को प्राकृतिक वरदान स्वरूप दी । पूर्वी तट पर बंगाल की खाड़ी में अनेक बन्दरगाह व्यापार की दृष्टि से विद्यमान थे । इन्हीं बन्दरगाहों पर पूर्व एशिया के देशों से सामान आता रहा तथा उन देशों को भारतवर्ष से सामान भेजा जाता रहा । इस प्रकार भारतवर्ष का पूर्वी देशों से व्यापारिक सम्बन्ध सहस्त्रों वर्षों तक बने रहे ।[2]

<u>यातायात के साधन :</u>

किसी भी देश में व्यापार व विनिमय के विकास के लिए राजनैतिक स्थिरता के अतिरिक्त पर्याप्त मात्रा में वस्तुओं का उपलब्ध

1• राधेश्याम , पृ0- 411

2• वही, पृ0- 412

ः ना

होना, प्राकृतिक साधनों का निरन्तर प्रयोग किया जाना व्यापारी समुदाय का संगठित होना तथा विविधा वस्तुओं का माँग का पूर्ति होना । वस्तुओं के लिए देश भर में बाजारों का होना तथा यातायात के साधनों का उपस्थित होना बहुत ही आवश्यक होता है । बिना इस उपकरणों के न तो औद्योगिक प्रगति न तो व्यापार सम्भव होता है । अलबरूनी ने लिखा है कि उत्तरी भारत में प्रादेशिक व्यापार के विकास के लिए सड़कों का होना नितान्त आवश्यक है । उसने कन्नोज से उत्तर पश्चिम में जाती हुई दो सड़कें भी देखी । उसने उत्तर पूर्वी मार्गों का विस्तृत उल्लेख किया है ।[1] पूर्व में बंगाल व उड़ीसा तक सड़कों का जाल फैला हुआ था यह सड़के गाँव व कस्बों से होती हुई शहरों से मिलती थी तथा इनका प्रयोग समाज के अन्य वर्गों के अतिरिक्त कारवानी, बंजारे, व्यापारी, सौदागर, मुल्तानी सभी किया करते थे ।[2]

1· रिजवी, श्याम , (दिल्ली सल्तनत का सामा0 एवं आर्थिक इतिहास) द्वारा उद्धृत , पृ0- 413

2· देखें, इस शोध प्रबन्ध का अध्याय - 3

इस काल में थल यातायात में सरायों व पुलों का अत्यधिक महत्व था । अत: देश के मुख्य भागों में सरायों का निर्माण कराया गया । शर्की शासन काल में जौनपुर राज्य क्षेत्र में भी सरायों का निर्माण हुआ ।[1]

जल - यातायात -

भारत वर्ष की भौगोलिक स्थिति इस प्रकार थी कि यहाँ पर जल यातायात के साधन भी उपलब्ध थे । सम्पूर्ण भारत में छोटी -बड़ी नदियों का जाल बिछा था । उत्तरी भारत में सिन्ध,नदी, गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र, गोमती तथा उनकी शाखाओं ने जल यातायात की सुविधा प्रदान की। जल यातायात सस्ता व सुगम था । उसका प्रयोग सैनिक अभियानों के समय तथा व्यापार के लिए बराबर होता रहता था । बलबन जब बंगाल की ओर बढ़ा तो उसने आदेश दिया कि गंगा यमुना के किनारे नौकाएं एकत्र की जाय।[2] शिहाबुद्दीन उल उमरी के अनुसार लखनौती में 20,000 छोटी परन्तु तीव्र

1• इम्पिरियल गजेटियर, भाग-10,पृ0- 298

2• रिजवी, पृ0 - 184

गति वाली नौकायें थीं । कुछ नौकायें जहाजों के बराबर थीं ।[1] सुल्तान फिरोज शाह तुगलक ने बंगाल के विरूद्ध अभियानों में भी नौकाओं का प्रयोग किया । जलमार्गों पर नौकाओं का प्रयोग सामान ढोने के लिए भी किया जाता था ।[2] इब्नबतूता ने अहौरा (बडी नौका) तथा छोटी नौकाओं को यातायात के साधन के रूप में देखा जाय ।[3] अफीफ के अनुसार सलोरा तथा मेरठ से जिन नावों में लाटें फिरोजाबाद लाई गयी वे नावें बहुत बडी थीं । कुछ नावों में 5000 मन अनाज ले जाया जाता था तथा कुछ में 1000 मन जो नौकायें छोटी छोटी थी उनमें 2000 मन अनाज आता था ।[4]

जैसे - जैसे उत्पादन में वृद्धि हुई या नये - नये शहरों की स्थापना हुयी वैसे - वैसे प्रमुख उत्पादन केन्द्र गाँव के स्तर से लेकर शहर तक मार्गों द्वारा

---

1. शिहाबुद्दीन-उल-उमरी (187), पृ0- 80 तथा रिजवी, पृ0-310
2. बरनी , पृ0- 86 तथा रिजवी, पृ0- 184
3. इब्नबतूता , पृ0-9 तथा रिजवी , पृ0- 162
4. बरनी, पृ0- 309, तथा रिजवी , पृ0- 127

जोड़े जाने लगे । यद्यपि सड़कें तथा यातायात के साधन अच्छे व सन्तोषजनक नहीं थे किन्तु वे व्यापार के लिए ठीक ही थे । जो भी कृषि उत्पादन होता था वह खेतों व खलिहानों से शहर तक बैलगाड़ियों में पहुँचाया जाता था।[1]

इस काल में मुद्रा- प्रणाली के विकास के साथ - साथ धीरे - धीरे वस्तु विनिमय की प्रणाली समाप्त हो गयी । सभी व्यापार मुद्रा में होने लगा । अन्तर्प्रदेशीय व अन्तर्देशीय व्यापार में भुगतान करने में सुविधा जनक हो गया ।

इस समय बड़े - बड़े शहरों में दिल्ली, दौलताबाद, लाहौर, मुल्तान, खम्भात, अनिहड़बाडा (पास), कड़ा, लखनौती, तथा जौनपुर आदि थे जहाँ कि आबादी घनी थी तथा जो कि न केवल उत्पादन, व्यापार विनिमय आदि के केन्द्र थे वरन् साथ ही साथ प्रशासनिक केन्द्र भी थे । शहर के लिए व्यापारी क्रियाओं का होना अत्यन्त आवश्यक था ।[2]

- -

1• हबीब, निजामी, दिल्ली सल्तनत भाग-1, पृ0- 322

2• राधेश्याम, पृ0- 417

आन्तरिक व्यापार :

इस काल में प्रत्येक शाह व गाँव एक दूसरे के आर्थिक साधनों पर निर्भर थे । शहर के लोगों के लिए अनाज तथा कच्चा माल गाँवों से ही आता था । वस्तु विनिमय के समाप्त होने व मुद्रा के प्रचलन के बाद, जब किसान को नकदी में लगान व अन्य करों का भुगतान करने के लिए प्रशासन ने बाध्य किया तो अपना अनाज अथवा उत्पादन की अन्य वस्तुएं मुद्रा प्राप्त करने के लिए बेचना पड़ता था । इस प्रकार शहरों को निकटवर्ती प्रदेशों से अनाज प्राप्त होता था । मेरठ से दिल्ली व जौनपुर को शराब प्राप्त होती थी ।[1] अवध से साधारण कपड़े प्राप्त होते थे ।[2] धारीदार कपडा लखनौती से प्राप्त होता था ।[3]

घोड़ों का अर्न्तप्रदेशीय व्यापार का उल्लेखभी इस काल के

1• बरनी, पृ0- 157, तथा रिजवी, पृ0- 82-83,

2• वही

3• बरनी, पृ0- 311, तथा रिजवी, पृ0- 82-83

ऐतिहासिक ग्रन्थों में मिलता है ।[1] बंगाल से हाथी प्राप्त होते थे ।[2] 1908 में गढ़कटंका तथा मदन महल के मध्य गड़ा हुआ एक खजाना मिला जिसमें जौनपुर के 1311 से 1553 ई0 तक के सिक्के प्राप्त हुए हैं । इससे ज्ञात होता है कि देश भर में आन्तरिक एवं अन्तर्प्रादेशिक व्यापार की मात्रा अत्यधिक थी ।[3]

साथ में देखे परिशिष्ट -1

---

1. बरनी, पृ0- 53, तथा रिजवी, पृ0- 161
2. वही, पृ0- 54, तथा वही, पृ0- 161-62
3. डि0ग0जबलपुर, पृ0 - 76 ० उद्धृत के0एस0लाल ०93० पृ0- 280

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

सांस्कृतिक - इतिहास

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

﴾सांस्कृतिक इतिहास﴿

साहित्य -

शर्की शासन काल में विभिन्न साहित्यिक प्रतिभायें विद्यमान थीं, जिन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया । इनमें जफराबाद तथा जौनपुर के अरबी - फारसी एवं हिन्दी के प्रसिद्द विद्वान शामिल है । जिन्होंने शर्की शासन के अर्न्तगत ही ख्याति प्राप्त की । इन विद्वानों, कवियों तथा रहस्यवादी सूफी सन्तों ने शैक्षिक परम्परा को और सुदृढ़ किया ।[1] इन साहित्यिक प्रतिभाओं का परिचय निम्नलिखित है ।

अरबी एवं फारसी के साहित्यकार -

1. सैय्यद नूरउद्दीन मुहम्मद -

सैय्यद नूर उद्दीन अबू मुहम्मद का जन्म 1333 ई0 में मदीना में हुआ था । ये निजामुद्दीन औलिया के शिष्य थे ।[2] इनकी

---

1. डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0 - 196

2. तजल्लिय नूर, जिल्द -2, पृ0- 11

मृत्यु 1422-23 ई0 में (इब्राहिम शर्की के शासन काल) में हुयी ।

2· मुल्ला निजामुद्दीन अलामी -

ये सैयद परिवार से सम्बन्धित थे तथा हदीस एवं फिका (इस्लामी न्याय शास्त्र) तथा उसूल (मौलिक विज्ञान) के महान पंडित थे ।[1] इन्होंने एक सूफी रहस्यवादी के रूप में अपनी आध्यात्मिक भावनायें मखदूम असदउद्दीन आफताब -ए-हिन्द के प्रति समर्पित की, जिन्होंने उन्हें "खिलाफत" प्रदान कर " आध्यात्मिक -ज्योति " की उपाधि प्रदान की ।[2] अरबी में उनकी प्रसिद्ध पुस्तक का नाम " जाद -उल-सुलह " तथा फारसी में जाद -उल-सल्किह " है[3] इनकी मृत्यु जाफराबाद में 1431 ई0 में हुयी ।

3· मखदूम मुल्ला रुकनुउद्दीन यफलखी :

ये एक लाख नियम स्मरण रखने की क्षमता रखते थे । इसी कारण

- -

1· तजाल्लिय नूर, जिल्द -2, पृ0- 22

2· राम पूजन तिवारी (सूफी मत, साधना और साहित्य), पृ0-32-33

3· तजल्लिये नूर , जिल्द- 22

से उन्हें "यकलखी " के नाम से सम्बोधित किया जाता है ।[1] ये मखदूम आफ्ताब-ए-हिन्द के शिष्य थे । इनकी मृत्यु इब्राहिम शर्की के शासन काल में 1417 ई0 में जफराबाद में हुयी । इनके शिष्यों में शेख नूर पुरी, शाह फतह कलन्दर, कलन्दरपुरी, आदि सूफी सन्त के रूप में काफी विख्यात हुए ।[2]

4· मीरान सैयद याकूब शामी -

ये सर्वप्रथम सिरिया से भारत आये थे तथा मुल्तान में निवास करते थे । वहीं इन्होंने "मखदूम शेख वहाउद्दीन जकरिया मुल्तानी " की समाधि पर श्रद्धांजलि अर्पित की तथा आध्यात्मिक लाभ प्राप्त किया ।[3] इसके पश्चात ये जफराबाद आये तथा यही इनकी मृत्यु भी हुयी ।[4]

5· सैयद कुतुबुद्दीन अबुल गैब -

इनका जन्म (1399-1400 ई0) में मदीना में हुआ था, इसलिए

- -

1· तजल्लिये नूर , जिल्द, पृ0- 24

2· वही,

3· वही, जिल्द-2, पृ0- 26

4· डा0शेफाली चटर्जी, पृ0- 198

इन्हें मदनी भी कहा जाता है ।[1] ये शैय्यद नूरूद्दीन अबू मुहम्मद के पुत्र थे तथा इनके गुरू शिहाबुद्दीन दौलताबादी थे ।[2] अलपमाल में ही ये सम्पूर्ण विद्याओं में पारंगत हो गये और काजी के उल्लेखनीय शिष्यों में इनकी गिनती होने लगी ।[3] इन्हें सम्पूर्ण कुरान कंठस्थ था । हजरत शाह मदार से प्राप्त ईश्वरीय ज्ञान और भक्ति से उनका हृदय इतना आलोकित हो गया कि इन्होंने सम्पूर्ण सांसारिक वस्तुओं की उपेक्षा कर ईश्वर की उपासना में स्वयं को संलग्न कर दिया ।[4] इनकी मृत्यु हुसैन शाह शर्की के शासन काल में 1464-65 ई0 में हुयी ।

6. काजी ताजुद्दीन नासेही -

ये दिल्ली से जफराबाद आये थे तथा उच्चकोटि के विद्वान थे । ये इब्राहिम बिन आधम के वंशज थे ।[5] आध्यात्मि ज्ञान प्राप्ति के पश्चात

---

1. तजल्लिये नूर, जिल्द-2, पृ0-11
2. वही,
3. वही, पृ0- 11=12
4. वही, पृ0- 12
5. वही, पृ0-20 तथा डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0- 198

ये शिक्षण कार्य में संलग्न हो गये । इन्होंने मखदूम आफताब-ए- हिन्द के शिष्य के रूप में उच्चतर आध्यात्मिक परमानन्द की प्राप्ति की ।[1] इनकी मृत्यु 1427 ई0 में इब्राहिम शाह शर्की के शासन काल में काजी के पद पर रहते हुए हुयी ।[2]

7. मौलाना शेख बहराम मक्की :

ये शहजादा जाफर खाँ के साथ जफराबाद आये थे । जाफर खाँ की विजय के पश्चात् यह जफराबाद में जामी मस्जिद के खातिब (इमाम) नियुक्त हुए ।[3] इनकी मृत्यु सुल्तान इब्राहिम शाह शर्की के शासन काल में 1425 में हुयी थी ।

8. मुल्ला शेख आदम -

ये मखदूम आफताब -ए-हिन्द के अनन्य शिष्यों में से एक

---

1. डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0- 21
2. वही, पृ0-198
3. तज्जल्ये नूर, जिल्द - 2, पृ0- 26

थे तथा इन्होंने भी शेख से उत्तराधिकार का वस्त्र प्राप्त किया था ।[1] इन्होंने तवक्कुल के सिद्धान्त का अनुशरण कर सूफी जीवन व्यतीत किया । इनकी मृत्यु 1434 ई0 में हुयी तथा इन्हें मुल्ला यकलखी की कब्र के पास नहीं दफनाया गया ।[2]

9. मौलाना बदरूद्दीन बद्र आलम -

ये हजरत आफताब -ए- हिन्द की शिष्य परम्परा के एक सदस्य थे । सुहरावर्दी शाखा के शेख नसीरूद्दीन चिराग - ए- देहलवी से भी इनके गहरे ताल्लुकात थे । इन्होंने फिका, उसूल, तफसीर, हदीस एवं मनतिक के विद्वान के रूप में विशेष ख्याति प्राप्त की ।[3] इनकी मृत्यु 1441 ई0 में जाफराबाद में हुयी ।

---

1. डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0- 198
2. तजाल्लिये नूर, जिल्द-2, पृ0-27
3. वही, पृ0- 26-27

10• <u>मखदूम शाह मसऊद खिल्वती -</u>

ये शेख -जलाल - उल - हक काजी खाँ नासेही के शिष्य तथा उत्तराधिकारी थे।[1] मुस्लिम धर्म शास्त्र (फिका) के विभिन्न गूढ़ तत्वों के समाधान हेतु मौन अवलम्बन कर एकान्त (खिल्वत) में 12 वर्ष तक चिन्तन करने के कारण इन्हें "खिल्वती" कहा गया है।[2] इनकी मृत्यु 1576 ई0 में हुयी।

11• <u>मौलाना शर्फ उद्दीन लाहौरी :</u>

यह जौनपुर के प्रथम शासक मलिक सरवर द्वारा आमन्त्रित किये गये थे। मलिक सरवर ने इस सूफी विद्वान के सम्मान में शहर की प्रमुख मस्जिद के पास एक खनकाह एवं एक मदरसे का निर्माण करवाया था।[3] इनकी रचनाओं में "शहर -ए- काफिया - ए - नह्व," शहर-ए-अजूदी " पर टीका एवं " तफसीर-ए- बजदवी " पर हाशिया प्रमुख है।[4]

1• डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0- 199

2• तजाल्लिये नूर, जिल्द-2, पृ0-30

3• डा0 शेफाली चटर्जी, जिल्द- 2, पृ0- 199

4• वही - 19

12· काजी नासिर उद्दीन गुम्बदी -

तैमूर के आक्रमण के समय यह दिल्ली से जौनपुर आये थे जहाँ जहाँ शर्की शासकों ने इनका हार्दिक सम्मान किया तथा जौनपुर के काजी के सम्मानीय पद पर नियुक्त किया ।[1] यह काजी अब्दुल मुक्तदर के प्रिय शिष्य थे ।[2] इन्होंने अपना ध्यान सांसारिक नश्वर वस्तुओं से हटाकर ईश्वरीय चिन्तन की ओर उन्मुख किया । इन्होंने अपना सारा जीवन छोटी सी गुम्बद नुमा कोठरी में व्यतीत किया । ऐसा कहा जाता है कि अपने जीवन के अन्तिम दिनों में ये कभी भी अपने कक्ष से बाहर नहीं आये तथा उनकी मृत्यु के पश्चात यहीं पर इन्हें दफनाया गया । इसी कारण इन्हें " गुम्बदी " के नाम से सम्बोधित किया गया ।[3] इन्होंने अनेक पुस्तकों की रचना की, परन्तु इस ओर अधिक ध्यान न दे पाने के कारण इनकी किसी भी पुस्तक को प्रसिद्धि नहीं प्राप्त हो सकी ।[4] इनकी मृत्यु 1412 ई0 में इब्राहिम शर्की के शासन काल में हुयी ।

1· तजाल्लिये नूर, जिल्द,-2, पृ0-32

2· डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0- 199

3· तजाल्लिये नूर, जिल्द-2, पृ0-32

4· वही, पृ0- 33

5·डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0- 200

13• मलिक -उल- उलेमा काजी शिहाबुद्दीन दौलता बादी -

ये इब्राहिम शर्की के समकालीन थे तथा एक शेख परिवार से सम्बन्ध रखते थे एवं मूल रूप से गजनी के निवासी थे ।[1] इन्होंने अपने समय के विद्वान काजी मुक्तदर से शिक्षा प्राप्त की थी । ये तैमूर के आक्रमण के समय मौलाना ख्वाजगी के साथ दिल्ली से आये थे ।[2] मौलाना ख्वाजगी कालपी चले गये तथा ये जौनपुर में स्थापित हो गये । सुल्तान इब्राहिम शर्की ने उन्हें जौनपुर का प्रधान काजी ﴾काजी-उल-कुज्जात ﴿ नियुक्त किया और अत्यधिक सम्मान के साथ दरबार में बैठने के लिए चाँदी की कुर्सी भेंटवर " मलिक -उल- उलेमा " ﴾ विद्वानों का प्रमुख ﴿ की उपाधि से सम्मानित किया ।[3]

सुल्तान इब्राहिम शाह शर्की ने उनके लिए पृथक मदरसे का प्रबन्ध कर दिया था जहाँ वे छात्रों को विभिन्न विषयों पर शिक्षा प्रदान करते थे ।[4] जौनपुर के प्रसिद्ध

1• तजाल्लिये नूर, जिल्द -2, पृ0- 33

2• डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0- 200

3• तजल्लिए नूर , जिल्द-2, पृ0- 34 तथा फरिश्ता , पृ0 - 306

4• डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0 - 200

सन्त मखदूम ईसा ताज चिश्ती तथा मौलाना सफी जौनपुरी उनके उल्लेखनीय छात्रों में से थे । वह अच्छे कवि थे । उन्होंने फारसी तथा अरबी दोनों भाषाओं की कविताओं की रचना की । उन्होंने " जायी-उल- सनाय " नाम से एक दीवान (कविता संग्रह) की भी रचना की ।

अरबी भाषा में उनकी " दवाइद " तथा कसीद- मुआरिज- उल-लामीआह-उल- अजार सर्वाधिक महत्वपूर्ण रचनाएं हैं ।[1] उन्होंने जलालुउद्दीन अबू उस्मान बिन उमर जो इब्न-उल-हाजिब के नाम से लोकप्रिय है, की अरबी व्याकरण पर समीक्षात्मक टीका " शहर - ए- काफिया " नाम से लिखी जिसे शरह -ए- हिन्दी नाम से भी जाना जाता है ।[2]

उनकी अन्य रचनाओं में किताब-ए- अरसाद (वाक्य रचना), बदी - उल-बयान (व्याख्यान सम्बन्धी), रिसाला-ए-इब्राहिम शाही (न्याय शास्त्र विधान पर लेख), मनाकिब-ए-सादात, शरह-ए-बजदवी(न्याय संहिता)

- -

1. तजल्लिए नूर , जिल्द -2, पृ0- 34

2. डा0शेफाली चटर्जी, पृ0-200-01

पर भी लिखा । इसके अलावा शिहाबुद्दीन दौलताबादी ने रिसाला तकसीम-ए-उलूम (विभिन्न विषयों पर व्याख्यात्मक निबन्ध), उसूल -ए- इब्राहिम शाही अरबी में, जिसमे उन्होंने शरियत की विभिन्न समस्याओं के सम्बन्ध में आलोचना की है । " तफ्सिर-ए- फारसी जिसका बहर-उल - मव्वाज (कुरान शरीफ पर फारसी में की गयी आलोचनात्मक टीका) भी है । सम्भवत: यह भारत में कुरान पर की गयी सर्वप्रथम समीक्षात्मक टीका है ।[1]

काजी और उनकी पत्नी की कब्र मुहल्ला रिजवी खाँ में अटाला मस्जिद के दक्षिण द्वार की ओर वर्तमान मिशन हाई स्कूल के घेरे में स्थित है ।[2]

14· शेख अब्दुल मलिक आदिल :

इनके पिता नवाब इमाद-उल- मुल्क शर्की सुल्तानों के मंत्रियों में से थे । इनका जन्म जौनपुर में ही हुआ था । काजी शिहाबुद्दीन इनके

1· तजल्लिए नूर - जिल्द -2, पृ0- 34 तथा हफ्त-ए-गुलशन, पो0-113-ब

2· वही, जिल्द -2, पृ0 - 37

शिक्षक थे । उनके कुशल निर्देशन में मात्र 18 वर्ष की आयु में ही ये इस्लामी परम्परा एवं तर्कशास्त्र में पारंगत हो गये ।[1] इन्होंने " काफिया " पर आलोचनात्मक टिप्पणी लिखकर काजी को भेंट की जिन्होंने इनकी शैक्षिक प्रतिभा से प्रभावित होकर अपने मदरसों में इन्हें प्रधानाचार्य के रूप में नियुक्त किया जहाँ इन्होंने एक शिक्षक के रूप में महान ख्याति प्राप्त की ।[2]

इनकी मृत्यु सिकन्दर लोदी के शासन काल में 1491 ई0में हुई । इनकी कब्र मुहल्ला कटघर में फैजबाग के अन्दर स्थित है। यह स्थान इस समय " बाग -ए - शिकस्त " के नाम से जाना जाता है ।[3]

15· मौलाना अलहदाद महशी जौनपुरी :-

यह मौलाना अब्दुल मलिक आदिल के शिष्य थे तथा इन्होंने

1· डा0 शेफाली चटर्जी , पृ0- 20।

2· तजल्लिए नूरे जिल्द -2, पृ0 - 38

3· वही, जिल्द -2, पृ0 - 38

मौलाना आदिल से इस्लामी धर्म शास्त्र (फिका) के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त किया था ।[1] इन्होंने मौलाना अब्दुला तलम्बी से अनेक विषयों का अध्ययन किया था तथा अनेक पुस्तकों की रचना की जिनमें " शहर -ए- काफिया " (काफिया पर टिप्पणी), शरह - ए- हिदया , हवशी -ए- वार , हवसी-ए-हिन्द एव तफसीर- ए- मदारक (हाशिया में लिखी हुयी टिप्पणी काफी महत्वपूर्ण है ।[2] इसके अलावा कुरान पर हाशिमयह -अल- मदारिकि-उल-तंजुल नामक एक समीक्षात्मक टीका एवं व्याकरण पर हाशियह-अल - शरह - अल - जामी नामक टीका लिखी ।[3]

सुल्तान हुसेन शाह शर्की ने उन्हें " शरह "-ए- हिदाया तथा बजदवी नामक पुस्तकों के लिखने पर 100 तन्का पुरस्कार स्वरूप प्रदान किया था जिस राशि को मौलाना ने अपने छात्रों तथा जरूरत- मन्दों पर खर्च किया ।[4]

- -

1. डा० शेफाली, पृ०- 202
2. तजल्लिये नूर, जिल्द -2, पृ०- 39
3. दिल्ली सल्तनत , जिल्द-6, पृ०- 533
4. ए०हलीम, जे०ए०एस०पी०, जिल्द-8, नं०-2, पृ०- 88

शेख मखदूम हसन ताहिर जो जौनपुर के शेखों में प्रमुख थे इनके मित्र थे। इनकी मृत्यु 1517 ई० में हुयी तथा इनकी कब्र ईदगाह जौनपुर की उत्तरी पश्चिमी दीवार के समीप स्थित है।[1]

16. काजी निजामुद्दीन केकलानी -

ये मूलत: केकलान के निवासी थे। सर्वप्रथम इनके दादा भारत में आये और उन्होंने गुजरात में निवास किया। इनका मौलिक नाम शिहाबुद्दीन अहमद बिन मुहम्मद था। केकलान प्रदेश में जन्म लेने के कारण ये केकेलानी के नाम से प्रसिद्ध हुए।[2] हदीस, उसूल, तफसीर, और इस्लामी धर्म शास्त्र फिका के ज्ञान में ये अपने समकालीन विद्वानों में सर्वोच्च माने जाते थे।[3] इनकी विद्वता की ख्याति से प्रभावित होकर सुल्तान इब्राहिम शाह शर्की ने इन्हें जौनपुर आमन्त्रित किया था तथा जौनपुर के काजी का प्रतिष्ठित पद

- -

तजल्लिये नूर, जिल्द-2, पृ0- 40

2. डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0- 41

3. तजल्लिये नूर, जिल्द-2, पृ0 - 41

प्रदान किया था ।[1] इनके विस्तृत ज्ञान से मलिक - उल - उलेमा काजी काजी शिहाबुद्दीन इतने प्रभावित थे कि वे किसी फतवे (घोषणा पत्र) पर उस समय तक मुहर नहीं लगाते थे जब तक कि काजी निजामुद्दीन केकलानी के उन कागजातों पर हस्ताक्षर नहीं होते थे ।[2]

काजी निजामुद्दीन की रचनाओं में इब्राहिम शाहिया की फतवा हनिफिया प्रसिद्ध है जो सुल्तान इब्राहिम शाह शर्की के आदेशानुसार लिखी गयी थी ।[3] दूसरी रचना फतवाओं अर्थात अन्य काजियों की उद्घोषणाओं का संकलन है ।[4] इनका देहान्त 1469 ई0 में हुआ तथा इनकी कब्र जौनपुर के चाचकपुर मुहल्ले में विद्यमान है ।[5]

18. काजी सलाह उद्दीन खलील :-

काजी सलाहउद्दीन खलील, काजी निजामुद्दीन केकलानी के पौत्र थे तथा इन्होंने अपने पितामह काजी निजामुद्दीन केकलानी के उत्तराधिकारी की हैसियत से बीस वर्षों तक जौनपुर के काजी के पद का कार्य

---

1. डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0--202.
2. तजल्लिये नूर, जिल्द-2, पृ0-41
3. डा0 शेफाली, पृ0- 203
4. वही
5. वही

योग्यता एवं निष्पक्षतापूर्वक निभाया ।[1]

काजी सलाहउद्दीन जलील की दो रचनाएं शरह-उल-शावाह तथा नजेर-फिल- फारूख सर्वाधिक प्रसिद्ध है । [2] पचास वर्ष की आयु में इनका देहावसान हुआ तथा इनकी कब्र मुहल्ला कटघर में स्थित है जो काजी सलाह कामकबरा के नाम से प्रसिद्ध है ।[3]

18· हजरत मौलाना ख्वाजगी -

जौनपुर के सुल्तान इब्राहिम शर्की की प्रार्थना पर काजी ख्वाजगी कालपी से जौनपुर आये थे ।[4] यहीं पर इनकी मृत्यु हुयी । इनके नाम पर स्थापित आज भी जौनपुर में "ख्वाजगी टोला " मुहल्ला विद्यमान है ।[5]

1· डा0 शेफाली,चटर्जी, पृ0 203

2· वही

3· वही

4· तजल्लिए -नूर, पृ0- 35-36

5· डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0 - 203

19. मौलाना समाउद्दीन काम्बोह -

ये मख्दूम सैयद जलालुद्दीन बुखारीके पौत्र तथा शेख काबू के शिष्य थे।[1] सुल्तान हुसेन शाह शर्की ने इन्हें "कतलाबा खाँ" की सम्मानित पदवी भी प्रदान की थी।[2]

"कतलग खाँ" हुसेन शाह के वजीर तथा अपने समय के सर्वोत्तम विद्वान माने जाते थे।[3]

1479 में सुल्तान हुसेन शाह शर्की के साथ बहलोल लोदी के युद्ध में शर्की सेना के पराजित होने पर ये भी बन्दी बनाये गये थे।[4]

20. मुल्ला अलाउद्दीन अता-उल- मुल्क -

ये काजी शिहाबुद्दीन के शिष्य थे।[5] ऐसा ज्ञात होता है

डा० शेफाली चटर्जी, पृ० - 203

2. वही

3. ए०हलीम, सुल्तान बहलोल लोदी, -द प्लेस आफ हिज डेथ एण्ड ड्यूरेशन ऑफ हिज रेन, ज०आफ इण्डियन हिस्ट्री, 1938, पृ०-327, तथा मुतखब, फो०102-ब

4. मुन्तखब, फो० 102-ब, तथा मखजन, फो० 112 अ

5. डा०शेफाली चटर्जी, पृ० - 204

कि इनका मस्तिष्क "काफिया " पढ़ने के पश्चात विभ्रमित हो गया था तथा वे इसके तर्क को नहीं समझ पाये थे इसलिए उनके गुरू काजी शिहाबुद्दीन ने अपने प्रिय शिष्य की सुविधा के लिए " काफिया " पर "शरह-ए-हिन्दी" नाम से विख्यात समीक्षात्मक टीका लिखी ।[1] जिससे मुल्ला साहब इसके तार्किक पक्ष को समझ सकें । इन्होंने आगे चलकर इसी पर शोध कार्य किया।[2]

21· मौलाना सफी जौनपुरी -

ये भी काजी शिहाबुद्दीन के शिष्यों में से एक थे ।[3] सफी जौनपुरी सुल्तान इब्राहिम शर्की के पुत्रों के शिक्षक भी थे ।[4] इन्होंने शर्की शाहजादों के लिए " काफिया " पर टीका भी लिखी थीं ।[5] इनकी मृत्यु आगरा में हुयी ।

1· तजल्लिये नूर, जिल्द-2, पृ0- 39

2· डा0 शेफाली, चटर्जी, पृ0- 204

3· वही

4· ए0हलीम, जे0ए0एस0पी0, जिल्द-8, दिसम्बर 1963, नं0-2, पृ0-87

5· वही, पृ0- 88

22· शेख अब्दुल समद -

ये दिल्ली के प्रसिद्ध काजी अब्दुल- भक्तदिर के पौत्र थे ।[1] इनके पितामह सुल्तान इब्राहिम शर्की द्वारा जौनपुर आमन्त्रित किये गये थे । अब्दुल समद अरबी व फारसी के प्रसिद्ध विद्वान थे । इनकी रचनाओं में "कसिदह-उल-लामियाह " प्रसिद्ध रचना है ।[2]

शर्की राज्य के हिन्दी साहित्यकार व कवि :-

भक्ति आन्दोलन का दूसरा युग (13वीं से 16वीं शताब्दी) गहरे विस्फोट का माल था जो हिन्दू तथा इस्लाम धर्म के सम्पर्क का स्वाभाविक परिणाम था ।[3] उत्तर भारत में सर्वप्रथम इस आन्दोलन का प्रवर्तन रामानन्द ने किया ।[4] रामानन्द के शिष्यों में कबीर, धन्ना , पीपा, सेन, रैदास आदि ने उनके आन्दोलन को आगे बढ़ाया ।[5]

1· डा० शेफाली चटर्जी, पृ०- 204

2· वही

3· यूसुफ हुसेन, पृ०- 5

4· वही, पृ०-12, तथा ताराचन्द (इन्फ्लूयेन्स आफ इस्लाम आन इण्डियन कल्चर) पृ०- 67

5· वही, पृ० - 13 तथा टवाइलाइट, पृ० - 294

उत्तर भारत में कबीर एवं पंजाब में गुरु नानक देव ने धार्मिक एकेश्वरवाद एवं जाति विभेद का खुलकर विरोध किया । इन समस्त सुधारकों में से कुछ शर्की राज्य क्षेत्र में भी फूल- फले । इन्होंने अपने सम्प्रदायों का उपदेश स्थानीय लोक भाषाओं में प्रदान किया । शर्की शासक अपनी हिन्दू प्रजा के प्रति भी समान रूप से सहिष्णु थे । स्थानीय हिन्दू राजाओं ने भी शर्की शासकों के अन्तर्गत पर्याप्त धार्मिक स्वतन्त्रता का उपभोग किया ।[1]

इस प्रकार हिन्दू - मुस्लिम सांस्कृतिक एकता के वातावरण ने शर्की शासन में हिन्दी साहित्य की उन्नति में पर्याप्त योगदान किया । इनमें हिन्दू मुस्लिम एकता के प्रतीक एवं भक्ति आन्दोलन के अन्यत्तम प्रवर्तक भजन्त कवि कबीर,दास, मिथिला के प्रसिद्ध कवि विद्यापति एवं शेष कुतुबन, मंझन एवं मुस्लिम रहस्यवादियों जैसे सैय्यद मुहम्मद जौनपुरी एवं दनियाल का योगदान विशेष रूप से उल्लेखनीय है ।[2]

1• कीर्तिलता, पृ0- 14-18, डि0 गजेटियर पृ0- 154

2• डा0 शेफाली, पृ0- 205

कबीर दास-:

हिन्दी साहित्य में कबीर दास का एक विशिष्ट स्थान है । कबीर पंथ में कबीर का अविर्भाव सं0 1455 में ज्येष्ठ पूर्णिमा को सोमवार के दिन तथा मृत्यु सं0 1575 माघ शुक्ल, एकादशी बुधवार के दिन माना जाता है ।[1]

रचनाएं :-

कबीर की प्रमाणिक रचनाओं का पता लगाना कठिन है । उनकी अधिकांश शिक्षा " बीजक " में संग्रहीत है । " बीजक " कबीर पंथियों का धर्म ग्रन्थ है । बीजक के सर्वाधिक प्रचलित संस्करणों में रमैना 84, सबद 115 विभिन्न प्रकार के दोहे 33 एवं साखी 353 है, अत: इस प्रकार सबसे पहले रमैनी सबद और अन्त में सब्जियाँ है ।[2]

सिक्खों के धार्मिक ग्रन्थ साहब " में कबीर के नाम से 228 पद

---

1. हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास, चतुर्थ भाग, पृ0- 126-27
2. वही पृ0- 134

तथा 238 साखियाँ, संग्रहीत है । ग्रन्थ साहब का संकलन सिक्खों के पाँचवे गुरु अर्जुन देव ने संवत 1661 में कराया था ।[1]

इसके अतिरिक्त कबीर ग्रन्थावली में पहले 808 साखियाँ, फिर 403 पद तथा अन्त में 7 रमैनियाँ है ।[2]

भाषा -

उपर्युक्त तीनों ग्रन्थों में कबीर ग्रन्थावली पर राजस्थानी ग्रन्थ साहब पर पंजाबी तथा बीजक पर भोजपुरी भाषा का प्रभाव दिखाई देता है । बीजक की भाषा विशेषकर बनारस, मिर्जापुर , एवं गोरखपुर के आस-पास बोली जाने वाली भाषा है ।[3] कबीर की रचनाओं में कई भाषा प्रयुक्त होने के कारण इसे " पंचरंगी भाषा " या " सधुक्कड़ी भाषा " कहते हैं ।

1· हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास, चतुर्थ भाग, खण्ड-2, पृ0-134

2· हि0सा0का0वृ0इति0, पृ0-135 (डा0 श्याम सुन्दर दास (सम्पादित)

3· वेस्ट काट - पृ0- 116-117

इसमें खड़ी बोली का प्रयोग विशेष रूप से मुसलमानों के लिए किया गया है। वास्तव में कबीर की भाषा साहित्यिक रूढ़िभाषा न होकर बोलचाल की सामान्य जनभाषा है । कबीर ने स्थानीय (काशी की) भाषा का प्रयोग न कर अपनी बातें उस समय की सामान्य हिन्दी में कही ।[1]

शर्की शासन काल में हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में कबीर को एक प्रमुख स्थान प्राप्त है । तत्कालीन समाज में कबीर का प्रभाव नि:सन्देह महत्वपूर्ण है। इस काल में जौनपुर का शासक सुल्तान हुसेन शाह शर्की था, जिसने इस सूफी संत को न केवल राजकीय संरक्षणप्रदान किया अपितु यथेष्ट मात्रा में प्रोत्साहन भी प्रदान किया ।[2]

विद्यापति ठाकुर -

मिथिला के विद्यापति ठाकुर शर्की राज्यकाल के महत्वपूर्ण हिन्दी साहित्यकार एवं कवि थे । विद्यापति ने अपने काव्यों से आसाम, बंगाल ,

---

1. हि०सा०का०वृ० इतिहास, पृ०- 136

2. डा० शेफाली चटर्जी, पृ०- 208

हिन्दी तथा मैथिली भाषी क्षेत्रों को समान रूप से प्रभावित किया ।[1]

इनका जन्म वर्तमान बिहार प्रान्त के जिला दरभंगा, सब-डिवीजन मधुबनी, थाना बेनी पट्टी के विसपी ग्राम में होना माना जाता है ।[2] इनका जन्म काल लक्ष्मण संवत 241, शक सं0 1272 तथा ई0 सन् 1350 में होना माना जाता है।[3] इनकी मृत्यु 1450 ई0, ल0स0 341 में या इसके कुछ दिनों के बाद माना जाता है ।[4]

रचनाएं :-

विद्यापति ठाकुर ने संस्कृत तथा मैथिल भाषा में अनेक रचनाएं की । जिनमें कीर्तिलता व कीर्तिपताका विशेष महत्त्वपूर्ण रचनायें हैं ।

विद्यापति ने अपनी रचनाओं को प्राकृत तथा अपभ्रंश एवं मैथिली

---

1. द सांग्स आफ विद्यापति, सम्पा0सुभद्रा झा (विद्यापति गीत संग्रह) पृ0 -1
2. गीत विद्यापति, डा0 महेन्द्र नाथ दुबे, पृ0- 3
3. वही, पृ0-4, कीर्तिलता, पृ0- 7-8
4. कीर्तिलता, पृ0- 9

लोक भाषा में लिखा । उनकी दो पुस्तकें कीर्तिलता एवं कीर्ति पताका इस दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है । कीर्तिलता का गद्य, संस्कृत गद्य शैली पर अवलम्बित है । बीच - बीच में एकाध क्रिया अथवा अव्यय को छोड़कर शब्दावली भी प्राय: संस्कृत की ही है ।[1]

विद्यापति अपनी रचनाओं में जौनपुर की समृद्धि का वर्णन किया है तथा जौनपुर राज दरबार का वर्णन अत्यन्त रोचक है।[2] विद्यापति एक श्रृंगारी कवि भी थे । उन्होंने जौनपुर की स्त्रियों एवं वेश्याओं को भी वर्णित किया है ।[3]

विद्यापति को अनेक उपाधियों से भी विभूषित किया गया था- जैसे - अभिनव जयदेव, कवि शेखर, कवि रंजन, कवि कंठहार, दश अवधान तथा राज पंडित इत्यादि ।[4]

- -

1. कीर्तिलता, (भूमिका) पृ0- 20

2. कीर्तिलता (द्वितीय पल्लव), पृ0- 51

3. वही, पृ0- 27

4. महाकवि विद्यापति (डा0 कृष्ण नन्दन पीयूष) 1968 पृ0-18-19

" परिजात - हरण " एवं "रुक्मिणी- परिणय " के रचयिता के रूप में वे हिन्दी के प्रथम नाटक कार थे ।[1]

शेख कुतुबन -

शर्की शासन काल में जौनपुर में समन्वय, सहिष्णुता एवं उदारता का वातावरण था । इसी वातावरण में हिन्दी की प्रेमाख्यान परम्परा के अनेक कवि हुए । इनमें शेख कुतुबन का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।[2] ये कालपी के शेख बुरहान के शिष्य थे ।[3] बाद में इन्होंने सत्तारी सम्प्रदाय में प्रवेश किया ।

श्रृंगार रस के सूफी कवि शेख कुतुबन जौनपुर के सुल्तान हुसेन शाह शर्की के दरबारी कवि थे, जिसे उन्होंने अपनी प्रसिद्ध रचना "मृगावती"

---

1. डा० शेफाली चटर्जी, पृ0- 210
2. हि0सा0का0बृ0 इति0, खंड-3, पृ0- 310
3. हिन्दी सा0 का बृ0इति0 - खण्ड-3, पृ0- 310

जो अवधी भाषा में लिखी गयी है, समर्पित की थी ।[1] मृगावती में जन्मेजय, राजा परीक्षित का पुत्र, सुदामा, विक्रम, भोज, भर्तृहरि, विभोग एवं गोरखनाथ पंथ का उल्लेख मिलता है ।[2]

शेख कुतुबन ने जौनपुर के शासक सुल्तान हुसैन शाह शर्की की बहुत ही प्रशंसा की है ।[3]

शेख कुतुबन ने अपनी मसनवी 1501 ई0 में लिखी[4] जबकि उसका संरक्षक सुल्तान हुसैन शाह कहलगाँव में एक भगोड़े के रूप में, बंगाल के सुल्तान अलाउद्दीन हुसैन शाह के आश्रम में जीवन के अन्तिम दिन व्यतीत कर रहा था ।

---

1. हिन्दी सा0 का वृ0 इति0 - खण्ड-3, पृ0- 310
2. ए0 रशीद, (सोसाइटी एण्ड कल्चर इन मेडिवल इण्डिया) 1969, पृ0- 203 - 204
3. हि0सा0का वृ0 इति0 - खण्ड- 3, पृ0- 309
4. दिल्ली सल्तनत, भारतीय विद्या भवन, जिल्द-6, पृ0- 505

मंझन जौनपुरी :-

मंझन का नाम भी जौनपुर के सूफी प्रेम कवियों में लिया जाता है । इन्होंने " मधुमालती " नामक प्रेम काव्य की रचना की । रामपुर रियासत के राजकीय पुस्तकालय में इस को सम्पूर्ण कृति उपलब्ध हुयी है जिसके अनुसार मंझन ने मधुमालती की रचना हिजरी 952 में की थी ।[1]

मन्झन अपने समय के लोकप्रिय कवि थे । अवधी में उनके समान काव्य रचना को शक्ति जायसी को छोड़कर अन्य किसी में नहीं देखी जाती है ।[2]

नूर मुहम्मद -

जौनपुर की शाहगंज तहसील में शबरहद नाम के एक प्रसिद्ध गाँव में कवि नूर मुहम्मद का जन्म हुआ था । ये फारसी में भी " कामियाब"

---

1. त्रिपुरारि भास्कर , (जौनपुर का इतिहास), पृ0- 113-14
2. डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0- 212

नूर मुहम्मद -

जौनपुर की शाहगंज तहसील में सबरहद नाम के एक प्रसिद्ध गाँव में कवि नूर मुहम्मद का जन्म हुआ था । ये फारसी में भी "कामियाब" नाम से कविता करते थे । इन्द्रावती, अनुराग बाँसुरी, तथा नल दमन इनकी तीन रचनाएं मिलती है ।[1]

फारसी के साथ - साथ नूर मुहम्मद हिन्दी के सभी विलक्षण कवि थे । काम तो उन्होंने " दिन ; का ही किया पर हिन्दी में किया । परिणाम यह हुआ कि मजहबी लोगों का विरोध हुआ ।[2]

शेख नबी जौनपुरी -

जौनपुर में हिन्दी प्रेमाख्यान परम्परा की श्रृंखला में शेख नबी जौनपुर अन्तिम कड़ी है । ये जौनपुर के मउ नामक स्थान के निवासी थे । इन्होंने "ज्ञान दीप " नामक एक आख्यान लिखा जिसमें राजा ज्ञानदीप

1· त्रिपुरारि भास्कर , पृ0- 114

2· अनुराग बाँसुरी, पृ0- 12

तथा रानी देवयानी की कथा है ।[1] यह मसनवी प्रेम तथा सौन्दर्य की सबसे सुन्दर रचना मानी जाती है । एक प्रकार से प्रेम तथा सौन्दर्य को सबसे सुन्दर रचना मानी जाती है । एक प्रकार से प्रेम गाथा काव्य के ये अन्तिम कवि थे।[2]

मखदूम दानियाल खिजरी जौनपुरी -

शर्की काल के मुस्लिम रहस्यवादियों में मखदूम दानियाल खिजरी का नाम विशेष रूप से लिया जाता है । ये शर्की काल के एक अन्य महत्वपूर्ण विद्वान तथा सूफी सन्त थे ।[3] महदवी सम्प्रदाय के संस्थापक सैय्यद मुहम्मद जौनपुरी एवं सैय्यद अहमद खिजरी , मखदूम साहब के शिष्य एवं अनुयायी थे । इन्होंने अरबी तथा पारसी भाषा में कविताओं की रचना की परन्तु हिन्दी कवियों में इनका श्रेष्ठ स्थान रहा ।[4]

1· जौनपुर का इतिहास , पृ0- 114

2· डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0- 212

3· तजल्लिए नूर - जिल्द -1, पृ0 - 56

4· वही, पृ0 - 213

सैयद मुहम्मद जौनपुरी :

15वीं शताब्दी के मध्य में जब जौनपुर की सांस्कृतिक प्रतिभा अपने परमोत्कर्ष पर थी । सैयद मुहम्मद का जौनपुर में जन्म हुआ ।[1] सैयद मुहम्मद जौनपुरी भारत मे महदवी रहस्यवादी आन्दोलन के संस्थापक थे एवं शर्की शासन काल में सुल्तान हुसेन शाह शर्की के संरक्षण में रहे ।[2] ये मूलत : साम्यवादी विचारों के व्यक्ति थे । हिन्दू - मुस्लिम एकता के कट्टर समर्थक थे । इन्होंने हिन्दी एवं अन्य भाषाओं में अपनी रचनाएं लिखी ।[3]

इसके अतिरिक्त शेख साद-उद्दीन " खैराबादी, शेख साद-उल्लाह-लखनवी , शेख उस्मान शिराजी, मखदूम ख्वाजा ईसा ताज चिश्ती ,मौलाना जलाउद्दीन मुहम्मद आदि जौनपुर की साहित्यिक प्रतिभाओं में गिने जाते हैं । ये शर्की सल्तनत व अन्य समीपवर्ती भागों से जौनपुर आये थे ।[4]

- -

1· डा० शेफाली चटर्जी , पृ०- 213

2· तजल्लिये नूर, जिल्द-7, पृ० - 58

3· डा० शेफाली चटर्जी, पृ० - 213

4· वही

शर्की शासकों ने इन हिन्दू तथा मुस्लिम साहित्यकारों को संरक्षण प्रदान करके जौनपुर के साहित्यिक गौरव को और ऊँचा उठाया । इन साहित्यिक विभूतियों के कारण जौनपुर के शीराज-ए- हिन्द होने का गौरव अक्षुण्य बना रहा और मध्य कालीन भारत के इतिहास में जौनपुर शिक्षा के एक उल्लेखनीय केन्द्र के रूप में समझा जाने लगा ।

" स्थापत्य कला "

तैमूर के आक्रमण के समक्ष दिल्ली की केन्द्रीय सरकार बिल्कुल अकर्मण्य सिद्ध हुयी । तैमूर के लौट जाने के पश्चात देश में अराजकता फैल गयी दिल्ली सल्तनत में इसे अन्धकार का युग कहा जाता है, परन्तु स्थापत्य कला की दृष्टि से यह युग अत्यन्त उज्जवल था ।

इस समयजो स्वतन्त्र राज्य स्थापित हुए उसमें जौनपुर के शर्की राज्य का विशेष स्थान है । शर्की कालीन भवनों में मस्जिदों के अतिरिक्त अन्य सभी इमारते नष्ट हो गयी है। लोदियों ने बदले की भावना के तहत जौनपुर की सभी इमारतों को नष्ट कर दिया । मुल्लाओं तथा उलेमाओं के विरोध के कारण ही

मस्जिदों का अस्तित्व शेष रह गया ।

जौनपुर का दुर्ग :

इस दुर्ग के निर्माण के सम्बन्ध में कहा जाता है कि इसे अकबर ने बनवाया था किन्तु इस दुर्ग की मस्जिद एवं हम्मामफिरोज शाह के भाई इब्राहिम बारबक ने बनवाये थे ।[1] यह दुर्ग करारकोट के खण्डहरों पर गोमती के उत्तरी किनारे पर मिट्टी के एक कृत्रिम टीले को पत्थर की दीवारों से घेर कर बना हुआ है । इसका मुख्य द्वार अब भी अर्ध ध्वस्त रूप में विद्यमान है । फाटक की मेहराब एवं चौखट के बीच पालिस की हुयी ईंटे लगायी गयी हैं तथा दीवारों को कई भागों में विभाजित कर सुन्दरताओं से सजाया गया है।[2]

इब्राहिम बारबक द्वारा निर्मित हम्माम तुर्की हम्मामों की भाँति है । इसका अधिकतर भाग भूमि के स्तर से काफी नीचा है ।[3]

---

1. ए०फ्यूहरर (दि शर्की आर्किटेक्चर आफ जौनपुर) वाराणसी, 1971, पृ०-23
2. डा० शेफाली चटर्जी, पृ०- 182
3. वही

दुर्ग में इब्राहिम बारबक की मस्जिद को पर्सी ब्राउन ने साधारण मस्जिद की संज्ञा दी है ।[1] परन्तु यह मस्जिद बंगाली शैली पर बनी जौनपुर की प्रथम मस्जिद है। जिसके खम्भों पर हिन्दू अलंकरण है और यह मेहराबों पर टिकी हुयी है ।[2] मस्जिद की छत पर तीन छोटे और नीचे गुम्बद है। यह आश्चर्य जनक है कि मस्जिद के भवन पर कोई मीनार नहीं है । कुछ दूरी पर पत्थर के दो स्तम्भ थे, जिनमें अब केवल एक ही शेष रह गया है ।[3]

इन भवनों का निर्माण 1376·77 ई0 में इब्राहिम नायक बारबक ने किया था ।[4] इन निर्मित भवनों पर से शर्की कालीन वास्तु की विशेषताएं सुस्पष्ट नहीं होती । इस विषय पर थोड़ा बहुत प्रकाश, जिस पहली इमारत से पड़ता है । वह शहर से कुछ मील बाहर जफीराबाद नामक गाँव में निर्मित शेख बरहा की मस्जिद है । इस मसिजद के निर्माण का वर्ष 1311 ई0 माना गया है ।[5] इस मस्जिद का

1· पर्सी ब्राउन, इण्डियन आर्किटेक्चर (बम्बई, 1964) पृ0-42

2· डा0 शेफाली चटर्जी , पृ0 - 182

3· वही,

4· वही , पृ0- 42

5· वही

निर्माण निकटवर्ती हिन्दू मन्दिरों की सामग्रियों से हुआ है । यह आम मस्जिदों से पूर्णतः भिन्न है । 65 फिट लम्बाई व चौड़ाई वाले वर्गाकार हाल है जिसके ऊपर गुम्बद रहित 20 फीट ऊँची सपाट छत है । जो एक बड़े पत्थर के शलाका पर टिकी हुई है इस भवन की विशेषता है कि मजबूत दिखने के बावजूद इसमें कोई आकर्षण नहीं है ।

शर्की कालीन मसजिदें -

शर्की कालीन मस्जिदों का गौरव उनकी विशेष शैली तथा काम में लायी जाने वाली सामग्री पर आधारित है । इनका अनोखापन इनकी विशिष्ट शैली के कारण है, जो जौनपुर शैली " अथवा " शर्की कालीन स्थापत्य कला की शैली " के नाम से विख्यात है ।

शर्की कालीन सभी मस्जिदें पत्थर, चूने , गारे और कंकरिट से बनी है ।[1] गारे तथा ईंटों की दीवारों पर सावधानी से काटे हुए चौकोर पत्थर अत्यन्त सफाई तथा कुशलता से जोड़े गये हैं । मस्जिदों के भीतर के

---

1. फ्यूहरर , दि शर्की आर्किटेक्चर आफ जौनपुर, पृ०- 30

स्तम्भ , छतें तथा गुम्बद सभी पत्थर के हैं, किन्तु इनके बाहरी भागों पर प्लास्टर किया हुआ है । भीतरी भागों की सजावट तथा सुन्दरता बढ़ाने हेतु अल्प मात्रा में काले संगमरमर का भी प्रयोग किया गया है ।[1] अटाला मसजिद शर्की वास्तुकला का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है तथा वह बाद की मसजिदों के लिए उदाहरण व अमानत साबित हुयी । किन्तु बाद की मसजिदें का बनके शिल्प से बेहतर नहीं बन पायी ।[2] अटाला मस्जिद का नाम उससे पूर्व वहीं पर स्थित अटाला देवी के हिन्दू मन्दिर के नाम पर पड़ा । जिसके भग्नावशेषों तथा आस पास के अन्य मन्दिरों के भग्नावशेषों की सामग्री से यह मसजिद निर्मित्त हुयी ।[3]

अटाला मसजिद :- :-
-------------- जौनपुर की मस्जिदों में अटाला मसजिद जो 1408 ई0 में बनकर तैयार हुयी । सर्वाधिक अलंकृत एवं सुन्दर है।[4]

- -

1· फ्यूहरर , दि शर्की आर्किटेक्चर आफ जौनपुर, पृ0- 30
2· पर्सी, ब्राउन, पृ0- 42
3· वही
4· जेम्स फर्गुसन, हिस्ट्री आफ इण्डियन एण्ड ईस्टर्न आर्किटेक्चर, (नईदिल्ली, 1972) जिल्द-2, पृ0- 226

इसकी चौकोर स्तम्भों पर टिकी छत की बनावट हिन्दू मन्दिरों की भाँति है ।[1] परन्तु अटाला मस्जिद में कोटिकायें बाहर को ओर खुलती हैं, जो कि मुसलमानों द्वारा निर्मित्त भवनों में एक सामान्य बात थी।[2] आकार प्रकार की दृष्टि से अटाला मस्जिद लाल दरवाजा तथा जामा मस्जिद के बीच है ।[3] यद्यपि अटाला मस्जिद का निर्माण ख्वाजा कामिल खाँ ने 1377 ई0 में आरम्भ किया था, परन्तु यह इब्राहिम शाह शर्की के शासन काल 1408 ई0 में पूरी हुयी । अटाला मस्जिद की सर्वाधिक सुन्दर एवं शानदार चीज मिस्र के मन्दिरों जैसी मेहराबें हैं, जो बहुत ही भव्य लगती हैं ।[4] यह मस्जिद तीन ओर से दो मंजिला खनकाहों से घिरी हुयी है, इसका आराधना कक्ष पश्चिम की ओर है ।[5]

- -

1· जेम्स फर्गुसन, हिस्ट्री आफ इण्डियन एण्ड ईस्टर्न आर्किटेक्चर (नई दिल्ली, तथा पर्सी ब्राउन, पृ0-42-44 , (1972) जिल्द-2, पृ0-226

2· वही, पृ0-223, फुटनोट, 1 तथा पृ0-227 तथा फ्यूहरर, पृ0-31

3· फ्यूहरर, पृ0-30

4· पर्सीब्राउन, पृ0- 43

5· डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0-183

मस्जिद का मुख्य भवन पाँच भागों में बूँटा हुआ है । बीच के भाग पर गुम्बद है कोने के कमरे शेष कमरों से अलग है तथा इनका मार्ग भी अलग से है । कदाचित यह कमरे शहजादियों तथा शाही हरम की अन्य महिलाओं के नमाज पढ़ने के लिए सुरक्षित होंगे ।[1] बीच के भाग पर बने गुम्बद के सामने मिस्र की प्राचीन इमारतों के समान प्रवेश द्वार है । यह ऊँचा होने के कारण मीनार का भी काम देता है ।[2] यह द्वारा मिस्र के मंदिरों के मुख्य पट के मध्य में दिये हुए प्रवेश द्वार को भाँति हैं ।

जौनपुर की मस्जिदों में विशाल मेहराबों का होना एक प्रमुख विशेषता है । इस मेहराब के कारण इसके पीछे मस्जिद दखी जा सकती है, क्योंकि इस विशाल मेहराब में खुले हुए आल्य बने हुए हैं । गुम्बदों की भीतरी सजावट के लिए काले पत्थरों का प्रयोग किया गया है ।[3]

1· पर्सी ब्राउन, पृ०- 43

2· फर्गुसन, पूर्वोक्त, पृ०-225, तथा एफ्यूहरर, पूर्वोक्त, पृ०- 29 तथा पर्सी ब्राउन, पृ०- 42-43

3· पर्सी ब्राउन, पृ०- 43

खालिस -मुखलिस मस्जिद -

ऐतिहासिक दृष्टि से शर्की कालीन मसजिदों में दूसरा स्थान खालिस - मुखलिस मसजिद का है । इसका निर्माण मलिक खालिस तथा मलिक मुखलिस ने सुल्तान इब्राहिम शाह शर्की के समय अत्यन्त 1430 के आस पास कराया था ।[1] यह मसजिद गोमती के तट पर दरीबा मोहल्ले में स्थित है ।[2] इस मसजिद में गुम्बद के सामने छोटे - छोटे कंगूरों की मुडेर है, जो शर्की कालीन भवन निर्माण कला के लिए बिल्कुल अनोखी चीज है । इस मसजिद की सादगी बनाये रखने के लिए इसे किसी भी प्रकार से अलंकृत नहीं किया गया है । इस मसजिद को " चार अंगुली " मसजिद भी कहते हैं ।[3] जिसकी विशेषता यह है कि अंगुलियां कितनी ही पतली अथवा मोटी क्यों न हो इस पत्थर की नाप चार अंगुलियों के बराबर ही होती है । यह एक गुम्बद मय बड़े हाल के रूप में अटाला मसजिद के ही सिद्धान्त पर आधारित है ।[4]

---

1. फ्यूहरर , पूर्वोक्त, पृ0-41 , तथा पर्सी ब्राउन पृ0- 44
2. डा0 शेफाली चटर्जी पृ0- 184
3. फ्यूहरर, पूर्वोक्त , पृ0- 41
4. पर्सी ब्राउन, पृ0-44

झंझरी मस्जिद :

यह मसजिद गोमती नदी के तट पर सिपाह मोहल्ले में स्थित है।[1] यह वस्तुत: पूर्व में निर्मित एक पूर्ण मसजिद का अवशेष मात्र है जिससे स्पष्ट होता है कि अपनी पूर्णावस्था में यह एक वास्तु का अनूठा उदाहरण रहा होगा।[2] मस्जिद के मुख्य प्रवेश द्वार में अनेक खुले हुए ताव, जालियाँ तथा झंझरियाँ होने के कारण इसे झंझरी मस्जिद कहा जाता है।[3] यह मसजिद निश्चय ही अन्य मसजिदों से छोटी है, किन्तु विशाल मेहराब में बने प्रवेश द्वार की सजावट व सुन्दरता अन्य मसजिदों से कुछ अधिक है।

लाल दरवाजा मसजिद -

सुल्तान मुहमूद शाह शर्की के शासन काल का केवल एक ही अवशेष बीबी राजी की मसिजद है। यह लाल दरवाजा मसजिद के नाम से विख्यात है। इसका यह नाम होने का कारण यह है कि मसजिद

---

1. डा० शेफाली चटर्जी, पृ०- 184

2. पर्सी ब्राउन, पृ०- 44

3. वही, पृ०- 44

के प्रवेश द्वार सिन्दूर के रंग का है ।[1] यह मसजिद वास्तव में बीबी राजी के महल की खाना मस्जिद थी ।[2] इस महल के खण्डहर कुछ दूरी पर उत्तर-पश्चिम में पाये जाते हैं । इस अवशेष के अतिरिक्त सुल्तान सिकन्दर लोदी ने सारे महल को तहस-नहस कर दिया था ।[3]

इस मस्जिद में गुम्बद वाले मध्य कक्ष के सामने एक और कक्ष, मार्ग की रक्षा के रूप में बना हुआ है । जिसका उदाहरण अन्य किसी शर्की मस्जिद में नहीं मिलता है । गुम्बद मार्ग की रक्षा के रूप में कक्ष तथा तीनों मेहराबों के अतिरिक्त " लाल दरवाजा मसजिद की एक एक ईंट से हिन्दू शैली एवं बनावट झलकती है ।क्योंकि यह हिन्दू वास्तुकार कमाऊ (जो कि विसादू का पुत्र था) के निर्देशन में निर्मित्त थी ।[4] इस मसजिद की "जनाना गैलरी " मध्य के कक्ष में है जो शर्की भवन निर्माण के लिए बिल्कुल नई एवं अछूती चीज है ।[5]

1· फ्यूहरर, पूर्वोक्त, पृ0- 43 तथा पर्सी ब्राउन, पृ0- 44

2· पर्सी,ब्राउन, पृ0- 44

3· वही,

4· फर्गुसन , पूर्वोक्त, पृ0- 225, पर्सी ब्राउन

5· पर्सी ब्राउन, पृ0- 44

जामा मस्जिद -

जामा मस्जिद हुसेन शाह शर्की की सबसे विशाल खुली हुई एवं शर्कियों की अन्तिम इमारत है ।[1] इसकी योजना विन्यास अटाला मस्जिद जैसी होने पर भी इस मसजिद की अपनी कुछ अलग विशेषताएं हैं । यह मस्जिद अन्य मसजिदों की अपेक्षा बहुत अधिक ऊँची कुर्सी पर बनायी गयी है । क्योंकि इसकी ऊँचाई 16 या 20 फीट है ।[2] जामा मस्जिद अलग-अलग कमरों में विभाजित है । बीच के कमरे की छत पर गुम्बद है, जिसके दोनों ओर खम्भों पर टिके हुए दो कमरे हैं । फिटों के मतानुसार गुम्बद वाला कक्ष जौनपुरी कारीगरों की चरम सीमा है । गुम्बद की बाहरी परत भीतर के भाग से कई फुट दूर है । गुम्बद की बनावट कमरखी अर्थात फल की भाँति है । बीच के कक्ष से लगे हुए कक्ष दो मंजिले हैं, जिनमें झंझरियों एवं जालियों का काम है । इन कक्षों का मार्ग भिन्न होने से यह अनुमान होता है कि यह कक्ष इस मसजिद का जनाना भाग रहे होंगे ।[3]

---

1. पर्सी ब्राउन, पृ०- 44
2. वही, पृ०- 44
3. फ्यूहरर , पूर्वोक्त , पृ०- 52

शर्की कालीन मकबरें -

समस्त शर्की शासकों की समाधियाँ उनकी राजधानी जौनपुर में ही हैं। यद्यपि उनमें से कुछ शासकों की मृत्यु, जौनपुर से बाहर हुयी थी, उदाहरण के लिए मुहम्मद शाह की मृत्यु कन्नौज के निकट राजगीर नामक स्थान पर गंगा के किनारे एक बाग में हुयी।[1] हुसेन शाह शर्की की मृत्यु लखनौती के कहलगाँव में हुयी।[2] परन्तु इन शासकों की अन्तिम इच्छानुसार उन्हें जौनपुर में ही दफनाया गया।

जौनपुर के शर्की शासकों के अधिकांश मकबरें जामी मस्जिद के उत्तर में, ईंट तथा पत्थर से बने विस्तृत क्षेत्र में, " खानगाह " अथवा शर्की शासकों के समाधि स्थल के नाम से जाना जाता है, विद्यमान है।

सात शासकों का मकबरा - अटाला मस्जिद से करीब 500 गज पूर्व में एक स्थान, जिसे साधारणतः " सात शासकों की समाधियाँ " नाम से

---

1. मखजन, फो0 108अ-ब
2. दाऊदी, फो0-55ब, ब्रिग्स, जिल्द-1, पृ0- 334
3. डि0ग0जौनपुर, पृ0- 245-46

जाना जाता है, विद्यमान है।[1] किन्तु वास्तव में इसमें आठ समाधियाँ हैं, जिसमें शहजादा नासिर खाँ, मलिक बहरूज (जौनपुर व जाफराबाद का प्रथम गर्वनर) जौनपुर का द्वितीय हाकिम अलाउद्दीन शर्की सुल्तानों में मलिक सरवर, सुल्तान मुबारक शाह शर्की, सुल्तान इब्राहिम शाह शर्की, इब्राहिम शाह की बेगम एवं मूहमूद शाहशर्की के मकबरें विद्यमान हैं ।[2]

शहजादा इब्राहिम का मकबरा -
---------------------- जौनपुर के सिपाह मुहल्ले में सैयद अजमल की समाधि के निकट इब्राहिम शर्की के एक अनाम पुत्र का मकबरा स्थित है । यह उसकी इच्छानुसार ही उनके गुरू सैयद सड जहाँ अजमल के निकट है।[3] शहजादा का मकबरा विशाल है म इसके आधार स्तमभों पर ठोस पत्थर के गुम्बद बनाये गये हैं ।

बीबी राजी का मकबरा -

सुल्तान महमूद शाह शर्की की अत्यधिक विदुषी एवं गुणवती पत्नी बीबी राजी का मकबरा जौनपुर में स्थित है ।[4] महमूद

---

1. डि0ग0जौनपुर, पृ0- 245-46
2. वही,
3. पौगसन, पृ0-55-56
4. वही ।

शाह की पक्की समाधि के बाईं ओर उनकी पत्नी बीबी राजी की समाधि है । जौनपुर के अन्य बहुत से स्थानों में, जो कभी जौनपुर की सुन्दरता को और भी समृद्ध बनाते थे तथा उनकी सजावट में सहायक होते थे, किन्तु अब मिट गये हैं, उनमें सबसे उल्लेखनीय बीबी राजी का मकबरा है ।[1]

मुहम्मद शाह शर्की का मकबरा -

शर्की सुल्तानों में एकमात्र मुहम्मद शाह का मकबरा जौनपुर से बाहर डलमऊ में निर्मित किया गया । सुल्तान मुहम्मद शाह शर्की की अपने भाई हुसेन शाह शर्की के विरुद्ध युद्ध में हत्या कर दी गयी और उसे यहीं दफनाया गया ।[2] सुल्तान मुहम्मद शाह का मकबरा रायबरेली जिले के डलमऊ शहर में, मच्छरहट्टा मुहल्लें में स्थित है ।[3]

हुसेन शाह शर्की तथा उसके वंशजों के मकबरे -

अटाला मस्जिद के उत्तर की ओर शर्की शासकों के

---

1. डि०ग०जौनपुर, पृ0- 246
2. वही, पृ0- 245, तथा मनुमेंटल एंटिक्विटीज, जिल्द-2, पृ0-320
3. डि०ग०जौनपुर ,पृ0- 245

समाधि स्थल में, जिसे " खानगृह " भी कहते हैं, बहुत से मकबरे बने हुए हैं। सम्भवत: ये मकबरे अन्तिम शर्की शासक सुल्तान हुसेन शाह शर्की, उसके बंशज एवं उसकी पत्नी के हैं।[1]

यद्यपि सुल्तान हुसेन शाह शर्की की मृत्यु बंगाल में हुयी थी परन्तु उसके पुत्र सुल्तान जलालुद्दीन ने अपने पिता की इच्छानुसार उनके शव को जौनपुर भेज दिया तथा उसे जामी मस्जिद के उत्तर की ओर खनगाह के आंगन में दफनाया गया।[2]

जलालुद्दीन की मृत्यु के उसका पुत्र महमूद शाह गद्दी पर बैठा। महमूद शाह ने भी अपनी पिता की इच्छानुसार उसके शव को जौनपुर भेजकर पितामह हुसेन शाह शर्की की कब्र के निकट दफनाया।[3]

सूल्तान महमूद 1540 ई0 में शेरशाह सूरी के साथ एक युद्ध में कन्नौज में मारा गया। मृत्यु के पूर्व उसने शेरशाह से यह इच्छा प्रकट की

- -

1. डि0गा0जौनपुर, पृ0- 245

2. फौगसन, पृ0- 19

3. डा0ओपाली चटर्जी, पृ0 239

थी कि उसके शव को जौनपुर भेज दिया जाय । शेरशाह ने उसे जौनपुर में शर्कियों के पारिवारिक समाधि क्षेत्र में पूर्वजों के निकट दफनाया । महमूद को जलालुद्दीन की समाधि के बायीं ओर दफनाया गया ।[1]

इस प्रकार इस खानकाह में हुसेन शाह शर्की, उसके पुत्र जलालुद्दीन के पुत्र महमूद के पुत्र उमर खाँ, उमर खाँ के पुत्र हसन खाँ एवं हुसेन खाँ के पुत्र कुतुब खाँ, कुतुब खाँ के पुत्र हसन खाँ, हसन खाँ के दोनो पुत्र मुहम्मद एवं महमूद को दफनाया गया है ।[2]

इसी प्रकार शर्की राजवंश के परवर्ती शासकों को भी जौनपुर में उनके पारिवारिक समाधि, स्थल में ही दफनाया गया । चाहे उनकी मृत्यु जौनपुर से बाहर कहीं भी हुयी हो । इसे हम शर्की सुल्तानों की एक पारिवारिक विशेषता कह सकते हैं । ये समाधि स्थल जौनपुर में अब भी जीर्ण-शीर्ण दशा में अवस्थित है ।

- -

1· डि०ग०जौनपुर, पृ० - 245, तथा फौगलन ,पृ०- 20

2· वही, पृ०- 245

इन समाधि स्थलों पर पहले स्तम्भों के सहारे गुम्बद बने हुए थे। परन्तु सिकन्दर लोदी ने इन्हें नष्ट कर दिया । इसी सुल्तान ने जामी मस्जिद के निकट स्थित राजभवन को भी धराशायी कर दिया था, इसका उमर खाँ ने अंशत: पुर्ननिर्माण कराया था। इसे 190 फीट x 140 फीट के एक पत्थर द्वारा आच्छादित कर चारों कोनों की गोल गुम्बद नुमा छत द्वारा घेर दिया था । इसका एक भाग अब भी शेषहै ।[1]

जौनपुर के अन्य मकबरें -

जौनपुर में ऐसे भी बहुत से मकबरों का अस्तित्व मिलता है जिनका सम्बन्ध जौनपुर के शर्की राजवंश के शासकों की आध्यात्मिक एवं साहित्यिक अभिरुचियों से था । जो भी महत्वपूर्ण सूफी सन्त तथा विद्वान शर्की शासकों के सम्पर्क में आये उनके मकबरे भी जौनपुर में एवं उसके आसपास विद्यमान है । इन मकबरों में निम्नलिखित सूफी सन्तों के मकबरे उल्लेखनीय है -

- -

1· डि०गा०जौनपुर, पृ०- 246

सुलेमान शाह का मकबरा - :

हजरत सुलेमान शाह, सुल्तान इब्राहिम के समय के सर्वाधिक उल्लेखनीय सन्तों में से थे । इनकी मृत्यु 1462 ई0 में हुयी तथा यह जौनपुर में ही दफनाये गये ।[1]

यह जौनपुर के जनपदीय कारागार के भीतर पश्चिम ओर स्थित है तथा सुलेमान शाह की दरगाह के नाम से प्रसिद्ध है । महमूद शाह की पत्नी बीबी राजी ने अपने व्यक्तिगत निरीक्षण में इस दरगाह का निर्माण कराया था । यह 65 वर्ग फीट के वर्गाकार चबूतरे पर ईंटों से निर्मित है जिस पर सीमेण्ट की तह चढ़ी हुई है ।[2]

मकबरे का भवन वर्गाकार है जो उपर एक गुम्बद के द्वारा आच्छादित है । यह इस मकबरे की सबसे प्रमुख विशेषता है ।

मखदूम ख्वाजा शेख अबुल फजल सोनवर्सी का मकबरा -

यह सुल्तान इब्राहिम शाह शर्की के समय के प्रसिद्ध सन्त थे एवं

---

1. ए० फ्यूहरर, पृ0- 62, तथा शेफाली चटर्जी, पृ0-
2. वही, पृ0=61-62 तथा डि0ग0जौनपुर , पृ0- 248

मलिकुल उलेमा काजी शिहाबुद्दीन के समकालीन थे । इनका देहान्त जौनपुर में हुआ था तथा यही दफनाये गये थे । इब्राहिम शाह ने मुहल्ला सिपाह में इनका मकबरा बनवाया जो आज भी जौनपुर में विद्यमान है ।[1]

काजी शिहाबुद्दीन एवं उनकी पत्नी का मकबरा -

काजी शिहाबुद्दीन दौलताबादी जौनपुर के सर्वाधिक प्रसिद्ध सूफी सन्त के रूप में जाने जाते हैं । काजी एवं उनकी पत्नी का मकबरा जौनपुर में मुहल्ला रिजवी खाँ में अटाला मसजिद के दक्षिणी घेरे में स्थित है । यह ईंटों के 16।। फीट वर्गाकार एवं 3।। फीट ऊँची दीवार के द्वारा , जो दोनों मकबरों को मिलाती है, घिरा हुआ है । इसमें एक काजी शिहाबुद्दीन का स्वयं एवं दूसरा उनकी पत्नी का है ।[2]

सद्र जहाँ अजमल का मकबरा -

ख्वाजा सैयद सद्र जहाँ अजमल इब्राहिम के समकालीन सूफी विद्वान थे ।[3] इनकी मृत्यु के बाद इब्राहिम शाह शर्की ने मुहल्ला सिपाह

---

1. डा० शेफाली चटर्जी, पृ0- 240
2. डि0ग0जौनपुर, पृ0- 241
3. फ्यूगसन, पृ0-55-56

में गोमती नदी के तट पर इनके मकबरे का शानदार ढंग से निर्माण किया जो अब भी झंझरी मस्जिद के नाम से प्रसिद्ध है ।[1]

शेख जलाल उल हक काजी खाँ नासेही जफराबादी सुल्तान इब्राहिम के शासन काल के महत्त्वपूर्ण सन्त थे । इनकी मृत्यु 1537 ई0 में हुयी। इनका मकबरा जफराबाद के प्राचीन किले " कोट असानी " के उत्तर पश्चिमी कोने में स्थित है ।[2]

ख्वाजा ईसा ताज चिश्ती का मकबरा -

मखदूम ख्वाजा ईसा ताज चिश्ती भी इब्राहिम शाह शर्की के शासन काल के महान सन्त थे ।[3] इनका मकबरा जामी मस्जिद से संलग्न है जो उनके अनुयायियों के लिए मसजिद के रूप में महान धार्मिकस्थान के रूप में विद्यमान है ।

1· फ्यूहरर, पृ0- 41 तथा डि0 ग0जौनपुर पृ0- 242

2· डा0 शेफाली, चटर्जी, पृ0- 242

3· फौनसन , पृ0- 50

शर्की कालीन स्थापत्य कला की विशेषताएं -

---------------------------------- इन विश्लेषणों के आधार पर कहा जा सकता है । कि शर्की कालीन स्थापत्य कला की तीन मुख्य में दिये हुए मुख्य प्रवेश द्वार, दीवारों की सजावट तथा जनाना गैलरियाँ एवं कक्ष ।[1] किन्तु मसजिदों को विशिष्ट बनाने वाला प्रोपाइलन ही है । इस प्रोपाइलन के खड़े होने से मस्जिद का गुम्बद दिखाई नहीं देता है । मुस्लिम स्थापत्य कला में कुछ ऐसे तत्व आ गये थे कि जो इस्लामी स्थापत्य कला के तत्वों से बिल्कुल भिन्न थे । शर्की भवनों में ऐसे गैर इस्लामी तत्वों का बाहुल्य है ।[2]

मिस्र के प्राचीन मन्दिरों के समान चौकोर उपर उठे हुए विशाल मेहराब जो मसजिदों के वास्तविक गुम्बदों को ढकने से शेष रही तो पूरे भवन में विशाल मेहराबों के कारण एक प्रकार की एकता एवं सुडौलपन भी आ गया ।[3]

- -

1. पर्सी ब्राउन, पृ0- 42-44

2. पर्सी ब्राऊन, पृ0- 42-44

3. डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0- 186

शर्की भवन निर्माण शैली में तुगलक कालीन भवनों की भव्यता एवं प्रभाव क्षमता पूर्णरूप से है, किन्तु साथ ही साथ दिल्ली के भवनों की सी सरलता एवं शान जौनपुरी मस्जिदों में नहीं है ।[1] यह अपेक्षाकृत अधिक सजावट एवं आकृष्ट करने वाली है । इसका मुख्य कारण हिन्दू एवं इस्लामी भवन निर्माण शैली का सुन्दर सम्मिश्रण है, जिसका नमूना जौनपुरी मस्जिदें हैं । यह कहना उचित न होगा कि जौनपुरी मसजिदों के निकट बने कक्ष तथा छोटे चौकोर स्तम्भ पहले मन्दिरों का भाग थे, जिन्हें कुशलता से मस्जिदों में सम्मिलित कर लिया गया ।[2]

जौनपुर की भवन निर्माण शैली में हिन्दू एवं मुस्लिम शैलियों के सम्मिश्रण का बड़ा कारण यह है कि शर्की शासकों में अपने भवनों के निर्माण में उन हिन्दू कारीगरों को नियुक्त किया जो हिन्दू धर्म परिवर्तन कर नये मुसलमान बने थे । यह वे व्यक्ति थे जो अपनी पुरानी कला एवं परम्पराओं को

- -

1. फर्गुसन, पूर्वोक्त, पृ0= 227

2. वही, पृ0-223 तथा इंडियन एन्टिक्वेरी, जिल्द-4, पृ0-302-5 तथा पर्सी ब्राउन पृ0-44

नहीं भूले थे ।[1] जौनपुर मस्जिदों के सौन्दर्य एवं सजावट की शैली हिन्दुओं के प्रकार की है । कमल के फूल को भवनों के अनेक स्थानों पर देखा जा सकता है । मस्जिदों में " किब्ला " के स्थान पर भी हिन्दुओं का चिन्ह बना है । यहाँ घंटियों के बीच " अल्लाह " खुदा हुआ है । पर्सी ब्राउन जामा मस्जिद की वास्तु शैली को " कै   कहते हैं ।[2]

शर्की कालीन मस्जिदें अपनी मूक भाषा में बीते वैभव एवं गौरव तथा ठंडे एवं ग्रीष्म युग की सैकड़ों कथायें कह डालती हैं । शर्की वंश एक शताब्दी से कम ही समय तक बना रहा, किन्तु इतने अल्प समय में भी स्थापत्य कला के क्षेत्र अन्य कोई वंश उनसे आगे नहीं बढ़ सका ।[3]

चित्र कला -

मध्य युग में चित्रकला के सम्बन्ध में बहुत कम जानकारी मिलती है । हदीस के अनुसार समस्त मानव आकृतियों का चित्र बनाना निषिद्ध माना है

- -

1. पर्सी ब्राउन, पृ0- 44 तथा पर्सी ब्राउन, पृ0- 44

2. वही, पूर्वोक्त, पृ0- 45

3. फर्गुसन, पृ0- 188

एवं इस प्रकार इस कला के विकास में रोक लग गयी ।[1]

क्योंकि यह विश्वास किया जाता है कि एक चित्रकार जो प्राणधारी सजीव वस्तुओं का चित्रण करता है, वह उस वस्तु में प्राण संचार करता है । अत: इस प्रकार वह ईश्वर का प्रतिद्वन्दी है जो जीव में जीवन दान करने का एक मात्र अधिकारी है ।[2] अत: रूढ़िवादी मुस्लिम शासकों ने सजीव वस्तुओं का चित्र बनाना इस्लाम के विरुद्ध समझा है ।

जौनपुर के शर्की सुल्तानों में हुसेन शाह शर्की को छोड़कर पूर्ववर्ती किसी भी शर्की शासक ने चित्रकला के सम्बन्ध में कोई रुचि प्रकट नहीं की ।

अन्तिम शर्की शासक हुसेन शाह शर्की ही एक मात्र ऐसे शर्की शासक थे जो एक सुयोग्य चित्रकार के रूप में माने जाते हैं । एक जैन कल्प सूत्र इस तथ्य को प्रमाणित करता है तथा इस प्रतिभासम्पन्न शासक द्वारा ही चित्रकला को संरक्षण देने की पुष्टि करता है।[3] यह पाण्डुलिपि इस बात की सूचक है कि

- -

1. इस्लामिक कल्चर, जिल्द, 24 (हैदराबाद, 1950) पृ0 - 218-25

2. मेडिवल इण्डियन कल्चर, पृ0- 233

3. मोती चन्द्र, जैन मिनिएचर पेंटिंग्स फ्राम वेस्टर्न इण्डिया (अहमदाबाद 1949, पृ0- 38

इसका मूल अंश विक्रम सं0 1522 (1465 ई0) में यवनपुर (जौनपुर) के (हुसेन शाह शर्की) के शासन काल में हर्षिनी श्राविका की आज्ञा से लिखा गया था।

इस काल में सूक्ष्म चित्रकारी की परम्परा दिल्ली, मालवा, गुजरात एवं दक्खन में स्थापित हो चुकी थी, परन्तु जौनपुर में हुसेन शाह शर्की का राज्य काल चित्रकला की दृष्टि से महत्वपूर्ण था।

संगीत कला -

यद्यपि संगीत इस्लाम में वर्जित है, परन्तु फिर भी मानव प्रकृति इसे इस्लाम के कठोर नियम के विरुद्ध भी स्वीकार करती है। सम्पूर्ण मध्यकाल में मुस्लिम शासकों एवं अमीर वर्ग के संगीत को सदैव राजकीय संरक्षण प्रदान किया है। ईरान के साथ सांस्कृतिक सम्बन्ध होने से एवं सूफी वाद का भारत में उदय एवं इसके अल्प कालीन स्थायित्व ने मुस्लिम शासकों को संगीत एवं नृत्य कला का प्रेमी बना दिया।[1]

---

1. तवाइलाइट, पृ0- 242

तैमूर के आक्रमण से उत्पन्न अराजकता पूर्ण परिस्थितियों के कारण दिल्ली सल्तनत के विघटन के पश्चात संगीत कला (गायन और वाद्य संगीत) ने प्रान्तीय राजदरबारों जैसे - ग्वालियर, जौनपुर एवं गुजरात में राजकीय संरक्षण प्राप्त किया, जो सम्पूर्ण 15वीं शताब्दी तक संगीत कला के अत्यन्त केन्द्रों के रूप में विद्यमान रहे ।[1]

प्राय: सभी प्रान्तीय राजवंशों के सुल्तान व्यक्तिगत रूप से संगीत प्रेमी थी । संगीत को राजकीय संरक्षण प्रदान करने के लिए इन प्रान्तीय राजवंशों में जौनपुर का शर्की राजवंश गौरव पूर्ण अतीत से युक्त है ।[2]

संगीत के क्षेत्र में जौनपुर के सुल्तानों में सुल्तान हुसेन शाह शर्की का नाम अत्यन्त आदर के साथ लिया जाता है । दिल्ली के लोदी सुल्तानों के साथ अनवरत संघर्षरत रहते हुए भी इस शासक ने सांस्कृतिक क्षेत्र की अवहेलना नहीं की ।

हुसेन शाह शर्की ने इस क्षेत्र में विभिन्न रागों तथा गायन शैलियों

- -

1· टवाइलाइट, पृ0- 242

2· डा0 शेफाली चटर्जी , पृ0- 222

का अन्वेषण किया । जिस कारण भारतीय संगीत कला के इतिहास में असामान्य परिवर्तन आया । इन्होंने संगीत के संसार में एक नवीन क्रान्ति को जन्म दिया । यही कारण है कि भारत के शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में हुसेन शाह शर्की का एक महत्वपूर्ण स्थान है ।[1] उन्होंने संगीत के नियम और सिद्धान्त की विशिष्ट जानकारी प्राप्त की थी । यही कारण है कि लोगों ने उनकी योग्यता से प्रभावित होकर उन्हें नायक[2] की उपाधि दी थी ।[3]

सुल्तान हुसेन शाह शर्की ने गायन पद्धति को रोचक तथा प्रभावशाली बनाने के लिए एक नवीन शैली का अविष्कार किया जिसे "ख्याल" कहते हैं।[4]

सुल्तान हुसेन शाह शर्की के अविष्कार " ख्याल " के पूर्व भारत की सम्पूर्ण गायन पद्धति का आधार ध्रुपद गायन था । परन्तु " ख्याल " की उन्नति के पश्चात ध्रुपद का रंग फीका पड़ गया ।[5] "ख्याल " के बोल बहुत

- -

1· डा0 शेफालीचटर्जी, पृ0- 222

2· संगीत शास्त्र, दर्पण , द्वितीय भाग, पृ0- 33

3· डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0- 222

4· सोसायटी एण्ड कल्चर इन मेडिवल इण्डिया, पृ0-119 तथा टवाइलाइट, पृ0-242

5· डा0 शेफाली, पृ0- 223

सीमित होते हैं । "ख्याल " में प्रेम - वियोग तथा मिलन इत्यादि का वर्णन किया जाता है । सुल्तान हुसेन शाह शर्की ने 12 सामों का अविष्कार किया । 1· गौर साम, 2· मल्हार साम, 3· गोपाल साम, 4· गम्भीर साम, 5· हुहु साम, 7· राम साम, 8· मेघ साम, 9· बसन्त साम, 10· बरारी साम 11· किबराई साम, 12· गोड़ साम ।[1]

14 ताड़ियों में 4 तोडी हुसेन शाह शर्की का ही अविष्कार है - 1· असावरी तोडी जो हुसेन तथा जौनपुरी आसवरी के नाम से प्रसिद्ध थी । 2· रामा तोडी, 3· रसूली तोडी, तथा 4· बहमली तोडी । इन चारों तोडियों के अविष्कारक सुल्तान हुसेन शाह शर्की " नायक " कव्वाल है ।[2] इसके अतिरिक्त ये बहुत से रागों के भी अविष्कारक हैं । हजरत अमीर खुसरों के बाद कव्वाली का ऐसा "नायक " नहीं पैदा हुआ ।[3]

- -

1· डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0- 223

2· वही

3· एकबाल अहमद- शर्की राज्य जौनपुर का इतिहास, पृ0-605 से उद्धृत । सैयद सबाउद्दीन अब्दुल रहमान, हिन्दुस्तान के मुसलमानों के तमद्दुनी जल्वे, पृ0-53

इसके अतिरिक्त हुसेन शाह शर्की ने जौनुपर तोडो, सिन्धु भैरवी , सिन्दूरा, इत्यादि का अविष्कार किया । हुसेनी तोडो, हुसेनी कान्हारा भी हुसेन शाह शर्की की ही देन है।[1]

ख्याल के अतिरिक्त गायन की एक और शैली " चौत कला " की खोज भी हुसेन शाह शर्की ने ही किया था । इसमें अस्थाइ अन्तरा, संचारी और आभोग चार भाग होते हैं तथा 18 तालें एक के बाद दूसरी प्रयोग की जाती है ।[2]

इसके अतिरिक्त जौनपुर की संगीत कला में सूफी रहस्यवादियों ने भी काफी योगदान दिया। विशेष रूप से समा और कव्वाली के क्षेत्र में सुफियों का योगदान प्रशंसनीय है। क्योंकि उनका विश्वास था कि समा और कव्वाली गायन द्वारा आध्यात्मिक परमानन्द की प्राप्ति होती है। ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती का कहना था कि संगीत आत्मा का भोजन है ।[3]

1· डा० शेफाली चटर्जी, पृ0- 223

2· संगीत शास्त्र दर्पण, भाग-2, पृ0- 184

3· सूफीमत, साधना और साहित्य , पृ0- 446

समा गायन के क्षेत्र में मुल्तान के शेख बहाउद्दीन जकारिया का नाम उल्लेखनीय है । क्योंकि उन्हें कुछ मुल्तानी राग जैसे - पुरिया, धनाश्री एवं राग मुल्तानी के अविष्कार का श्रेय प्राप्त है ।[1]

जफराबाद में बस गये प्रारम्भिक सुहरावर्दी रहस्यवादियों में मखदूम असद उद्दीन आफताब ए-हिन्द एवं सद उद्दीन चिराग-ए-हिन्द दोनों ही शेख बहा-उद्दीन - जकरिया मुल्तानी के पौत्र शेख रुकनुद्दीन मुल्तानी के शिष्य एवं अनुयायी थे ।[2]

इस प्रकार वे प्रारम्भिक रहस्यवादी समा गायन की परम्परा को अपने साथ जौनपुर ले आये और इसकी नीव दृढ़ता पूर्वक जमा दी ।

चिश्ती वर्ग के महान सन्त, दिल्ली के शेख निजामुद्दीन औलिया समा गयान के विशिष्ट प्रेमी थे । उनके प्रमुख शिष्यों में अमीर खुसरो ने इस

- -

1. डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0 -224

2. तजल्लिएन्नूर, जिल्द -1, पृ0- 8, 11-12 .

परम्परा को और भी समृद्ध बनाया ।

चिश्ती शाखा के संगीत प्रेमी सूफी सन्तों में, जो जौनपुर के शर्की राज्य में ही फूल फले, सैयद असरफ समनानी, हुसामुद्दीन, मानिक पुरी, शेख वरी हक्कानी, शेख बहाउद्दीन चिश्ती, शेख आधन चिश्ती के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है ।[1]

भक्ति आन्दोलन के समस्त महान सन्तों में नामदेव, रैदास, गुरुनानक कबीर, ने शर्की शासकों के संरक्षण में ही कविताओं की रचना की और उन्हें गीत के रूप में गाया गया । महाकवि विद्यापति की पदावली संगीत के क्षेत्र में महत्वपूर्ण है जिसे गाते हुए कोई भी व्यक्ति झूम उठता है ।[2]

1· तजल्लिये नूर, जिल्द-1, पृ0- 24, 27,29 46

2· डा0 शेफाली चटर्जी, पृ0- 224

परिशिष्ट - 1

इस काल में कृषि एक समुन्नत व्यवसाय के रूप में स्थापित था तथा कृषक विभिन्न प्रकार की रबी एवं खरीफ की फसलों द्वारा अपनी आर्थिक व्यवस्था सुनिश्चित करते थे।

शर्की कालीन जौनपुर के क्षेत्र में रबी की प्रमुख फसलों में गेहूं, काबुली चना, देशी चना, जौ, हरा जौ, (बोयद जो बाली में नहीं है।), मसूर, मुअसफर का बीज, पोस्ता, तरकारी अलसी, सरसों, मटर, गाजर, प्याज मेंथी विलायती, खरबूजा, देशी खरबूजा, जीरा, काला जीरा, कुरधान अजवाइन इत्यादि थी।[1]

खरीफ की प्रमुख फसलों में पौंडा, साधारण गन्ना, काला धान, साधारण धान, आलू कपास, मोंठ, अरजन, नील, मेंहदी, सन, तरकारी, पान, सिंघाड़ा, जुआर, कोरी, विलायती, खरबूजा, तिल, मूंग, हल्दी, सूली, धान, मास, गाल, तुरिया, तरबूज, लोबिया, गाजर, अरहर, लहदरा, कोदरव, मडवा, सांवा और कुल्त थी।[2]

---

1. आइने अकबरी, वायल्म -3, 74

2. वही, 76

xxxxxxxxxx xx xxxxx xxxxx

सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची

मूल -स्रोत

1. गुलशन-ए-इब्राहिमी — मुहम्मद कासिम हिन्दू शाह फरिश्ता
2. खुलासत-उत-तवारीख — सुजन राय भण्डारी
3. मुन्तखब-उत-तवारीख — अब्दुल कादिर बदायूँनी
4. मशाहिर-ए-जौनपुर — सैय्यद नूरुद्दीन जैदी
5. रौजत-उत-ताहिरिन — ताहिरुद्दीन मुहम्मद
6. सुबहे सादिक — मुहम्मद सादिक बिन मुहम्मद सोलह अल इस्फहानी
7. तारीखे दाउदी — अब्दुल्ला
8. तारीखे खाने जहाँ या मखजन-ए-अफगाना — ख्वाजा न्यामत तुल्ला
9. जौनपुर नामा — मौलवी खैर उद्दीन
10. सलातीने जौनपुर — मुहम्मद गौस अली
11. खजाइन-उल-फूतूह — अमीर खुसरो
12. एजाज-ए-खुसरवी — अमीर खुसरो

13• फुतुहात-ए-फिरोजशाही - फिरोज शाह तुगलक

14• दि रेहला आफ इब्नबतूता - इब्नबतूता

15• फुतुह -उस-सलातीन - ख्वाजा अब्दुल्ला मलिक इसामी

16• तबकात-ए- नासिरी - मिनहाज-उस-सिराज जुरजानी

17• तारीखे - फिरोजशाही - शम्स-ए-सिराज अफीफ

18• तारीखे फिरोजशाही - जियाउद्दीन बरनी

19• आइने अकबरी - अबुल फजल अल्लामी

20• फतवाये जहाँदारी - जियाउद्दीन बरनी

21• मिराते सिकन्दरी - शेख सिकन्दर बिन मुहम्मद

22• मिराते - अहमदी - मिर्जा मुहम्मद हसन बिन मुहम्मद अली

23• तारीखे मुबारक शाही - यहिया बिन अहमद

24• सलातीने अफगाना - अहमद यादगार

25• तबकाते अकबरी - निजामुद्दीन अहमद

26• तजल्लिये नूर - मौलवी नुरूद्दीन जैदी

27• मृगावती - कुतुबन

28• मधुमालती - मंझन

अन्य - स्रोत

तारीखे - फरिश्ता का अनुवाद

1. हिस्ट्री आफ दि राइस आफ दि मुहम्मदन पावर - जे० ब्रिग्स
2. तारीखे मुबारक शाही का अनुवाद - के०के०बासु
3. आइने अकबरी का अनुवाद-जिल्द-1 - एच० ब्लोचमैन
4. तबकाते अकबरी का अनुवाद - बी०डे०
5. आइने अकबरी का अनुवाद, जिल्द-2 - एच०एस०जैरेट
6. तारीखे मुहम्मदी का अनुवाद - मुहम्मद ज़की
7. मीरात-ए-सिकन्दरी का अनुवाद - एस०सी०मित्रा एवं एम०एल०रहमान
8. खैरुद्दीन का अनुवाद, "हिस्ट्री आफ जौनपुर" - आर०डब्लू० पोगिसन
9. मुन्तखब-उत-तवारीख का अनुवाद - जार्ज एस०ए०रैंकिंग
10. तबकाते नासिरी का अनुवाद - एच०टी०रैवर्टी
11. मखजाने अफगाना का अनुवाद, - जान डाउसन

12· भारत वर्ष का इतिहास — जान डाउसन

13· भारत का इतिहास — इलियट एवं डाउसन

14· हिस्ट्री आफ दि फिरोजशाह तुगलक — जे०एम०बनर्जी

15· इण्डियन आर्किटेक्चर — पर्सी ब्राउन

16· दि क्वायंस आफ इण्डिया — सी०जे०ब्राउन

17· हिस्ट्री आफ दि अफगान्स — जे०पी०फेरियर

18· दि शर्की आर्किटेक्चर आफ जौनपुर — ए०फ्यूहरर एवं ई०डब्लू०स्मिथ

19· हिस्ट्री आफ दि लोदी, सुल्तानस आफ देहली एण्ड आगरा — अब्दुल हलीम

20· तुगलक डाइनेस्टी — आगा मेहदी हुसेन

21· इण्डियन आर्किटेक्चर — ई०वी०हेवेल

22· फिरोज तुगलक — आर०सी०जौहरी

23· द्वाइलाइट आफ दि सल्तनत — के०एस०काल

24· दि फर्स्ट अफगान एम्पायर इन इण्डिया — ए०बी०पाण्डे

25· किंग्स आफ दि जौनपुर डाइनेस्टी देयर क्वायनेज — जर्नल आफ बिहार-उडीसा

26• जौनपुर ऐज डिस्क्राइब्ड इन विद्यापतिज – इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस
कीर्तिलता – प्रोसीडिंग्स–1954

27• फाउन्डेशन आफ मुस्लिम रूल इन – ले०प्रो०राधाकृष्ण चौधरी ए०बी०एम०हबीबुल्ला

28• लाइफ एण्ड कंडीशन्स आफ दि पिपुल – के०एम०अशरफ
आफ हिन्दुस्तान

29• मुहम्मदन थ्योरीज आफ फाइनेन्स – डा० एन०पी०अगनाइड्स

30• दि हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान – डा०अलेक्जेंडर

31• दि गर्वनमेण्ट आफ दि सल्तनत – यू०एन०डे०

32• हिस्ट्री आफ इण्डिया एण्ड ईस्टर्न – जे०फर्गुसन
आर्किटेक्चर

33• दि केम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया – वूल्जले हेग

34• स्टडीज इन इंडो मुस्लिम हिस्ट्री – एस०एच०होदी वाला

35• कम्प्रेहेंसिव हिस्ट्री आफ इण्डिया – हबीब एवं निजामी

भाग – 5

36• एजूकेशन इन मुस्लिम इण्डिया – एस०एम०जाफर

37• मेडिवल इंण्डिया अंडर मुहम्मडन रूल – स्टेन ले लेनपूल

38• प्रोमोशन आफ लर्निंग इन इण्डिया – एन०एन०ला

39• ए हिस्ट्री आफ दि करौना टर्क्स इन इण्डिया — ईश्वरी प्रसाद

40• सोसायटी एण्ड कल्चर इन मेडिवल इण्डिया — ए० रशीद

41• मेडिवल इण्डियन कल्चर — ए०एल० श्रीवास्तव

42• दि हिस्ट्री आफ बंगाल — जदुनाथ सरकार

43• एम०आस्पेक्टस आफ मुस्लिम एडमिस्ट्रेशन— आर०पी०त्रिपाठी

44• दि क्रानिकल्स आफ दि पठान किंग्स आफ दिल्ली। — थामस एडवर्ड

45• कैटलाग आफ दि क्वायन्स इन दि इंडियन म्यूजियम कलकत्ता — एच०नेल्सन राइट

46• गीत विद्यापति — महेन्द्र नाथ दुबे

47• कबीर ग्रन्थावली — माता प्रसाद गुप्ता

48• मध्य युगीन भारतीय संस्कृति — यूसूफ हुसैन

49• मध्यकालीन भारत — स्टैनले लेनपूल

50• खल्जी कालीन भारत — सैय्यद अतहर अब्बास रिजवी

51• तुगलक कालीन भारत — सैय्यद अतहर अब्बास रिजवी

52• उत्तर तैमूर कालीन भारत — सैय्यद अतहर अब्बास रिजवी

53• विद्यापति की कीर्तिलता — राम बाबू सक्सेना

54• सूफी मत साधना और साहित्य — राम पूजन तिवारी

55• जौनपुर का इतिहास — त्रिपुरारि भास्कर

56• हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास — परशुराम चतुर्वेदी

57• महाकवि विद्यापति -स्थापना और विवेचना — डा० कृष्ण नन्दन पीयूष

58• सल्तनत कालीन सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास। — राधेश्याम

59• मध्यकालीन उत्तर भारतीय सामाजिक-जीवन के कुछ पक्ष — के०पी०साहू

जर्नल

1• जर्नल आफ दि यू०पी० हिस्टोरिकल सोसायटी, लखनऊ

2• जर्नल आफ दि एशियाटिक सोसायटी आफ बंगाल, कलकत्ता

3• प्रोसीडिंग्स आफ इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस

गजेटियर -

1. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर आफ दि यूनाइटेड प्रोविन्स आफ आगरा एण्ड अवध

2. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर आफ उत्तर प्रदेश

3. इम्पीरियल गजेटियर आफ इण्डिया

शोध - ग्रन्थ

1. शर्की सुल्तानों का इतिहास - डा० शेफाली चटर्जी

2. दि सोसायटी आफ नार्थ इण्डिया इन दि सिक्सटीन सेन्चुरी एज डिपेक्ट इन कन्टेम्पररी हिन्दी लिटरेचर, डा० - हेरम्ब चतुर्वेदी